दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: *30 अप्रैल, 2024*

मू.वि.या.(वाणि) 509/2018, अंतर्वर्ती आवेदन 17233/2018, 1781/2020, 1782/2020 एवं 2080/2020

स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री अरुण कठपालिया सह सुश्री रवीना राय, सुश्री अपेक्षा धनविजय और श्री आदित्य, अधिवक्तागण।

बनाम

जे. एस. सी. क्रियोगेनमैश ..... प्रत्यर्थी

द्वारा: वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री संदीप सेठी, सह श्री जाफर आलम, सुश्री शिवानी खांडेकर, श्री अक्षय भाटिया, सुश्री शेनिजा फरीद और श्री सुमेर सेठ, अधिवक्तागण।

कोरम:
माननीय सुश्री न्यायमूर्ति ज्योति सिंह

निर्णय

न्या. ज्योति सिंह

1. यह याचिका याचिकाकर्ता की ओर से मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (जिसे आगे '1996 अधिनियम' कहा जाएगा) की धारा 34 के तहत दायर की गई है, जिसमें आई.सी.सी. मामला सं. 18801/सी.वाई.के/टी.ओ. में दिनांक 20.07.2018 के मध्यस्थता अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है, जिसके तहत विद्वान मध्यस्थ अधिकरण (जिसे आगे 'अधिकरण' कहा जाएगा) ने प्रत्यर्थी के पक्ष में 957,889.38 अमेरिकी डॉलर की लागत और

12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज सहित 8,492,592.31 अमेरिकी डॉलर की राशि का आदेश दिया है।

2. याचिका में वर्णित तथ्यात्मक मैट्रिक्स यह है कि याचिकाकर्ता एक सार्वजनिक क्षेत्र का कारोबारी है, जिसका स्वामित्व और नियंत्रण केंद्र सरकार के पास है और यह इस्पात निर्माण का व्यवसाय करता है। प्रत्यर्थी रूस के कानूनों के तहत निगमित एक कंपनी है और मुख्य रूप से रूस में एयर सेपरेशन यूनिट ('एएसयू') संयंत्र स्थापित करने का व्यवसाय करता है।

3. 25.11.2006 को याचिकाकर्ता के भिलाई स्टील प्लांट ('बीएसपी') ने तकनीकी विनिर्देश संख्या एमईसी.वीसी22.02.06.यू.000.8001, आर-1 नवंबर, 2006 के अनुसार '650 टीपीडी एएसयू-IV की स्थापना, जिसमें एयर टर्बो कंप्रेसर, नाइट्रोजन टर्बो कंप्रेसर, एलआईएन/एलएआर टैंक के साथ सिविल फाउंडेशन (पैकेज-I) शामिल है' के लिए बोलियों के लिए आमंत्रण जारी किया, जिसे विभाज्य टर्नकी आधार पर निष्पादित किया जाना था। कीमत के अलावा, बोलीदाताओं को बिजली की खपत को निर्दिष्ट करना आवश्यक था, जो निविदा के अधिनिर्णय में कारक होगा। निविदा आमंत्रण सूचना ('एनआईटी') में विशेष रूप से प्रावधान किया गया था कि तकनीकी विनिर्देशों ('टीएस') के अनुसार प्रस्ताव आमंत्रित किए गए थे, जिसमें उपकरणों के विनिर्देशों सहित उक्त हेतु पसंदीदा विक्रेताओं की सूची का विवरण शामिल था। एनआईटी के साथ टीएस के प्रासंगिक प्रावधान इस प्रकार हैं:-

> *"03. <u>**निविदाकार के लिए विशेष निर्देश**</u>*
>
> *03.01 सभी उपकरण और घटकों की आपूर्ति इस तकनीकी विनिर्देश के अनुसार ही की जाएगी। विशिष्ट लाभ के साथ खरीदार को दिए गए प्रस्ताव में विचलन, यदि कोई हो, को स्पष्ट रूप से लिखा जाएगा।*

03.02 विनिर्देश और डिजाइन की व्याख्या में किसी भी विरोधाभास और/या कठिनाई के मामले में निविदाकर्ता अपने प्रस्ताव को प्रस्तुत करने से पहले इसे खरीदार के ध्यान में लाएगा।

03.03 निविदाकर्ता विनिर्देश और डिजाइन का अध्ययन करेगा और संयंत्र और उपकरणों की कार्यशीलता के बारे में पूरी तरह से संतुष्ट होगा।

03.04 निविदाकर्ता संयंत्र और उपकरण के लिए कोई वैकल्पिक योजना या संशोधन प्रस्तुत कर सकता है जिसे वह संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक समझे। जब तक कि यह इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश को प्रभावित न करे। हालांकि, ऐसे सभी परिवर्तन और संशोधन के लिए क्रेता से पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना होगा। ऐसे वैकल्पिक प्रस्ताव के लिए मूल्य परिवर्तन, यदि कोई हो, अलग से दर्शाया जाएगा।"

4. एनआईटी शर्तों को ध्यान में रखते हुए, बोलीदाता को निविदा प्रस्तुत करते समय आवश्यक टीएस और उसकी कार्यशीलता के संबंध में खुद को संतुष्ट करना था। यदि टीएस से किसी विचलन की आवश्यकता थी, तो उसे मूल्य प्रस्ताव के साथ प्रस्ताव में ही निर्दिष्ट करना था। याचिकाकर्ता एक पीएसयू होने के नाते केंद्रीय सतर्कता आयोग ('सीवीसी') के दिशा-निर्देशों से बंधा हुआ है, जो संविदा के समापन के बाद, वित्तीय निहितार्थ वाले संविदा की शर्तों में किसी भी छूट, संशोधन या संशोधन की अनुमति नहीं देता है, जब तक कि यह बिल्कुल आवश्यक न हो क्योंकि यह बोलीदाताओं को बोली प्रस्तुत करने के समय समान अवसर से वंचित करता है और इसको ध्यान में रखते हुए, याचिकाकर्ता ने टीएस में खंड 03.01 को शामिल किया, जिसमें प्रावधान किया गया कि निविदाकर्ताओं को प्रस्ताव के साथ ही विचलन, यदि कोई हो, का प्रस्ताव करना आवश्यक था।

5. प्रत्यर्थी ने टीएस के अनुपालन में अपनी बोली प्रस्तुत की और 8 घंटे के अवशोषण और 7 घंटे के पुनर्सक्रियन के साथ एक प्री-प्यूरिफिकेशन यूनिट ('पीपीयू') का ऑफर किया। इसने कोल्ड बॉक्स के लिए सिंक्रोनस मोटर्स, कॉलम और वाल्व के साथ संरचित पैकिंग का भी ऑफर किया। 24-25.02.2007 को निविदा के तकनीकी-वाणिज्यिक

पहलुओं पर चर्चा करने के लिए पक्षकारगण के बीच एक बैठक बुलाई गई थी। बैठक के कार्यवृत्त ('एमओएम') में प्रत्यर्थी की पुष्टि दर्ज की गई कि टीएस के संबंध में कोई विचलन प्रस्तावित नहीं किया गया था और सभी वाणिज्यिक विचलन और शर्तों को वापस लेने और टीएस का सख्ती से पालन करने के लिए इसकी सहमति थी।

6. 19.04.2007 को, प्रस्तावित विचलनों सहित तकनीकी-वाणिज्यिक प्रस्तावों की संवीक्षा के बाद, याचिकाकर्ता ने सभी बोलीदाताओं से अपनी संशोधित मूल्य बोलियां प्रस्तुत करने का अनुरोध किया, जो बोलीदाताओं द्वारा 28.04.2007 को प्रस्तुत की गई। प्रत्यर्थी ने कम कीमत और बिजली खपत का आंकड़ा उद्धृत किया और पुष्टि की मांग करने वाले याचिकाकर्ता के पत्र के जवाब में, प्रत्यर्थी ने दिनांक 01.06.2007 के पत्र के माध्यम से पुनः पुष्टि की कि वह 12350 किलोवाट की बिजली खपत देने में सक्षम था और अपने निकटतम प्रतिस्पर्धी के साथ लगभग 3000 किलोवाट की बिजली खपत का अंतर याचिकाकर्ता को बिजली भुगतान में बचत के कारण, 15 वर्षों के दौरान इकाई में अपने निवेश को वापस पाने में सक्षम करेगा। प्रत्यर्थी मूल्य बोली में एल-1 था और उसके प्रस्ताव और बाद की बातचीत के आधार पर, 31.07.2007 को पक्षकारगण के बीच 700 टीपीडी एएसयू की स्थापना के लिए संविदा समझौता निष्पादित किया गया था, जिसका संविदा मूल्य 26,912,000 अमेरिकी डॉलर और 17,39,48,320 रुपए था।

7. संविदा के अनुच्छेद 5 में संविदा के तहत काम पूरा करने के लिए 24 महीने की अवधि प्रदान की गई थी और इसके परिशिष्ट-2 में समय सारणी शामिल थी। खंड 1.2 के अनुसार, परिशिष्ट-2 के खंड 1.1 में दर्शाई गई समय-सारिणी प्रत्यर्थी पर बाध्यकारी थी और इसलिए, पक्षकारगण को स्पष्ट रूप से समझ में आ गया था कि समय संविदा का तत्व है। परिशिष्ट-3 में भुगतान की शर्तें शामिल की गई थी। संविदा के अनुच्छेद 10 को संविदा की सामान्य शर्तों ('जीसीसी') के खंड 6 के साथ पढ़ा गया, जिसमें नई दिल्ली में अंतर्राष्ट्रीय चैंबर

ऑफ कॉमर्स, 2012 (जिसे आगे 'आईसीसी नियम' कहा जाता है) के मध्यस्थता नियमों के अनुसार मध्यस्थता का प्रावधान था, जहां ठेकेदार एक विदेशी पक्षकार था और संविदा का मूल्य 20 करोड़ रुपए से अधिक था। मेटलर्जिकल एंड इंजीनियरिंग कंसल्टेंट्स (इंडिया) लिमिटेड ('मेकॉन') को संविदा के तहत तकनीकी सलाहकार के रूप में नियुक्त किया गया था, जो उपकरणों के डिजाइन और डेटा शीट को मंजूरी देने के लिए जिम्मेदार था।

8. 02.08.2007 को संविदा के क्रियान्वयन के लिए पक्षकारगण के बीच बैठक हुई और इस तिथि से ही, यानी संविदा पर हस्ताक्षर करने के 2 दिनों के भीतर, प्रत्यर्थी ने संविदा से विभिन्न विचलन का प्रस्ताव करना शुरू कर दिया। प्रत्यर्थी खुद को कुछ वस्तुओं के लिए अनुमोदित विक्रेता बनना चाहता था, लेकिन उसने प्रस्ताव चरण में कभी भी इस विचलन का सुझाव नहीं दिया था और इसलिए, यह स्पष्ट था कि प्रत्यर्थी शुरू से ही अपनी शर्तों के अनुसार संविदा को निष्पादित करने के लिए तैयार नहीं था। पक्षकारगण के बीच दिनांक 29.08.2007 को आयोजित की गई किक-ऑफ मीटिंग में, यह सहमति हुई कि बेसिक इंजीनियरिंग ड्रॉइंग ('बीईडी') को 15.12.2007 तक उत्तरोत्तर प्रस्तुत किया जाएगा और 29.12.2007 तक उनका अनुमोदन पूरा हो जाएगा। प्रत्यर्थी ने सितंबर, 2007 तक बी.ई.डी. का हिस्सा रहे डिजाइन, नामपट्टिका और नंबरिंग प्रणाली की सूची प्रस्तुत करने पर सहमति व्यक्त की। 01.10.2007 को लिखे अपने पत्र में याचिकाकर्ता ने 2 महीने बीत जाने के बावजूद परियोजना में धीमी प्रगति और डिजाइन की सूची उपलब्ध न कराए जाने पर चिंता व्यक्त की। अंततः, प्रत्यर्थी द्वारा 17.10.2007 को डिजाइन, नामपट्टिका और नंबरिंग प्रणाली की सूची प्रस्तुत की गई, जैसा कि 10.10.2007 से 17.10.2007 के बीच आयोजित बैठकों के कार्यवृत्त में दर्ज है। इसके बाद, डिजाइन में कुछ कमियों के संबंध में पक्षकारगण के बीच पत्राचार हुआ। संशोधित नामपट्टिका और नंबरिंग प्रणाली 23.11.2007 को अनुमोदन के लिए मेकॉन को प्रदान की गई, जिस पर मेकॉन द्वारा 28.11.2007 को टिप्पणियाँ प्रस्तुत की गईं। इसके बाद प्रत्यर्थी ने 04.12.2007 को कंप्रेसर के लिए डेटा शीट प्रस्तुत की।

9. याचिकाकर्ता का कहना है कि प्रत्यर्थी को कार्य की धीमी प्रगति की ओर इशारा करते हुए कई पत्र भेजे गए थे, जिसमें दिनांक 13.12.2007 का ब्योरेवार पत्र भी शामिल था। याचिकाकर्ता ने सुझाव दिया कि 22.12.2007 को होने वाली बैठक से पहले 15.12.2007 तक सभी डिजाइन प्रस्तुत किए जाएं। हालांकि, अग्रिम रूप से डिजाइन प्रस्तुत करने के बजाय, प्रत्यर्थी ने दिनांक 14.12.2007 के पत्र के माध्यम से इस बात पर जोर दिया कि डिजाइन केवल 17.12.2007 से 22.12.2007 तक की उसकी यात्रा के दौरान ही प्रस्तुत किए जाएंगे। अंततः, प्रत्यर्थी ने डिजाइन को क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने के बजाय, 17.12.2007 को अनुमोदन के लिए प्रस्तुत किया। प्रत्यर्थी ने दिनांक 08.12.2007 के पत्र के माध्यम से प्रक्रिया प्रवाह आरेख प्रस्तुत किया और 18.12.2007 को मेकॉन ने प्रत्यर्थी को उस पर अपनी टिप्पणियां प्रदान कीं।

10. चूंकि प्रत्यर्थी द्वारा एक बार में ही डिजाइन प्रस्तुत किए गए थे, इसलिए 14 दिनों की छोटी अवधि में उनकी समीक्षा करना संभव नहीं था और परिणामस्वरूप, मेकॉन ने 26.12.2007 को अपनी टिप्पणियाँ प्रस्तुत की और उसके बाद 29.12.2007 से शीघ्रतापूर्वक और क्रमिक रूप से प्रस्तुत की। यह पाया गया कि कई डिजाइन/डेटा शीट पिछली टिप्पणियों को शामिल किए बिना प्रस्तुत किए गए थे, अधूरे थे और संविदा के विपरीत थे। याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को दिनांक 03.01.2008 को एक पत्र भेजा, जिसमें 5 महीने बीत जाने के बावजूद प्रगति की कमी और अन्य कमियों की ओर इशारा किया गया, हालांकि, प्रत्यर्थी ने दिनांक 10.01.2008 के पत्र के माध्यम से संशोधित बीईडी प्रस्तुत करने के बजाय, अनुमोदन में देरी के लिए याचिकाकर्ता/मेकॉन को दोषी ठहराना शुरू कर दिया।

11. याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को दिनांक 17.01.2008 को एक पत्र भेजा जिसमें कहा गया कि शुरुआती बैठक में पक्षकारगण के बीच सहमत हुए मील के पत्थर हासिल नहीं किए गए

थे और जहाँ तक संभव था, विचलन की मांग की गई थी, लेकिन आगे विचलन पर सहमत होना संभव नहीं था। याचिकाकर्ता ने संशोधित डिजाइन भी मांगे, क्योंकि प्रस्तुत किए गए कई डिजाइन संबंधित परियोजना से संबंधित नहीं थे। प्रत्यर्थी द्वारा 31.01.2008 को 18 संशोधित बी.ई.डी. प्रस्तुत किए गए, लेकिन वे भी याचिकाकर्ता की संतुष्टि के अनुरूप नहीं थे।

12. समय-समय पर विभिन्न मुद्दों पर दोनों पक्षकारगण के बीच पत्राचार जारी रहा, जिसमें प्रत्येक पक्षकार संविदात्मक दायित्वों के गैर-प्रदर्शन के लिए एक-दूसरे को दोषी ठहराता रहा। यह समझते हुए कि संविदा के परिशिष्ट-2 में समय सारणी के खंड 1.1 के अनुसार, विभिन्न वस्तुओं की आपूर्ति और वितरण माह 7-9 (फरवरी से अप्रैल, 2008) से शुरू होना था और माह 17/18 तक पूरा होना था और बार चार्ट के अनुसार, तकनीकी उपकरणों का ऑर्डर माह 02 से शुरू होना था और माह 13 तक पूरा होना था और तकनीकी उपकरणों की आपूर्ति माह 07 से शुरू होनी थी और माह 17 तक पूरी होनी थी और यह भी कि कम्प्रेसर, मोटर आदि जैसे लम्बी डिलीवरी वाली वस्तुओं ('एलडीआई') को क्रय आदेश देने के बाद निर्माण और आपूर्ति में 13-14 महीने लगेंगे और यह कार्य निर्धारित समय के अनुसार आगे नहीं बढ़ रहा था, 29.08.2007 को पक्षकारगण के बीच एक किक-ऑफ बैठक फिर से आयोजित की गई और याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को कम्प्रेसर और अन्य एलडीआई के विनिर्देशों को शीघ्र प्रस्तुत करने की सलाह दी ताकि उपकरणों का समय पर ऑर्डर और आपूर्ति की जा सके। प्रत्यर्थी ने नवंबर, 2007 तक ऑर्डरिंग शेड्यूल सहित उपकरणों की एक विस्तृत सूची प्रदान करने पर सहमति व्यक्त की

13. याचिकाकर्ता ने कहा और दावा किया कि 19.09.2007 और 26.09.2007 को भी प्रत्यर्थी कैमरून और सीमेंस से क्रमशः सेंट्रीफ्यूगल कंप्रेसर पैकेज और यूनिट कंट्रोल पैनल

के लिए प्रस्ताव प्राप्त कर रहा था। इससे पता चलता है कि प्रत्यर्थी एलडीआई को समय सारिणी का अनुपालन करने के लिए आदेश देने की स्थिति में नहीं था।

14. 10.10.2007 से 17.10.2007 के बीच आयोजित बैठकों में, प्रत्यर्थी द्वारा विलम्ब के कारण एलडीआई की सूची तथा ऑर्डरिंग शेड्यूल प्रस्तुत करने की तिथि 30.09.2007 से 16.11.2007 तक अर्थात डेढ़ महीने के लिए स्थगित करनी पड़ी। अपने पत्र दिनांक 26.12.2007 में प्रत्यर्थी ने दावा किया कि मुख्य उपकरणों का डिजाइन तथा ऑर्डरिंग बी.ई.डी. की स्वीकृति के बिना नहीं किया जा सकता तथा उसने इस बात पर जोर दिया कि प्रस्तावित विचलन की अनुमति दी जाए तथा उसके बाद दिनांक 16.01.2008 को भेजे गए पत्र में उसने इस बात पर जोर दिया कि जब तक बी.ई.डी. तथा वैकल्पिक विक्रेताओं को स्वीकृति नहीं मिल जाती, तब तक वह किसी भी उपकरण का ऑर्डर नहीं दे सकता। याचिकाकर्ता इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हुआ और 25.01.2008 को प्रत्यर्थी को पत्र लिखकर अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा कि प्रत्यर्थी ने पहले कभी यह नहीं कहा था कि संविदा का हिस्सा होने वाले एलडीआई के बीईडी और टीएस की मंजूरी के बिना एलडीआई का ऑर्डर नहीं दिया जा सकता है, संविदा पर हस्ताक्षर करने के तुरंत बाद उनका ऑर्डर दिया जा सकता था। अब याचिकाकर्ता के लिए यह स्पष्ट हो गया कि प्रत्यर्थी संविदा की समयसीमा के भीतर उपकरणों की आपूर्ति सुनिश्चित करने में असमर्थ था।

15. प्रत्यर्थी ने कथित तौर पर हीट एक्सचेंजर के लिए फाइव्स क्रायोजेनिक्स, सेंट्रीफ्यूगल कंप्रेसर पैकेज के लिए कैमरून और मेन एयर कंप्रेसर ('एमएसी') के लिए सीमेंस पर दिनांक 06.02.2008, 07.02.2008 और 18.02.2008 को क्रय आदेश दिए। हालांकि, याचिकाकर्ता को बिना मूल्य वाले क्रय आदेशों की प्रतियां प्रदान नहीं की गईं और याचिकाकर्ता ने इन आदेशों को दिए जाने पर विवाद किया। इसके बाद, संविदा की शर्तों के विपरीत, प्रत्यर्थी ने पीपीयू आदि के लिए प्रमुख विचलन का प्रस्ताव जारी रखा।

16. एनआईटी के साथ दिए गए टीएस में, पीपीयू हेतु कोई अवशोषण का समय/चक्र निर्धारित नहीं किया गया था, हालांकि, अपने तकनीकी प्रस्ताव में, प्रत्यर्थी ने 8 घंटे के अवशोषण के समय और 7 घंटे के पुनः सक्रियण/पुन: सुधार समय सहित पीपीयू प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त, 24/25.02.2007 के एमओएम में, प्रत्यर्थी ने इस स्थिति की पुष्टि की और खंड 06.02.03 को संशोधित कर *"एडसोर्बर: रेडियल बीईडी टाइप 8 घंटे के कार्य चक्र सहित देरी से बदलाव के मामले में 51-90 मिनट के डिजाइन मार्जिन के साथ"* पढ़ा गया। अपने पत्र दिनांक 18.12.2007 में, मेकॉन ने चक्र अवधि की फिर से पुष्टि की। दिनांक 19.12.2007 के जवाब में, प्रत्यर्थी ने टीएस का अनुपालन करने के बजाय 4 घंटे के अवशोषण के चक्र के साथ पीपीयू के एक बड़े विचलन का प्रस्ताव दिया, यह दावा करते हुए कि यह एक मानक समाधान था और याचिकाकर्ता की मंजूरी मांगी। 20-21.12.2007 को आयोजित बैठक में प्रस्तावित विचलन को अस्वीकार कर दिया गया। इसके बावजूद, प्रत्यर्थी ने फिर से 25.12.2007 को एक पत्र भेजा जिसमें विचलन के साथ पीपीयू का ऑफर किया गया था, जिसे फिर से अस्वीकार कर दिया गया और प्रत्यर्थी को 31.12.2007 के फैक्स संदेश के माध्यम से सूचित किया गया।

17. पीपीयू में विचलन पर बाद में पक्षकारगण के बीच आदान-प्रदान किए गए विभिन्न संचारों के साथ-साथ समय-समय पर आयोजित बैठकों में चर्चा की गई, लेकिन कोई सार्थक परिणाम नहीं मिला और प्रत्यर्थी ने स्पष्ट रूप से परिशिष्ट-2 के खंड 01.01 और टीएस के खंड 06.02.03 का उल्लंघन किया। इसके साथ ही, कंप्रेसर के लिए सिंक्रोनस मोटर्स के संबंध में मुद्दे उठे। प्रत्यर्थी ने अपने प्रस्ताव सहित एमओएम दिनांक 24-25.02.2007 में अन्य बातों के साथ सहमति जताई कि मैक, बूस्टर एयर कंप्रेसर ('बीएसी') और नाइट्रोजन टर्बो कंप्रेसर ('एनटीसी') के लिए मोटर समकालिक होंगी। इस समझ को संविदा टीएस में एमएसी के लिए खंड 06.02.01, बीएसी के लिए खंड 06.02.03, एनटीसी के लिए खंड 06.02.09 में शामिल किया गया था। इसके अलावा, खंड 06.04.02 में प्रावधान है कि मैक,

बीएसी और एनटीसी के लिए मोटरें समकालिक होंगी। 13.12.2007 के पत्र के अनुसार, मेकॉन ने स्पष्ट रूप से कहा कि इंडक्शन मोटर अस्वीकार्य हैं और संविदा की शर्तों के अनुसार कंप्रेसर मोटरों का समकालिक होना आवश्यक है और 18.12.2007 के पत्र द्वारा इस स्थिति की पुष्टि की गई। संविदा पर हस्ताक्षर करने के 4½ महीने बाद, 19.12.2007 को, प्रत्यर्थी ने एक पत्र भेजा जिसमें दावा किया गया कि एटलस कोप्को सहित कंप्रेसर आपूर्तिकर्ताओं के पास 5 मेगावाट से कम के सिंक्रोनस मोटर्स के लिए कोई मानक समाधान नहीं है और सिंक्रोनस मोटर्स का एक रूसी निर्माता प्रिवोड एक समाधान निकालने के लिए तैयार है, लेकिन सिस्टम की कार्यशीलता की गारंटी नहीं दे सकता, क्योंकि उसे ऐसी परियोजनाओं में कोई अनुभव नहीं है। इस प्रकार यह प्रस्तावित किया गया कि याचिकाकर्ता को या तो कंप्रेसर के लिए एसिंक्रोनस मोटर्स को मंजूरी देनी चाहिए या प्रिवोड को विक्रेता के रूप में मंजूरी देनी चाहिए। यह प्रस्ताव एक विलंब की रणनीति और खंड 03.03 का उल्लंघन था, जिसके अनुसार प्रत्यर्थी को शुरू में विनिर्देशों की कार्यशीलता के बारे में खुद को संतुष्ट करना आवश्यक था।

18. दिनांक 20-21.12.2007 की बैठक में, प्रत्यर्थी ने कैमरून निर्मित बीएसी और एनटीसी के साथ प्रिवोड सिंक्रोनस मोटर्स की अनुकूलता सुनिश्चित करने पर सहमति व्यक्त की और आश्वासन दिया कि मोटर्स की तकनीकी विशिष्टताएं संविदा के अनुसार होंगी। याचिकाकर्ता ने विक्रेता के रूप में प्रिवोड को मंजूरी देने पर सहमति व्यक्त की। 26.12.2007 को, प्रत्यर्थी ने फिर से एक पत्र भेजा जिसमें जोर दिया गया कि एसिंक्रोनस मोटर्स का उपयोग किया जाना चाहिए और दिनांक 27.12.2007 और 31.12.2007 के पत्रों के माध्यम से, मेकॉन और याचिकाकर्ता ने सिंक्रोनस मोटर्स के लिए प्रिवोड को एक विक्रेता के रूप में स्वीकार किया, बशर्ते कि मोटर्स कंप्रेसर और तकनीकी विशिष्टताओं के साथ संगत हों। प्रतिक्रिया में, दिनांक 10.01.2008 के पत्र के माध्यम से, प्रत्यर्थी ने दावा किया कि

परियोजना के निष्पादन के दौरान संगतता प्राप्त की जाएगी, लेकिन प्रत्यर्थी से संगतता की पुष्टि कभी नहीं मिली।

19. बाद में, प्रत्यर्थी के आग्रह पर, याचिकाकर्ता ने 25.02.2008 से 07.03.2008 तक आयोजित बैठकों में प्रत्यर्थी को ठंडे वाल्वों के साथ-साथ रूस निर्मित गर्म वाल्वों और फेमा (इटली) निर्मित सुरक्षा वाल्वों के विक्रेता के रूप में स्वीकार कर लिया। कॉलम, पीईआरटी नेटवर्क आदि के संबंध में विभिन्न मुद्दे उठे, जिससे याचिकाकर्ता को प्रत्यर्थी को संविदा के निष्पादन में देरी और उल्लंघन आदि की ओर इशारा करते हुए पत्र भेजने के लिए बाध्य होना पड़ा। 09.04.2008 को, याचिकाकर्ता ने संविदा के निष्पादन में आने वाली विभिन्न समस्याओं को इंगित करते हुए एक विस्तृत पत्र भेजा, जिसके कारण उसे विश्वास नहीं रहा कि प्रत्यर्थी संविदा की समयसीमा को पूरा कर पाएगा। याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को 14 दिनों के भीतर कार्यान्वयन के लिए एक समय सारिणी भेजने के लिए कहा, जिसके विफल होने पर जीसीसी के खंड 37 के अनुसार जोखिम खरीद कार्रवाई की जाएगी। इसके बाद 12.04.2008 को एक अनुस्मारक पत्र भेजा गया। जवाब में, पत्र दिनांक 14.04.2008 के माध्यम से, प्रत्यर्थी ने मामलों को सुलझाने में देरी के लिए याचिकाकर्ता को दोषी ठहराया, विशेष रूप से, समय पर बीईडी को मंजूरी नहीं देने के लिए, जिसके बिना प्रत्यर्थी आगे नहीं बढ़ सका। 10 महीनों में प्रगति की कमी को देखते हुए, याचिकाकर्ता ने दिनांक 07.06.2008 को अंतिम जोखिम खरीद नोटिस भेजा और प्रत्यर्थी से दिनांक 19.06.2008 को प्राप्त प्रतिक्रिया को असंतोषजनक पाते हुए, याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी की चूक के लिए जीसीसी के खंड 44.2 के तहत संविदा को दिनांक 01.07.2008 के पत्र के माध्यम से समाप्त कर दिया, जिसमें ऐसा करने के 9 कारण बताए गए थे।

20. प्रत्यर्थी ने दिनांक 09.07.2008 के पत्र द्वारा समाप्ति नोटिस का उत्तर दिया, जिसमें बताया गया कि खंड 44.2 के तहत संविदा समाप्त नहीं किया जा सकता। 12.07.2008 को

याचिकाकर्ता ने प्रदर्शन बैंक गारंटी ('पीबीजी') का आह्वान किया। 15.07.2008 को याचिकाकर्ता ने 27.05.2008 से 27.08.2008 की अवधि के लिए 1,61,916/- रुपए के एलसी शुल्क का भुगतान किया और 23.07.2008 को बैंक को लिखा कि संविदा समाप्त कर दिया गया है और एलसी को बंद कर दिया जाना चाहिए और बैंक को एलसी के खिलाफ कोई भुगतान जारी न करने का निर्देश दिया। 25.02.2009 को याचिकाकर्ता ने परियोजना को पूरा करने के लिए एयर लिक्विड को संविदा प्रदान किया। दिनांक 22.10.2010 के एक पत्र के माध्यम से प्रत्यर्थी ने विवादों के निपटारे की मांग की और 19.04.2011 को उस पर प्रतिक्रिया देते हुए याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को सूचित किया कि वह जोखिम खरीद संविदा के कारण उस पर आए अतिरिक्त भार के कारण प्रत्यर्थी से 67.68 करोड़ रुपए की राशि का दावा करेगा। 04.07.2012 को प्रत्यर्थी ने अंतर्राष्ट्रीय चैंबर ऑफ कॉमर्स ('आईसीसी') सचिवालय के समक्ष मध्यस्थता के लिए अनुरोध दायर किया और याचिकाकर्ता को 08.08.2012 को अनुरोध प्राप्त हुआ। पक्षकारगण की सहमति से मध्यस्थता को 12.09.2012 से स्थगित रखा गया था। 29.08.2013 को, याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी को विवाद का नोटिस भेजा, जिसमें निम्नलिखित के कारण 67.68 करोड़ रुपए का दावा किया गया: (क) संविदा की अंतर कीमत; (ख) बिजली की खपत की अंतर लागत; और (ग) 8 तिमाहियों के लिए एलसी शुल्क, याचिकाकर्ता द्वारा भुनाए गए पीबीजी की राशि से कम किया गया और 30 दिनों के भीतर भुगतान की मांग की गई, ऐसा न करने पर वह जीसीसी के खंड 6 को लागू करेगा।

21. प्रत्यर्थी ने 09.12.2016 को संशोधित दावा विवरण फाइल किया, जिसमें मांग की गई: (क) पीबीजी के गलत तरीके से नकदीकरण के लिए 1,543,269 अमरीकी डॉलर; (ख) बीईडी और डीईडी के लिए 1,489,250 अमरीकी डॉलर; (ग) विक्रेताओं को किए गए अग्रिम भुगतान के लिए 2,190,756 अमरीकी डॉलर; (घ) परियोजना के निष्पादन में हुए

खर्चों के लिए 151,016 अमरीकी डॉलर; (ड) लाभ और सद्भावना की हानि के लिए 11,241,713 अमरीकी डॉलर; (च) 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज; और (छ) लागत।

22. 07.01.2007 को याचिकाकर्ता ने बचाव और प्रति-दावा का संशोधित विवरण फाइल किया, जिसमें निम्नलिखित मांगे थीं: (क) अंतर संविदा मूल्य के लिए 6,24,24,000/- रुपए; (ख) बिजली खपत की अंतर लागत के लिए 67,88,72,880/- रुपए; (ग) बाजार से खरीदे गए ऑक्सीजन की अंतर लागत के लिए 91,08,62,684/- रुपए; (घ) 8 तिमाहियों के लिए एलसी शुल्क के लिए 12,32,607/- रुपए; (ङ) 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज; और (च) लागत।

23. विद्वान अधिकरण ने दिनांक 20.07.2018 के आक्षेपित अधिनिर्णय द्वारा याचिकाकर्ता के प्रति-दावे को खारिज कर दिया तथा प्रत्यर्थी के दावों को इस प्रकार स्वीकार किया:

(क) पीबीजी के गलत तरीके से नकदीकरण के लिए 1,551,456 अमेरिकी डॉलर;
(ख) प्रत्यर्थी द्वारा अपने विक्रेताओं को किए गए अग्रिम भुगतान के लिए 2,190,756 अमेरिकी डॉलर;
(ग) संविदा के निष्पादन के लिए किए गए व्यय के लिए 151,016 अमेरिकी डॉलर;
(घ) लाभ की हानि के लिए 919,209.93 अमेरिकी डॉलर;
(ङ) बीईडी और डीईडी की तैयारी में किए गए कार्य के लिए 2,722,265 अमेरिकी डॉलर;
(च) लागत के लिए 957,889.38 अमेरिकी डॉलर; तथा
(छ) विभिन्न राशियों पर अलग-अलग अवधि के लिए 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज।

24. इस स्तर पर, यह उल्लेख करना उचित है कि प्रत्यर्थी ने प्रारंभिक आपत्ति उठाई है कि 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत वर्तमान याचिका समय सीमा पार कर चुकी है और केवल इसी आधार पर खारिज किए जाने योग्य है। प्रारंभिक आपत्ति पर वरिष्ठ अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्क इस प्रकार हैं:-

<u>प्रत्यर्थी की ओर से तर्क:</u>

(क) 1996 अधिनियम की धारा 34(3) में मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन दायर करने के लिए 03 महीने की अवधि प्रदान की गई है। 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान में यह प्रावधान है कि यदि न्यायालय संतुष्ट है कि आवेदक को 03 महीने के भीतर आवेदन करने से पर्याप्त कारण से रोका गया था, तो वह 30 दिनों की अतिरिक्त अवधि के भीतर आवेदन पर विचार कर सकता है, लेकिन उसके बाद नहीं। वर्तमान मामले में, याचिका 3 महीने और 30 दिनों की निर्धारित अवधि के बाद दायर की गई थी और इस पर विचार नहीं किया जा सकता। याचिका दायर करने का समय 27.07.2018 को शुरू हुआ, जब आईसीसी सचिवालय द्वारा भेजा गया 27.07.2018 का ई-मेल, आईसीसी नियमों के अनुच्छेद 3, 23(1)(ख) और 34 के अनुसार सेल द्वारा इस तरह के संचार प्राप्त करने के लिए नामित सभी चार व्यक्तियों को प्राप्त हुआ और जिनके नाम अनुच्छेद 23(1)(क) के अनुसार संदर्भ की शर्तों में भी दर्ज हैं। ये व्यक्ति सेल के शीर्ष कानूनी अधिकारी थे जिनमें वर्तमान मुख्य महाप्रबंधक (कानूनी) श्री एस.बी. माथुर भी शामिल थे, जो वर्तमान याचिका में अधिकृत हस्ताक्षरकर्ताओं में से एक हैं। इस ई-मेल द्वारा, याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि मसौदा अधिनिर्णय को 28.06.2018 को अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थता न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया था और अधिनिर्णय की स्याही हस्ताक्षरित प्रति ई-मेल के साथ संलग्न की गई थी। सभी मामलों में वैध पूर्ण याचिका 07.12.2018 को दायर की गई थी और इस प्रकार यह याचिकाकर्ता द्वारा अधिनिर्णय प्राप्त करने की तिथि 27.07.2018 से गणना की गई 03 महीने और 30 दिनों की अवधि से परे थी। इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय के पास 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के तहत भी देरी को माफ करने का कोई अधिकार नहीं है, जिसमें यह निर्धारित किया गया है कि यदि 3 महीने के भीतर

आपत्तियां दर्ज न करने के लिए पर्याप्त कारण बताए जाते हैं, तो 30 दिनों तक की देरी को माफ किया जा सकता है, लेकिन उसके बाद नहीं।

(ख) याचिकाकर्ता ने याचिका में यह खुलासा नहीं किया कि अधिनिर्णय 27.07.2018 को ई-मेल द्वारा प्राप्त हुआ था। यह झूठा दावा किया गया था कि अधिनिर्णय 06.08.2018 को प्राप्त हुआ था और महत्वपूर्ण बात यह है कि इस दलील के समर्थन में कोई सबूत भी फाइल नहीं किया गया था। याचिका के समयबद्ध होने के संबंध में आपत्ति प्रत्यर्थी द्वारा 18.03.2019 के उत्तर में अपनी प्रारंभिक आपत्तियों के एक भाग के रूप में तुरंत उठाई गई थी और याचिकाकर्ता द्वारा उत्तर में दिए गए कथनों का खंडन करते हुए कोई प्रत्युत्तर फाइल नहीं किया गया था। ***युवा और खेल मंत्रालय, बंदरगाह विभाग, भारत सरकार बनाम अर्न्स्ट एंड यंग प्राइवेट लिमिटेड (जिसे अब अर्न्स्ट एंड यंग एलएलपी के नाम से जाना जाता है) और अन्य, 2023 एससीसी ऑनलाइन डेल 5182,*** इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जब ई-मेल द्वारा सेवा तामील का एक स्वीकृत तरीका है, तो पक्षकारगण को मध्यस्थ अधिकरण के अधिनिर्णय की स्कैन की गई हस्ताक्षरित प्रति भेजना 1996 अधिनियम की धारा 31(5) के तहत परिकल्पित एक वैध डिलीवरी होगी।

(ग) 1996 अधिनियम की धारा 3 में यह प्रावधान है कि पक्षकार लिखित संचार प्राप्त करने के तरीके पर सहमत हो सकते हैं और इस प्रावधान के अनुरूप, याचिकाकर्ता ने ई-मेल द्वारा मध्यस्थता अधिनिर्णय की सूचना दिए जाने पर सहमति व्यक्त की थी। यह जीसीसी के खंड 6 से स्पष्ट है, जो इस प्रकार है:-

> *"6. विवादों का निपटारा: सुलह और मध्यस्थता*
>
> *विवादों के मामले में, मामले को मध्यस्थता से पहले सुलह के लिए भेजा जाएगा। ...*

विदेशी ठेकेदार के साथ या कंसोर्टियम संविदाओं (विदेशी ठेकेदार सहित) में मध्यस्थता, जहां संविदा मूल्य 20 करोड़ रुपए से अधिक है, पेरिस के अंतर्राष्ट्रीय चैंबर ऑफ कॉमर्स (आईसीसी) के मध्यस्थता नियमों द्वारा शासित होगी। मध्यस्थता कार्यवाही का स्थान नई दिल्ली होगा। सुलह या मध्यस्थता कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, नियोक्ता और ठेकेदार अपने संविदात्मक दायित्वों का पालन करना जारी रखेंगे।"

(घ) आईसीसी नियम ई-मेल द्वारा अधिनिर्णय की अधिसूचना पर विचार करते हैं, जो उक्त नियमों के अनुच्छेद 3 और 34 के मात्र पढ़ने से प्रमाणित होता है, जो इस प्रकार है:-

*"**अनुच्छेद 3: लिखित अधिसूचनाएँ या संचार; समय सीमाएँ***

...

2) सचिवालय और मध्यस्थ अधिकरण से सभी अधिसूचनाएं या संचार उस पक्षकार या उसके प्रतिनिधि के अंतिम पते पर किए जाएंगे, जिसके लिए वे आशयित हैं, जैसा कि संबंधित पक्षकार या दूसरे पक्षकार द्वारा अधिसूचित किया गया है। ऐसी अधिसूचना या संचार रसीद, पंजीकृत डाक, कूरियर, ईमेल या दूरसंचार के किसी अन्य माध्यम से किया जा सकता है जो इसके भेजे जाने का अभिलेख प्रदान करता है।

3) अधिसूचना या संचार को उस दिन किया गया माना जाएगा जिस दिन इसे पक्षकार द्वारा या उसके प्रतिनिधि द्वारा प्राप्त किया गया था या अनुच्छेद 3(2) के अनुसार किए जाने पर प्राप्त किया गया होता।"

*" **अनुच्छेद 34: अधिनिर्णय की अधिसूचना, जमा और प्रवर्तनीयता***

1) एक बार अधिनिर्णय दिए जाने के बाद, सचिवालय पक्षकारगण को मध्यस्थ अधिकरण द्वारा हस्ताक्षरित टेक्स अधिसूचित करेगा, बशर्ते कि मध्यस्थता की लागत पक्षकारगण द्वारा या उनमें से किसी एक द्वारा आईसीसी को पूरी तरह से भुगतान कर दी गई हो।

...

3) अनुच्छेद 34(1) के अनुसार की गई अधिसूचना के आधार पर, पक्षकार मध्यस्थ अधिकरण की ओर से अधिसूचना या जमा के किसी अन्य रूप को माफ करते हैं।"

(ड) 1996 अधिनियम में मध्यस्थ अधिनिर्णय की डिलीवरी या प्राप्ति की कोई निर्दिष्ट विधि या तरीका निर्धारित नहीं किया गया है और मध्यस्थों से भौतिक रूप में स्याही से हस्ताक्षरित मूल अधिनिर्णय की प्राप्ति को अनिवार्य या आवश्यक नहीं बनाया गया है। ये टिप्पणियां ***दिल्ली शहरी आश्रय सुधार बोर्ड बनाम लखविंदर सिंह, 2017 एससीसी ऑनलाइन डेल 9810*** में इस न्यायालय के निर्णय और ***नेशनल एग्रीकल्चरल कोऑपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन ऑफ इंडियन लिमिटेड बनाम मेसर्स आर. प्यारेलाल इम्पोर्ट और एक्सपोर्ट लिमिटेड, 2015 एससीसी ऑनलाइन कैल 7198*** में कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय से आई हैं और इसलिए, 27.07.2018 को ई-मेल द्वारा अधिनिर्णय की प्रति प्राप्त होने की तारीख 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत 3 महीने की परिसीमा के प्रारंभ होने की तारीख होगी। याचिकाकर्ता का तर्क है कि 'आईसीसी मध्यस्थता नियमों के तहत मध्यस्थता के आचरण पर पक्षकारगण और मध्यस्थ अधिकरणों को नोट' (इसके बाद 'आईसीसी नोट' के रूप में संदर्भित) के पैरा 141 के आधार पर, ई-मेल के माध्यम से प्राप्त अधिनिर्णय की शालीनता प्रति 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत समय सीमा लागू नहीं होगी, यह वैधानिक प्रावधानों का गलत अर्थ है। आईसीसी नियमों के तहत समय सीमा 1996 अधिनियम के तहत निर्धारित समय सीमा पर लागू नहीं होती है और किसी भी मामले में आईसीसी नियम केवल अधिनिर्णय पारित होने तक मध्यस्थता के संचालन को नियंत्रित करते हैं। ***[संदर्भ: आईमैक्स कॉर्पोरेशन बनाम ई-सिटी एंटरटेनमेंट (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, (2017) 5 एससीसी 331]***। आईसीसी नोट का पैरा 141 इस प्रकार है:-

> *"141. अधिनिर्णय, परिशिष्ट और निर्णयों की पीडीएफ हस्ताक्षरित मूल प्रति की शालीनता प्रति पक्षकारगण को ईमेल द्वारा भेजी जाएगी। ईमेल द्वारा शालीनता प्रति भेजने से <u>आईसीसी मध्यस्थता नियमों के तहत</u> कोई समय सीमा लागू नहीं होती है।"*

(च) याचिकाकर्ता को 27.07.2018 को अधिनिर्णय प्राप्त हुआ तथा 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित 3 महीने की अवधि 27.10.2018 को समाप्त हो गई तथा 30 दिनों की अतिरिक्त अवधि 26.11.2018 को समाप्त हो गई। 27.07.2018 से शुरू होने वाले 3 महीने और 16 दिनों के बाद पहली बार 12.11.2018 को याचिका दायर की गई तथा इसमें देरी के लिए माफी के लिए कोई आवेदन नहीं किया गया। केवल इसी आधार पर याचिका खारिज किए जाने योग्य है। यह मानते हुए कि अधिनिर्णय की प्राप्ति की तिथि 06.08.2018 मानी गई है तथा 12.11.2018 को फाइल करना 3 महीने के भीतर है, फाइल न किए जाने के कारण वर्तमान मामले में परिसीमा समाप्त नहीं होगी। आपत्तियों को चिन्हित करते समय रजिस्ट्री द्वारा इंगित दोषों की प्रकृति दर्शाती है कि दोष घातक थे क्योंकि याचिका, अधिनिर्णय की प्रति तथा याचिकाकर्ता के हस्ताक्षरकर्ता को याचिका दायर करने के लिए अधिकृत करने वाले मुख्तारनामा के बिना दायर की गई थी; सत्य कथन में रिक्त स्थान दिखाई दे रहे थे; याचिका के पैराग्राफ 1-214 और 216 के संबंध में सत्यापन किया गया था, जो कि अंततः 07.12.2018 को दायर याचिका में सत्यापन से भिन्न था जिसमें पैराग्राफ 1-211 और 213-214 की सामग्री सत्यापित की गई थी; बुकमार्किंग और पृष्ठांकन के बिना कुल 300 पृष्ठ दायर किए गए थे जबकि सूचकांक में 1901 पृष्ठ दर्शाए गए थे और 07.12.2018 को दायर याचिका में 2000 से अधिक पृष्ठ थे; वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 के अनुसार सत्य कथन दायर नहीं किया गया था; कैविएट रिपोर्ट नहीं ली गई थी; न्यायालय शुल्क कम/गायब था; और शपथ पत्र अधूरे थे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि याचिका 12.11.2018 को केवल परिसीमा को रोकने के लिए दायर की गई थी और यह कृत्य कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। अधिनिर्णय फाइल न करने का दोष मामले की जड़ तक जाता है और यह इसलिए महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि याचिकाकर्ता ने 12.11.2018 से पहले ही

अधिनिर्णय प्राप्त कर लिया था, लेकिन प्रारंभिक फाइल करने के समय इसे फाइल न करने के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है। याचिकाकर्ता ने स्वीकार किया कि 12.11.2018 को याचिका दायर करने के बाद दस्तावेजों को समझने के लिए सेल के अधिकारियों और अधिवक्तागण के बीच कई सम्मेलन आयोजित किए गए थे, जो दर्शाता है कि 12.11.2018 को दायर याचिका अंतिम होने का इरादा नहीं था। चूंकि याचिका, सभी मामलों में पूर्ण, केवल 07.12.2018 को दायर की गई थी, जो कि अधिनिर्णय की प्राप्ति की तारीख से 03 महीने और 30 दिनों से अधिक थी, इसलिए देरी को माफ नहीं किया जा सकता है। बिना किसी पूर्वाग्रह के, भले ही 06.12.2018 की तारीख को पूरी याचिका वैध रूप से दायर करने की तारीख के रूप में लिया जाए, याचिकाकर्ता एक पर्याप्त कारण बनाने में विफल रहा है जिसने उसे 3 महीने के भीतर याचिका दायर करने से रोका। गैर-मौजूदगी फाइल करने की दलील के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया गया:-

(क) ***दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम दुर्गा कंस्ट्रक्शन कंपनी, आईएलआर (2014) 1 डेल 153***

खामियां: *अधिनिर्णय को कानूनी आकार के कागज पर पुनः टंकण किया जाएगा।*

अवलोकन:

- *न्यायालय को निर्धारित वैधानिक अवधि से परे आपत्तियों को फिर से फाइल करने में देरी को माफ करने का अधिकार है, हालांकि, यह उदारतापूर्वक प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि अधिनियम का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कार्यवाही शीघ्रता से पूरी हो। आपत्ति को फिर से फाइल करने में देरी को अधिनियम के उद्देश्य को विफल करने और एक अकुशल समय अवधि निर्दिष्ट करने के उद्देश्य को विफल करने की अनुमति नहीं दी जा सकती [पैरा 25]।*
- *देरी को माफ करने के लिए, पक्षकार को न्यायालय को यह संतुष्ट करना होगा कि मामले को तत्परतापूर्वक आगे बढ़ाया गया था, और देरी उसके नियंत्रण से परे और अपरिहार्य है [पैरा 25]।*

(ख) ***श्रावंती इंफ्राटेक प्राइवेट लिमिटेड बनाम ग्रीन्स पावर इक्विपमेंट (चीन) कंपनी लिमिटेड, 2016 एससीसी ऑनलाइन डेल 5645***

खामियां: *कोई दस्तावेज फाइल नहीं किया गया, कोई वकालतनामा नहीं, कोई प्रस्ताव/प्राधिकरण नहीं, न हीं देरी को माफ करने हेतु आवेदन, कोई शपथ पत्र नहीं, किसी पक्षकार के हस्ताक्षर के बिना याचिका की गई।*

अवलोकन:

- *जब दोष दूर हो गए और याचिका फिर से फाइल की गई, तो समर्थन शपथ पत्र की तारीख और याचिका पर हस्ताक्षर की तारीख पहले की थी। यह प्रथम दृष्टया अभिलेख को गलत साबित करने का प्रयास है [पैरा 18]।*
- *न्यायलय से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधानों के अनुसार याचिका फाइल करने में हुई देरी को यंत्रवत् माफ कर दे। यह तभी संभव है जब याचिकाकर्ता संतुष्ट हो कि देरी सद्भावनापूर्ण कारणों से हुई थी, तभी न्यायलय देरी को माफ करने के लिए आगे बढ़ सकती है [पैरा 19]।*
- *शुरुआत में केवल 66 पृष्ठों वाली याचिका (जो बाद में - पुनः फाइल करने पर 859 पृष्ठों की हो गई) दायर करके, याचिकाकर्ता के हस्ताक्षर के बिना, बिना शपथ पत्र के, बिना वकालतनामे के, याचिकाकर्ता ने अधिनियम की धारा 34(3) के पूरे उद्देश्य को विफल करने की कोशिश की। इस न्यायालय को वैधानिक रूप से उस बाहरी सीमा के बारे में सख्त दृष्टिकोण अपनाने का आदेश दिया गया है जिसके भीतर अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिकाएँ दायर की जानी चाहिए [पैरा 20]।*

(ग) ***एसकेएस पावर जेनरेशन (छत्तीसगढ़) लिमिटेड बनाम आई. एस. सी. प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड, 2019 एससीसी ऑनलाइन डेल 8006***

खामियां: *याचिका में बिना किसी शपथ पत्र, वकालतनामा और आक्षेपित अधिनिर्णय के केवल 29 पृष्ठ थे।*

अवलोकन:

- *उपरोक्त दोषों को देखते हुए, दायर करना केवल सीमा की अवधि को चलने से रोकने के लिए "कागज़ों का एक गुच्छा" था [पैरा 11]।*
- *जबकि न्यायलयों के पास याचिका को फिर से दायर करने में देरी को माफ करने का अधिकार है, न्यायलय का दृष्टिकोण उदार नहीं हो सकता है और आवेदक के आचरण का परीक्षण इस बात पर करना होगा कि आवेदक ने उचित परिश्रम और शीघ्रता से काम किया है या नहीं [पैरा 13]।*

- *उदय शंकर त्रियार बनाम राम कलवार एवं अन्य, (2006) 1 एससीसी 75 में अंतर किया गया। याचिका फाइल न करना स्पष्ट रूप से जानबूझकर और शरारतपूर्ण था क्योंकि इसका उद्देश्य केवल परिसीमा को समाप्त होने से रोकना था और उसके बाद याचिकाकर्ता ने याचिका को शीघ्रता से पुनः फाइल करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया [पैरा 16]।*

(घ) ***निदेशक और सचिव, समाज कल्याण विभाग बनाम सर्वेश सिक्यूरिटी सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड, 2019 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 11593***

खामियां: *याचिका पर हस्ताक्षर नहीं थे, इसके साथ नहीं थे एक शपथ पत्र नहीं था, सत्य का बयान फाइल नहीं किया गया था, और अधिवक्ता के पास अभिलेख पर वकालतनामा नहीं था।*

प्रेक्षण:

- *उपरोक्त दोष दर्शाते हैं कि केवल कागजों का एक बंडल एक साथ दायर किया गया था और मूल याचिका सीमा अवधि को बचाने के लिए की गई एक मात्र कागजी औपचारिकता थी। [पैरा 13 और 14]।*

(ङ) ***भारत संघ बनाम भारत बायोटेक इंटरनेशनल लिमिटेड, 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 483, (भारत संघ द्वारा दायर आ.प्र.अ. (मूल पक्ष) (वाणि.) 82/2020 की अपील में खण्ड न्यायपीठ द्वारा बरकरार रखा गया, जिसका निर्णय 19.12.2023 को लिया गया)***

खामियां: *अधिनिर्णय की कोई प्रति नहीं, मूल आवेदन में केवल 83 पृष्ठ थे, प्रत्येक पृष्ठ पर कोई हस्ताक्षर नहीं, दस्तावेज संलग्न नहीं थे, कोई न्यायालय शुल्क नहीं, सत्य कथन में रिक्त स्थान, 430 पृष्ठों में कठोर परिवर्तन के साथ पुनः दायर किया गया, फिर 441 पृष्ठों के साथ पुनः दायर किया गया।*

अवलोकन:

- *पुनः फाइल करते समय, न केवल याचिका में 350 से अधिक पृष्ठों के दस्तावेज जोड़े गए, बल्कि याचिका का ढांचा भी बदल दिया गया, फिर भी पुनः फाइल याचिका के अंतिम पृष्ठ पर फाइल करने की तिथि 31.05.2019 दर्शाई गई; जो कि याचिकाकर्ता की इस स्वीकारोक्ति को ध्यान में रखते कि उसने पुनः फाइल करते समय याचिका के मुख्य भाग में परिवर्तन किए थे, स्पष्ट रूप से असत्य है। यह पूरी तरह से अस्वीकार्य कार्य है [पैरा 18]।*

- *किसी अधिनिर्णय की प्रति संलग्न किए बिना उस पर चोट करने की मांग करने वाली याचिका को वैध फाइल होने का दावा नहीं किया जा सकता है और वह भी अक्षेपित अधिनिर्णय की प्रति फाइल करने से छूट मांगने वाली अर्जी पेश किए बिना [पैरा 18]।*

- *उस समय याचिका के साथ आक्षेपित अधिनिर्णय फाइल न करना एक 'मामूली' दोष के रूप में कम करके नहीं आंका जा सकता है, लेकिन यह इतना गंभीर दोष है कि यह मूल फाइलिंग को एक डमी फाइलिंग के रूप में प्रस्तुत करेगा [पैरा 19]।*

- *मूल याचिका, जो केवल 83 पृष्ठों की थी, याचिकाकर्ता की ओर से किसी तरह परिसीमा को रोकने का एक लापरवाह और जानबूझकर किया गया प्रयास था, जो समय खरीदने के लिए एक चतुर चाल थी। वास्तव में, रजिस्ट्री द्वारा इंगित दोषों के साथ याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा मूल याचिका प्राप्त होने के बाद भी, याचिकाकर्ता ने 3 महीने और 30 दिनों की सीमा अवधि के भीतर याचिका को फिर से फाइल करते हुए आक्षेपित अधिनिर्णय की एक प्रति फाइल करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया [पैरा 19]।*

(च) ***तेल और नेचुरल गैस कॉरपोरेशन लिमिटेड बनाम प्लैनेटकास्ट टेक्नोलॉजीज लिमिटेड, 2020 एससीसी ऑनलाइन डेल 2083 (ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम प्लैनेटकास्ट टेक्नोलॉजीज लिमिटेड, 2023 एससीसी ऑनलाइन डेल 8490 में खण्ड न्यायपीठ द्वारा आयोजित)***

खामियां: *अधिनिर्णय और सत्य कथन फाइल न करना।*

अवलोकन:

- *समग्र तस्वीर जो उभर कर आती है वह यह है कि इसे 'उचित' याचिका कहलाने के लिए, इसके साथ कम से कम सत्य कथन, वकालतनामा और उसमें आरोपित अधिनिर्णय अवश्य होना चाहिए, इन सभी महत्वपूर्ण दस्तावेजों की अनुपस्थिति में, फाइल करना 'कागज़ों का एक गुच्छा' बन जाता है [पैरा 27]।*

- *किसी अधिनिर्णय से व्यथित पक्षकार को परिसीमा को रोकने के लिए अपर्याप्त याचिका दायर करने और फिर यह तर्क देने की अनुमति देना कि दोषों को ठीक किया जा सकता है, विधानमंडल की सख्त और अलोचदार परिसीमा प्रदान करने की मंशा को भी नकार देगा [पैरा 34]।*

(छ) ***ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम एयर इंडिया लिमिटेड, 2021 एससीसी ऑनलाइन डेल 5139***

खामियां: *आवेदन के समर्थन में अधिनिर्णय, वकालतनामा, हस्ताक्षरित और सत्यापित सत्य कथन और शपथ पत्र फाइल न करना।*

अवलोकन:

- *यदि संबंधित पक्षकार पहली फाइलिंग के बाद भी लापरवाह रवैया दिखाता है और अधिनियम की धारा 34 के तहत निर्धारित सीमा अवधि से अनुपातहीन रूप से अधिक देरी करता है, तो फाइलिंग और दोबारा फाइलिंग में देरी घातक हो सकती है। हालांकि, जहां वे पक्षकार - फाइलिंग में प्रारंभिक देरी के बाद (जो कि 3 महीने की परिसीमा की समाप्ति के 30 दिनों की अवधि के भीतर है), दोबारा फाइलिंग में जल्दबाजी की भावना प्रदर्शित करते हैं, तो न्यायालय द्वारा देरी को माफ करने के लिए अधिक अनुकूल दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए [पैरा 12 और 14]।*

- *किसी फाइलिंग को गैर-मौजूदा माना जा सकता है, यदि इसे किसी भी पक्षकार या उसके अधिकृत और नियुक्त अधिवक्ता के हस्ताक्षर के बिना दायर किया जाता है [पैरा 11]।*
- *किसी फाइलिंग को गैर-मौजूदा माना जा सकता है, यदि इसे किसी भी पक्षकार या उसके अधिकृत और नियुक्त अधिवक्ता के हस्ताक्षर के बिना दायर किया जाता है [पैरा 11]।*

(ज) ***इरकॉन इंटरनेशनल लिमिटेड बनाम रीकॉन इंजीनियर्स (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 1860***

खामियां: *अधिनिर्णय न फाइल करना, वकालतनामा, कोई सत्य कथन नहीं, प्रारंभिक फाइलिंग केवल 73 पृष्ठों की थी, जबकि अंतिम फाइलिंग 1325 पृष्ठों में फैली हुई थी।*

अवलोकन:

- *पृष्ठों की संख्या में 73 से 1325 तक की वृद्धि यह दर्शाती है कि पुनः फाइल करने के समय याचिका का पूरा ढाँचा बदल दिया गया था [पैरा 14]।*

- *अधिनिर्णय और वकालतनामा की अनुपस्थिति यह दर्शाती है कि फाइल करना वैध नहीं था और यह बेकार है [पैरा 15]।*

(झ) ***ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम मेसर्स साई रामा इंजीनियरिंग एंटरप्राइजेज (एसआरईई) और मेसर्स मेघा इंजीनियरिंग एंड***

इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड (एमईआईएल) का संयुक्त उद्यम, 2023 एससीसी ऑनलाइन डेल 63

खामियां: *शपथ पत्र सत्यापित नहीं किए गए थे।*

प्रेक्षण:

- *यह आवश्यक है कि आवेदन के साथ अधिनिर्णय की एक प्रति हो क्योंकि अधिनिर्णय की एक प्रति के बिना, जिसे चुनौती दी गई है, अधिनिर्णय को रद्द करने के आधारों की सराहना करना असंभव होगा [पैरा 32 और 41]।*

- *इन मामलों में बहुत सारे दोष हो सकते हैं। अलग-अलग विचार किए गए प्रत्येक दोष, फाइलिंग को गैर-मौजूद करने के लिए अपर्याप्त हो सकते हैं। हालांकि, अगर इन दोषों पर संचयी रूप से विचार किया जाए, तो यह इस निष्कर्ष पर पहुंच सकता है कि फाइलिंग गैर-मौजूद है [पैरा 41]।*
- *इस प्रश्न पर विचार करने के लिए कि क्या फाइल किया गया आवेदन अनिर्धारित है, न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए कि क्या फाइल किया गया आवेदन, सुबोधगम्य है, क्या उसका फाइल किया जाना अधिकृत है; क्या उसके साथ कोई अधिनिर्णय भी है; और क्या उसकी विषय-वस्तु में पक्षकारगण के नाम और अधिनिर्णय को आक्षेप लगाने के आधार सहित महत्वपूर्ण विवरण दिए गए हैं [पैरा 41]।*

(ञ) ***ब्रह्मपुत्र क्रैकर एंड पॉलिमर लिमिटेड बनाम राजशेखर निर्माण प्राइवेट लिमिटेड, 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 516***

खामियां: *आक्षेपित अधिनिर्णय, सत्य कथन, और वकालतनामा का फाइल न करना,*

अवलोकन:

- *अकेले अधिनिर्णय फाइल न करना एक मौलिक दोष है जो फाइलिंग को गैर-मौजद बनाता है [पैरा 15]।*

- *अधिनियम की धारा 34 के तहत सत्य कथन या अधिनिर्णय के बिना याचिका फाइल करना या याचिका फाइल करने का प्रयास करना हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए, खासकर तब जब इसे अधिनियम की धारा 34 में निर्धारित परिसीमा को शुरू होने से रोकने के लिए केवल प्रस्तुत किया जा सकता है [पैरा 16]।*

(ट) ***एम्ब्रोसिया कॉर्नर हाउस प्राइवेट लिमिटेड बनाम हैंग्रो एस फूड्स, 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन डेल 517***

खामियां: *दिल्ली उच्च न्यायालय (मूल पक्ष) नियम, 2018 में निर्धारित अनुसार दस्तावेजों को एक अलग फ़ोल्डर में फाइल न करना [पैरा 19]।*

अवलोकन:

- *न्यायालय को प्रत्येक मामले के तथ्यों का आकलन करना चाहिए, जबकि फाइलिंग के मुद्दे को 'गैर-मौजूदा' माना जाना चाहिए [पैरा 18]।*

- *याचिकाकर्ता का आचरण स्पष्ट रूप से सीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 के अनुसार सीमा के प्रयोजनों के लिए न्यायालय के फिर से खुलने की तिथि पर अधिनियम की धारा 34 के तहत उचित याचिका दायर करने के उसके प्रयास को प्रमाणित करता है [पैरा 20]।*

(ठ) ***भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण बनाम पटेल-केएनआर (जेवी), मू.वि.या. (वाणि.) 516/2018, 23.02.2023 को तय हुआ***

खामियां: *अधिनिर्णय फाइल न करना, शपथ पत्र और सत्य कथन में रिक्त स्थान, और शपथ पत्र सत्यापित न होना।*

अवलोकन:

- *फाइलिंग के बारे में समग्र दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि याचिका पर पक्षकार या उसके अधिवक्ता के हस्ताक्षर होने के बावजूद क्या इसे अभी भी गैर-मौजूद फाइलिंग कहा जा सकता है [पैरा 16 - 18]।*

(ड़) ***स्टील स्ट्रिप्स व्हील्स लिमिटेड बनाम टाटा ऐग जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, आ.प्र.अ. (मूल पक्ष) (वाणि.) 178/2020, ने 06.02.2023 पर निर्णय लिया।***

खामियां: *दोष: सत्य कथन में रिक्त स्थान, कोई सत्यापन नहीं, वकालतनामा ठीक से निष्पादित नहीं किया गया (वेलफेयर स्टाम्प के बिना), कोई नामांकन संख्या नहीं, पक्षकारगण के ज्ञापन पर तिथियाँ, तत्काल आवेदन, नोटिस प्रस्ताव आदि सभी एक दूसरे से अलग।*

अवलोकन:

- *वकालतनामा में कथित रिक्त स्थान नहीं थे और अपेक्षित जानकारी भरी गई थी; एकमात्र दोष जो रह गया था वह सत्य कथन के पैरा 6 में रिक्त स्थान था; इसलिए, फाइल को गैर-मौजूदा नहीं कहा जा सकता है। हालांकि, याचिकाकर्ता की लापरवाही के कारण देरी हुई, इसलिए, लागत लगाई गई और फिर से फाइल करने में देरी को माफ कर दिया गया [पैरा 8.1-11]।*

(ढ) ***वायसराय इंजीनियरिंग बनाम स्मिथ डिटेक्शन वीकॉन सिस्टम्स प्राइवेट लिमिटेड, मू.वि.या. (वाणि.) 302 ऑफ 2019, 04.12.2023 को तय हुआ***

खामियां:

- *पहले याचिका का गलत प्रारूप दायर किया गया था। बाद में, 174 पृष्ठ बिना बुकमार्क किए और अधूरे पृष्ठांकन के साथ फाइल किए गए।*

- *शपथपत्र और सत्य कथन को सत्यापित नहीं किया गया।*

- *इसके बाद, पृष्ठों की संख्या में वृद्धि हुई, जिसके बारे में याचिकाकर्ता ने बताया कि यह टीडीएस प्रमाणपत्र जैसे दस्तावेजों की सत्य-टाइप की गई प्रतियों को फाइल करने के कारण हुआ।*

(छ) इस बात पर जोर दिया गया कि अधिनिर्णय फाइल न करना कोई सुधार योग्य दोष नहीं है और केवल इसी आधार पर, 12.11.2018 को गैर मौजूद माना जाना चाहिए। इस संदर्भ में ***विद्या द्रोलिया एवं अन्य बनाम दुर्गा ट्रेडिंग कॉरपोरेशन, (2021) 2 एससीसी 1*** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया गया, जहां सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अधिनिर्णय पर आपत्ति करने का इरादा रखने वाले पक्षकार को धारा 34(1) के तहत एक आवेदन फाइल करना आवश्यक है, जिसमें अधिनिर्णय की प्रति के साथ आपत्तियां दर्शाई गई हों और चुनौती के आधारों को इंगित करते हुए ऐसी पूरी याचिका 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित समय के भीतर फाइल की जानी आवश्यक है। इस न्यायालय की दो खंड न्यायपीठों के ***भारत संघ बनाम पैनेसिया बायोटेक लिमिटेड, 2023 एससीसी***

ऑनलाइन डेल 8491 और प्लेनेटकास्ट टेक्नोलॉजीज लिमिटेड (पूर्वोक्त) के निर्णयों का भी संदर्भ दिया गया।

(ज) याचिकाकर्ता का यह तर्क कि प्रत्यर्थी द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, वे गलत हैं क्योंकि ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त)*** में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा दिए गए पिछले निर्णय पर विचार नहीं किया गया था, गलत है। उक्त निर्णय में, इस न्यायालय ने पाया कि फाइल करने में देरी हुई क्योंकि अल्पमत अधिनिर्णय बाद में पारित किया गया था और इसलिए, याचिकाकर्ता को यह आभास था कि परिसीमा शुरू नहीं हुई थी, लेकिन जब उसे सही सलाह दी गई, तो उसने न्यायालय से संपर्क किया और यथाशीघ्र, पूरी लगन से याचिका दायर की। इसके अलावा, फाइल करने की अवधि 03 महीने 30 दिन की वैधानिक अवधि से अधिक नहीं थी। याचिकाकर्ता का यह तर्क भी गलत है कि ***विद्या द्रोलिया (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियां वर्तमान मामले पर लागू नहीं होंगी क्योंकि वे एक अलग तथ्यात्मक परिदृश्य में दी गई थीं और/या निर्णय 'गैर-मध्यस्थता विवाद' के संदर्भ में था। यह स्थापित कानून है कि सर्वोच्च न्यायालय का आदेश भी निचली न्यायलय पर बाध्यकारी है। इस प्रस्ताव के लिए, इस संदर्भ में ***लार्सन एंड टुब्रो लिमिटेड बनाम एक्सपीरियन डेवलपर्स प्राइवेट लिमिटेड व अन्य, 2019 एससीसी ऑनलाइन डेल 11549*** में इस न्यायालय के निर्णय को उद्धृत किया गया। ***एम्ब्रोसिया कॉर्नर (पूर्वोक्त)*** में दिया गया निर्णय याचिकाकर्ता की सहायता नहीं कर सकता, क्योंकि उक्त मामले में न्यायालय ने तथ्य के रूप में पाया कि याचिकाकर्ता ने आक्षेपित अधिनिर्णय की प्रति सहित अपेक्षित दस्तावेज फाइल किए थे, लेकिन अनजाने में उसी फोल्डर में, जो दिल्ली उच्च न्यायालय (मूल पक्ष) नियम, 2018 के विरुद्ध था, जिसके अनुसार दस्तावेजों को एक अलग फोल्डर में फाइल किया जाना आवश्यक है।

<u>प्रारंभिक आपत्ति के जवाब में याचिकाकर्ता की ओर से दलीलें:</u>

(क) यह तर्क देना गलत है कि मध्यस्थता अधिनिर्णय पर आपत्तियां दर्ज करने के लिए 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित 3 महीने की सीमा 27.07.2018 को शुरू हुई और इसके परिणामस्वरूप, समय बाधित हो गया है। 27.07.2018 को, आईसीसी द्वारा दिनांक 20.07.2018 के अधिनिर्णय की 'शालीनता प्रति' भेजी गई थी। ई-मेल में कहा गया है कि शालीनता प्रति प्राप्त होने से आईसीसी नियमों के तहत समय सीमा लागू नहीं होगी। आईसीसी नियमों के अनुच्छेद 34 के सहपठित आईसीसी नोट 140 और 141 के तहत अधिनिर्णय की अधिसूचना जारी की गई थी। नोट 141 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि *"अधिनिर्णय, परिशिष्ट और निर्णयों की पीडीएफ हस्ताक्षरित मूल प्रति की शालीनता प्रति पक्षकारगण को ईमेल द्वारा भेजी जाएगी। ई-मेल द्वारा शालीनता प्रति भेजने से आईसीसी मध्यस्थता नियमों के तहत कोई भी समय सीमा लागू नहीं होती है।"* यदि प्रत्यर्थी का तर्क स्वीकार कर लिया जाता है, तो यह नोट 140/141 को निरर्थक बना देगा। प्रत्यर्थी द्वारा आईसीसी नियमों के अनुच्छेद 3 और 23 पर भरोसा करना, यह तर्क देने के लिए कि याचिकाकर्ता को मध्यस्थता अधिनिर्णय उसी तारीख को प्राप्त हुआ था जिस दिन अधिकरण द्वारा शालीनता प्रति के साथ ई-मेल भेजा गया था, समान रूप से गलत है। ये अनुच्छेद दलीलों और सामान्य संचार से संबंधित हैं, न कि अधिनिर्णय की डिलीवरी से और अधिनिर्णय की अधिसूचना नोट 140 और 141 के अंतर्गत आती है। अनुच्छेद 34(1) पर भी गलत तरीके से भरोसा किया गया है क्योंकि यह अधिनिर्णय के 'मूलपाठ' की अधिसूचना निर्धारित करता है और मध्यस्थ अधिनिर्णय के वितरण के तरीके से निपटता नहीं है। इसमें प्रावधान है कि *'एक बार अधिनिर्णय दिए जाने के बाद, सचिवालय पक्षकारगण को मध्यस्थ अधिकरण द्वारा हस्ताक्षरित*

टेक्स को अधिसूचित करेगा, बशर्ते कि मध्यस्थता की लागत पक्षकारगण या उनमें से किसी एक द्वारा आईसीसी को पूरी तरह से चुका दी गई हो।' भाषा दर्शाती है कि पक्षकारगण को केवल मूलपाठ के बारे में जानकारी दी जाती है, अंतिम निर्णय के बारे में नहीं, ताकि वे मूलपाठ में सुधार, संशोधन और परिवर्तन प्रस्तावित कर सकें। 1996 अधिनियम की धारा 3 प्रत्यर्थी की सहायता नहीं करती है क्योंकि प्रावधान पक्षकारगण के बीच समझौते के अधीन हैं और दूसरी बात, यह सामान्य संचार से संबंधित है, जबकि अधिनिर्णय की डिलीवरी 1996 अधिनियम की धारा 31(5) द्वारा शासित होती है, जो यह निर्धारित करती है कि अधिनिर्णय दिए जाने के बाद, प्रत्येक पक्षकार को एक हस्ताक्षरित प्रति दी जाएगी। 1996 अधिनियम की धारा 3 और 31(5) के संयुक्त वाचन से पता चलता है कि अधिनिर्णय की डिलीवरी के संबंध में पक्षकारगण के बीच समझौते का एक प्रमुख प्रभाव होगा और इसलिए, जब आईसीसी नियम यह परिकल्पना और प्रावधान करते हैं कि शालीनता प्रति समय सीमा को ट्रिगर नहीं करेगी, तो इसका मतलब है और संकेत मिलता है कि धारा 31(5) के तहत अधिनिर्णय की डिलीवरी को मूल हस्ताक्षरित प्रति की डिलीवरी के रूप में समझा जाना चाहिए न कि शालीनता प्रति के रूप में। धारा 31(5) की व्याख्या इस अर्थ में नहीं की जा सकती है कि अधिनिर्णय के पक्षकार को दी गई अधिनिर्णय की किसी भी तरह की प्रति को तामील के रूप में माना जाएगा। ***महाराष्ट्र राज्य व अन्य बनाम आर्क बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड, (2011) 4 एससीसी 616 में,*** सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका सीमा के भीतर थी, भले ही याचिकाकर्ता के पास एक साल पहले अधिनिर्णय की फोटो कॉपी उपलब्ध थी।

(ख)प्रत्यर्थी का तर्क, यदि स्वीकार कर लिया जाता है, तो कानून में अनिश्चित स्थिति पैदा हो जाएगी। आईसीसी नियमों को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि शालीनता प्रति आईसीसी नियमों या 1996 अधिनियम की धारा 33 के तहत अधिनिर्णय में त्रुटियों आदि के सुधार के लिए मध्यस्थ अधिकरण में आवेदन करने के लिए समयसीमा को ट्रिगर नहीं करेगी और यह स्थिति निर्विवाद है। इस परिदृश्य में, यह अकल्पनीय है कि शालीनता प्रति की प्राप्ति 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत अधिनिर्णय के खिलाफ आपत्तियां दर्ज करने के लिए सीमा की शुरुआत को ट्रिगर करेगी, जबकि पक्षकार किसी दिए गए मामले में अधिनिर्णय में सुधार के लिए आवेदन करने के लिए मूल प्रति प्राप्त करने की प्रतीक्षा करेगा। 1996 के अधिनियम की योजना के अनुसार, धारा 33 और 34 के तहत समय-सीमाएँ धारा 31(5) के तहत अधिनिर्णय की मूल हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त होने के बाद ही एक साथ शुरू होती हैं, जैसा कि इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने ***डीयूएसआईबी (पूर्वोक्त)*** में माना है और प्रासंगिक टिप्पणियाँ हैं *'.....इस आधार पर विचार-विमर्श के आधार पर, आयोग ने प्रस्ताव को नहीं अपनाया। अधिनियम की धारा 31(5) में भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया था, जहां मध्यस्थता निर्णय तब बाध्यकारी हो जाता है जब पक्षकार को निर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त हो जाती है और वही रसीद धारा 33(1), (4) और 34(3) के प्रयोजनों के लिए प्रासंगिक हो जाती है... ..."*

(ग) प्रत्यर्थी का यह तर्क सही नहीं है कि एक बार अधिनिर्णय पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद, मध्यस्थता करने वाली संस्था के नियम, वर्तमान मामले में आईसीसी नियम, लागू नहीं होंगे और 1996 के अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे। 1996 के अधिनियम में ही यह प्रावधान है कि अधिनिर्णय दिए जाने के बाद, हस्ताक्षरित प्रति धारा 31(5) के तहत प्रत्येक पक्षकार को सौंपी जाएगी। धारा 32 कार्यवाही

की समाप्ति से संबंधित है और धारा 31 के तहत पूरी प्रक्रिया पूरी होने पर लागू होती है। ***भारत संघ बनाम टेक्को त्रिची इंजीनियर्स एंड कॉन्ट्रैक्टर्स, (2005) 4 एससीसी 239*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि धारा 31(5) के तहत मध्यस्थ अधिनिर्णय की डिलीवरी महज औपचारिकता नहीं है। यहां तक कि धारा 32(1) भी धारा 32(3) के अधीन है और इसलिए, केवल अधिनिर्णय पर हस्ताक्षर करने से मध्यस्थता कार्यवाही समाप्त नहीं होती है। वर्तमान मामले में, पक्षकारगण ने स्पष्ट रूप से सहमति व्यक्त की थी कि मध्यस्थता आईसीसी नियमों द्वारा शासित होगी और धारा 32 के तहत मध्यस्थता की समाप्ति तक, जो चरण बाद में आएगा, अधिनिर्णय वितरण सहित सभी संबंधित पहलुओं को नियंत्रित करना जारी रखेगा। इस मामले में शामिल प्रश्न पर आईसीसी नियमों और 1996 अधिनियम के प्रावधानों के बीच कोई असंगति नहीं है, अर्थात क्या अधिनिर्णय की सौजन्य प्रति ने 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत सीमा अवधि की शुरुआत की। इसलिए वर्तमान याचिका दायर करने की परिसीमा 27.07.2018 को शुरू नहीं हुई।

(घ) पक्षकार स्वायत्तता मध्यस्थता का सर्वव्यापी सिद्धांत है और इसे 1996 अधिनियम की धारा 2(6) में स्पष्ट किया गया है। यह प्रावधान पक्षकारगण को प्रासंगिक कानून और प्रक्रिया निर्धारित करने की अनुमति देता है जो मध्यस्थता को नियंत्रित करेगी। वर्तमान मामले में, पक्षकारगण ने सहमति व्यक्त की थी कि धारा 32 के तहत कार्यवाही समाप्त होने तक मध्यस्थता आईसीसी नियमों द्वारा शासित होगी। ***ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम एफकॉन्स गुनानुसा जेवी, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1122*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने फिर से कहा कि पक्षकार स्वायत्तता मध्यस्थता के लिए एक प्रमुख सिद्धांत है।

(ड) अन्यथा भी, ई-मेल द्वारा अधिनिर्णय की तामील 1996 अधिनियम की धारा 31(5) के अनुपालन के बराबर नहीं होगी। यदि विधानमंडल ने एक स्कैन की गई/छायाप्रति/ई-मेल प्रति भेजने की परिकल्पना की होती, तो 'हस्ताक्षरित प्रति' अभिव्यक्ति का उपयोग नहीं किया जाता और केवल 'प्रतिलिपि' शब्द को धारा 31(5) में स्थान मिलता। उदाहरण के लिए, हस्ताक्षरित चेक की स्कैन की गई प्रति हस्ताक्षरित चेक नहीं है। असंशोधित धारा 7(4) में निम्नलिखित तरीके से मध्यस्थता समझौते के निष्पादन का प्रावधान है:-

> *"7(4). मध्यस्थता समझौता लिखित होता है यदि यह निम्नलिखित में निहित है – (क) पक्षकारगण द्वारा हस्ताक्षरित एक दस्तावेज; (ख) पत्रों, टेलेक्स, टेलीग्राम या दूरसंचार के अन्य साधनों का आदान-प्रदान जो समझौते का अभिलेख प्रदान करते हैं।"*

विधानमंडल ने वर्ष 2015 में धारा 7(4) में संशोधन किया, जो अब इस प्रकार है:-

> *"7(4). मध्यस्थता समझौता लिखित होता है यदि यह निम्नलिखित में निहित है - (क) पक्षकारगण द्वारा हस्ताक्षरित एक दस्तावेज; (ख) पत्रों, टेलेक्स, टेलीग्राम या दूरसंचार के अन्य साधनों (इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से संचार सहित) का आदान-प्रदान जो समझौते का अभिलेख प्रदान करता है।"*

संशोधन के अनुसार, 'इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से संचार' अब मध्यस्थता समझौता होगा और यदि विधानमंडल का इरादा था कि अधिनिर्णय की डिलीवरी इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से की जा सकती है, तो धारा 31(5) में संशोधन किया जाना चाहिए था, जो नहीं किया गया। कानून अब तक इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से संचार को अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति की डिलीवरी के स्वीकृत तरीके के रूप में मान्यता नहीं देता है। [संदर्भ ***जी. नारायणस्वामी बनाम जी. पन्नीरसेल्वम और अन्य, (1972) 3 एससीसी 717]।*** इस न्यायालय के लिए इलेक्ट्रॉनिक तरीके से अधिनिर्णय की डिलीवरी को कानूनी रूप से स्वीकार्य तरीके के रूप में

स्वीकार करना उचित नहीं है क्योंकि ऐसा करना धारा 31(5) में संशोधन करने के समान होगा, जिसे विधानमंडल ने नहीं करने का निर्णय किया।

(च) प्रत्यर्थी द्वारा ***आईमैक्स कॉरपोरेशन (पूर्वोक्त)*** के निर्णय पर भरोसा करना गलत है, क्योंकि उक्त मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि चूंकि मध्यस्थता का स्थान लंदन था, इसलिए भारत में अधिनिर्णय पर आपत्तियां दायर नहीं की जा सकतीं। यह निर्णय इस प्रस्ताव पर लागू नहीं होता कि अधिनिर्णय पर हस्ताक्षर करने के बाद आईसीसी नियम लागू नहीं होंगे। ***हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम दिल्ली ट्रांसपोर्ट कॉर्पोरेशन, 2021 एससीसी ऑनलाइन डेल 3189*** में दिया गया निर्णय प्रत्यर्थी के लिए कोई सहायक नहीं है क्योंकि यह आईसीसी नियमों के अंतर्गत नहीं आता है; इसमें कोई कानूनी सिद्धांत नहीं दिया गया है कि ई-मेल द्वारा अधिनिर्णय भेजना धारा 31(5) का पर्याप्त अनुपालन है; और यह घोर लापरवाही का मामला था, जहां धारा 34 याचिका हस्ताक्षरित प्रति कोरियर किए जाने के छह महीने बाद और ई-मेल प्रति भेजे जाने के 9 महीने बाद दायर की गई थी। ***नेशनल एग्रीकल्चरल कोऑपरेटिव मार्केटिंग फेडरेशन ऑफ इंडियन लिमिटेड (पूर्वोक्त)*** में दिया गया निर्णय प्रत्यर्थी के खिलाफ है। उक्त मामला आईसीए नियम, 1968 के तहत मध्यस्थता से संबंधित था, जिसमें प्रावधान था कि निर्णय दिए जाने के बाद रजिस्ट्रार, पंजीकृत डाक द्वारा पक्षकारगण को निर्णय की एक सत्य प्रति उपलब्ध कराएगा। तदनुसार, आईसीए ने रजिस्ट्रार, आईसीए द्वारा हस्ताक्षरित एक कवरिंग पत्र के तहत अधिनिर्णय की प्रमाणित प्रति भेजी। याचिकाकर्ता ने इस प्रति पर कार्रवाई की और प्राप्ति की तिथि से लगभग 7 महीने बाद धारा 34 के तहत याचिका दायर की। इसी तरह, ***डीयूएसआईबी (पूर्वोक्त)*** के तहत मामला आईसीसी नियमों के तहत नहीं था। निर्णय की हार्ड कॉपी मध्यस्थ द्वारा भेजी गई

थी, जिसके प्रत्येक पृष्ठ पर मध्यस्थ के नाम के साथ उनकी मुहर लगी थी और कवरिंग लेटर पर मध्यस्थ द्वारा मूल रूप से हस्ताक्षर किए गए थे। मार्च, 2016 में यह निर्णय प्राप्त होने के बाद, डीयूएसआईबी ने निर्णय के बारे में अनभिज्ञता का झूठा दावा किया और 5 महीने बाद 23.08.2016 को याचिका दायर की।

(छ) निर्णय की मूल प्रति याचिकाकर्ता के अधिवक्ता को पहली बार 02.08.2018 को प्राप्त हुई थी, लेकिन इसे 1996 अधिनियम की धारा 31(5) के तहत निर्णय की डिलीवरी नहीं माना जा सकता है, ताकि 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित परिसीमा अवधि की शुरुआत हो सके। ***बनारसी कृष्णा समिति एवं अन्य बनाम कर्मयोगी शेल्टर्स प्राइवेट लिमिटेड, (2012) 9 एससीसी 496*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि अधिवक्ता द्वारा अधिनिर्णय की प्राप्ति उचित अनुपालन नहीं है और हस्ताक्षरित अधिनिर्णय को मध्यस्थता समझौते के पक्षकार को अवश्य दिया जाना चाहिए। पक्षकार का अर्थ होगा वह पक्षकार जिसने संविदा निष्पादित किया हो और जो मध्यस्थता समझौते का पक्षकार हो। ***बनारसी कृष्णा (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

> *"15. ... .अभिव्यक्ति "पक्षकार", जैसा कि 1996 अधिनियम की धारा 2(1)(एच) में परिभाषित किया गया है, स्पष्ट रूप से उस व्यक्ति को इंगित करता है जो मध्यस्थता समझौते का पक्षकार है। उक्त परिभाषा किसी भी तरह से इस तरह के समझौते के पक्षकार के प्रतिनिधि को शामिल करने के लिए योग्य नहीं है। इसलिए, 1996 अधिनियम की धारा 31(5) और धारा 34(2) में किए गए किसी भी संदर्भ का अर्थ केवल पक्षकार स्वयं हो सकता है, न कि उसके प्रतिनिधि या वकालतनामा के आधार पर कार्य करने के लिए सशक्त अधिवक्ता। ऐसी परिस्थितियों में, धारा 31(5) के उचित अनुपालन का अर्थ होगा मध्यस्थता अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति स्वयं पक्षकार को सौंपना, न कि उसके अधिवक्ता को, जो संबंधित पक्षकार को उक्त अधिनियम की धारा 34(3) के तहत कार्रवाई करने का अधिकार देता है।"*

टेक्को त्रिची (पूर्वोक्त) में, सर्वोच्च न्यायालय ने एक पक्षकार अर्थात दक्षिणी रेलवे के संदर्भ में यह अभिनिर्धारित किया कि 1996 अधिनियम की धारा 2(ज) में परिभाषित 'पक्षकार' शब्द का अर्थ 'मध्यस्थता समझौते का पक्षकार' होगा तथा महाप्रबंधक को अधिनिर्णय की तामील परिसीमा का प्रारंभिक बिंदु नहीं होगी, क्योंकि यह मुख्य अभियंता था जिसने संविदा निष्पादित किया था तथा वह समझौते का पक्षकार था। वर्तमान मामला सेल से संबंधित है, जिसके देश भर में इस्पात संयंत्र हैं, जिनमें से एक बीएसपी है। बीएसपी 31.07.2007 के संविदा और संविदा में निहित मध्यस्थता खंड/समझौते का नियोक्ता और पक्षकार है और साथ ही उस पर हस्ताक्षरकर्ता भी है। प्लांट का नेतृत्व सीईओ करता है, जिसके पास यह निर्णय लेने का अधिकार है कि अधिनिर्णय को चुनौती दी जाए या स्वीकार किया जाए। समझौते पर बीएसपी के कार्यकारी निदेशक (परियोजनाएं) ने हस्ताक्षर किए थे, जो सीईओ के अधीन थे। धारा 2(ज) के अनुसार, बीएसपी अपने कार्यकारी निदेशक और सीईओ के माध्यम से मध्यस्थता समझौते का एक पक्ष था और इसलिए, धारा 31(5), 34(3) और 2(ज) के संयुक्त वाचन के साथ-साथ ***टेक्को त्रिची (पूर्वोक्त)*** और ***बनारसी कृष्णा (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों के अनुसार, जब अधिनिर्णय की मूल हस्ताक्षरित प्रति बीएसपी के ईडी/सीईओ द्वारा प्राप्त की गई, तभी धारा 34 के तहत अधिनिर्णय को चुनौती देने की परिसीमा शुरू हुई। वर्तमान मामले में निर्णय की हस्ताक्षरित प्रति अधिवक्ता को 02.08.2018 को प्राप्त हुई और उसके बाद याचिकाकर्ता के दिल्ली स्थित कॉर्पोरेट कार्यालय में उसके विधि विभाग को भेजी गई, जहां यह 06.08.2018 को प्राप्त हुई। विधि विभाग ने मध्यस्थता का संचालन करने वाले अधिवक्ता को राय देने के लिए बुलाया, जो 17.08.2018 को प्राप्त हुई। अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए राय का अध्ययन करने के बाद,

मूल अधिनिर्णय राय सहित अगस्त, 2018 के चौथे सप्ताह में बीएसपी को भेजा गया। सभी दस्तावेजों को 01.09.2018 को ईडी, बीएसपी के विचारार्थ तथा 05.09.2018 को सीईओ, बीएसपी, सक्षम प्राधिकारी के समक्ष अंतिम निर्णय लेने के लिए नोटशीट में रखा गया था, इसलिए, परिसीमा 01.09.2018 या 05.09.2018 को शुरू होगी। इस प्रकार 3 महीने की अवधि 02.12.2018 या 05.12.2018 को समाप्त होगी तथा चूंकि वर्तमान याचिका 12.11.2018 को दायर की गई थी, इसलिए यह परिसीमा के भीतर थी।

(ज) बिना किसी पूर्वाग्रह के, भले ही 06.08.2018 को विधि विभाग द्वारा अधिनिर्णय की प्राप्ति को परिसीमा का प्रारंभिक बिंदु माना जाता है, याचिका 3 महीने के भीतर दायर की गई थी। 3 महीने की अवधि 06.11.2018 को समाप्त हो गई, लेकिन उच्च न्यायालय 04.11.2018 से 11.11.2018 तक दिवाली अवकाश के कारण बंद था और याचिका फिर से खुलने की तिथि यानी 12.11.2018 को दायर की गई थी। 04.11.2018 से 11.12.2018 तक की अवधि, जब न्यायालय बंद था, को परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 के अनुसार बाहर रखा जाना है।

(झ) प्रत्यर्थी का तर्क कि 12.11.2018 को याचिका का प्रारंभिक फाइल होना गैर-मौजूदा था, एक से अधिक कारणों से स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रत्यर्थी ने नोटिस प्राप्त करने के डेढ़ साल बाद और जब याचिकाकर्ता द्वारा गुणागुण पर प्रारंभिक तर्क समाप्त हो गए, तो पहली बार गैर-मौजूद फाइल करने का मुद्दा उठाया, हालांकि याचिका के जवाब में इसका तर्क नहीं दिया गया। इसलिए, प्रत्यर्थी को यह तर्क उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। [संदर्भ: ***थोनिकुडम भगवती मिल्स बनाम रीना रवींद्र खोना और अन्य, 2007 एससीसी***

ऑनलाइन बॉम 448]। यह तब और भी अधिक है जब इस न्यायालय की रजिस्ट्री ने इस आपत्ति को इंगित नहीं किया।

(ञ) 12.11.2018 को फाइल किया गया आवेदन वैध था और रजिस्ट्री द्वारा चिह्नित सभी दोष सुधारे जा सकते थे। 12.11.2018 को दायर याचिका एक विस्तृत याचिका थी जिसमें याचिकाकर्ता के अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा याचिका के प्रत्येक पृष्ठ पर हस्ताक्षर किए गए थे। याचिका में सत्यापन शामिल था और उस पर अधिवक्ता द्वारा भी हस्ताक्षर किए गए थे और उसके साथ सत्य कथन और वकालतनामा भी था जो अधिवक्ता को याचिका दायर करने के लिए विधिवत अधिकृत करता था और उस पर पक्षकार द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। वकालतनामा की सभी आवश्यक आवश्यकताएं पूरी की गई थीं और केवल कल्याण स्टाम्प गायब था। इससे अधिवक्ता को दिया गया प्राधिकरण दोषपूर्ण नहीं हो जाता। [संदर्भ ***दिल्ली उच्च न्यायालय (मूल पक्ष) नियम, 2018, अध्याय V, नियम 1 और 3]***। सत्य कथन में कथित दोष सुधार योग्य था। वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 के माध्यम से सत्य कथन फाइल करने की आवश्यकता शुरू की गई थी, जिसके तहत वाणिज्यिक वाद पर इसकी प्रयोज्यता में सि.प्र.स. के कुछ प्रावधानों में संशोधन किया गया था। उक्त अधिनियम की धारा 16 के अनुसार उक्त अधिनियम की अनुसूची द्वारा संशोधित सी.पी.सी. केवल निर्दिष्ट मूल्य के वाणिज्यिक विवादों के संबंध में वाद पर लागू होती है तथा धारा 34 के अंतर्गत याचिका वाद नहीं है। [संदर्भ ***मेसर्स द्विवेदी एंड संस बनाम भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन एवं अन्य, सिविल रिट अधिकारिता मामला संख्या 11279/2019 पटना उच्च न्यायालय पैरा 20; मेसर्स जानकी स्पिनिंग मिल्स लिमिटेड बनाम के. गणेशन, 2018 एस.सी.सी. ऑनलाइन मैड 3420 पैरा 13;*** तथा ***लीलावती गुप्ता बनाम***

भारत संघ, एमएएनयू/जीएच/0070/2004 पैरा 14-16]। यद्यपि यह मान लिया जाए कि धारा 34 के अंतर्गत याचिका के साथ सत्य कथन फाइल करना अनिवार्य है, तो भी बताए गए दोष केवल प्रक्रियागत तथा सुधार योग्य थे। ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त)*** में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने माना कि यहां तक कि जहां आक्षेपित अधिनिर्णय, सत्य कथन, वकालतनामा और न्यायालय शुल्क याचिका के साथ फाइल नहीं किए गए थे, तो भी इससे याचिका गैर-मौजूद नहीं हो जाती। ***स्टील स्ट्राइप्स व्हील्स लिमिटेड (पूर्वोक्त)*** में इस न्यायालय की एक अन्य खंड न्यायपीठ ने भी यही विचार व्यक्त किया था। न्यायालय ने माना कि जब तक दस्तावेजों/याचिका का स्वामित्व स्थापित किया जा सकता है, तब तक फाइल करना गैर-मौजूद नहीं कहा जा सकता है और शेष दोष ठीक किए जा सकते हैं। फाइल करना गैर-मौजूद तभी होगा जब उस पर किसी भी पक्षकार या नियुक्त अधिवक्ता के हस्ताक्षर न हों। वर्तमान मामले में, याचिका पर अधिवक्ताओं और याचिकाकर्ता के अधिकृत प्रतिनिधि दोनों ने विधिवत हस्ताक्षर किए थे और स्वामित्व स्पष्ट रूप से पहचाना जा सकता था और फाइल करना वैध था।

(ट) ***विद्यावती गुप्ता एवं अन्य बनाम भक्ति हरि नायक एवं अन्य, (2006) 2 एससीसी 777*** में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि सि.प्र.स. के आदेश VI और VII की आवश्यकताएं निर्देशात्मक हैं, अनिवार्य नहीं हैं और प्रकृति में प्रक्रियात्मक हैं। इसलिए, शपथ पत्र, सत्यापन आदि के संबंध में कोई चूक शिकायत को अमान्य नहीं करेगी क्योंकि ये सुधार योग्य दोष हैं। [संदर्भ: ***अलका कसाना बनाम भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, 2015 एससीसी ऑनलाइन डेल 11455]। उदय शंकर त्रियार बनाम राम कलेवर प्रसाद सिंह एवं अन्य, (2006) 1 एससीसी 75*** में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि हस्ताक्षर के बिना

दायर अपील कोई दोष नहीं है, जिसके कारण अपील खारिज हो सकती है, जब तक कि नियम ऐसा न कहा जाए। हाल ही में, इस न्यायालय ने दोहराया है कि यदि प्रारंभिक फाइल में दोष प्रक्रियात्मक थे, तो केवल पृष्ठों की संख्या में वृद्धि से फाइल करना अस्वीकृत नहीं हो जाएगा और इसलिए, प्रत्यर्थी का यह तर्क भी कि फाइल करने की तिथि से अंतिम याचिका तक पृष्ठों की संख्या में वृद्धि हुई है, कोई महत्व नहीं रखता है। [संदर्भ: ***वायसराय इंजीनियरिंग (पूर्वोक्त)]***।

(ठ) यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि 12.11.2018 को फाइल करना गैर-मौजूद था और 06.12.2018 को फिर से फाइल किया गया था, जो सभी मामलों में उचित था, तो 01.09.2018/05.09.2018 से गणना करने पर 1-4 दिनों की देरी होगी या 06.08.2018 से गणना करने पर 23-29 दिनों की देरी होगी। दोनों परिदृश्यों में, देरी क्षम्य है क्योंकि यह 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के प्रावधान के तहत 30 दिनों की क्षम्य अवधि के भीतर आती है। सर्वोच्च न्यायालय ने व्याख्या की है और माना है कि धारा 34(3) में निर्धारित 3 महीने की अवधि 3 महीने है न कि 90 दिन। [संदर्भ। ***हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य बनाम हिमाचल टेक्नो इंजीनियर्स और अन्य, (2010) 12 एससीसी 210***]। याचिकाकर्ता ने 3 महीने के भीतर याचिका दायर करने में देरी के लिए पर्याप्त कारण बताते हुए एक विस्तृत शपथ पत्र दायर किया है और देरी को माफ किया जाना चाहिए। दिल्ली में विधि विभाग द्वारा 06.08.2018 को प्राप्त अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति कानूनी राय के लिए भेजी गई थी, जो 17.08.2018 को प्राप्त हुई और अधिनिर्णय और दस्तावेजों आदि का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद, मामला 01.09.2018 को ईडी के समक्ष और 05.09.2018 को सीईओ के समक्ष रखा गया। सीईओ ने उसी दिन अधिनिर्णय को चुनौती देने के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी। इसके बाद, अधिवक्तागण को नियुक्त किया गया और औपचारिकताएं

पूरी होने के बाद, अक्टूबर, 2018 के पहले सप्ताह में मामला अधिवक्तागण को सौंप दिया गया। फाइलें बहुत बड़ी थीं और उनमें हजारों पन्नों के दस्तावेज थे और नए अधिवक्ता को मामले को समझने और उनका अध्ययन करने में समय लगा। बीएसपी के संबंधित अधिकारियों को याचिका तैयार करने के लिए अधिवक्तागण के साथ सम्मेलन करने के लिए दिल्ली की कई यात्राएं करनी पड़ीं, क्योंकि विषय-वस्तु अत्यधिक तकनीकी प्रकृति की थी।

<u>याचिकाकर्ता की ओर से अधिनिर्णय के गुणागुण पर तर्क:</u>

(क) आक्षेपित अधिनिर्णय भारत की सार्वजनिक नीति के साथ टकराव में है, क्योंकि यह पक्षकारगण के बीच सहमत संविदा की शर्तों के विपरीत है, जिसमें अस्पष्ट कारणों और 'कोई सबूत नहीं' के आधार पर निष्कर्ष शामिल हैं और महत्वपूर्ण बात यह है कि अधिकरण ने पक्षकारगण के बीच संविदा को फिर से लिखा है। आक्षेपित अधिनिर्णय, जिसके तहत प्रत्यर्थी के पक्ष में अत्यधिक हर्जाना, भारी लागत और उच्च ब्याज दर दी गई है, सभी पहलुओं पर खारिज किए जाने योग्य है।

(ख) 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा 1996 के अधिनियम में संशोधन के अनुसार, निश्चित रूप से, अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित वर्तमान अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए 'पेटेंट अवैधता' का आधार अब उपलब्ध नहीं है, लेकिन एक मध्यस्थ अधिनिर्णय पूरी तरह से चुनौती से अछूता नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने ***सांगयोंग इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (एनएचएआई), (2019) 15 एससीसी 131*** में एक अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता अधिनिर्णय से निपटते समय, जहां अपीलार्थी कोरिया में पंजीकृत था, सार्वजनिक नीति के उल्लंघन के संबंध में

आपत्तियों की जांच और न्यायनिर्णयन की रूपरेखा और सीमाएं निर्धारित की हैं और 1996 के अधिनियम की धारा 34(2) के प्रावधानों की जांच करने के बाद निम्नानुसार माना है:-

*"**76.** हालांकि, जब भारत की सार्वजनिक नीति की बात आती है, तो "न्याय की सबसे बुनियादी धारणाओं" पर आधारित तर्क, यह स्पष्ट है कि यह आधार केवल बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में आकर्षित किया जा सकता है जब न्यायालय की अंतरात्मा न्याय की मौलिक धारणाओं या सिद्धांतों के उल्लंघन से आहत होती है। यह देखा जा सकता है कि समझौते द्वारा लागू किया गया सूत्र फरवरी 2013 तक लागू होता रहा - संक्षेप में, यह कहना सही नहीं है कि मंत्रालय द्वारा 1993-1994 से 2004-2005 तक आधार सूचकांक में किए गए परिवर्तन को देखते हुए समझौते के तहत सूत्र लागू नहीं किया जा सकता है। इसके अलावा, एक लिंकिंग फैक्टर को लागू करने के लिए, एक पक्षकार द्वारा एकतरफा जारी किया गया परिपत्र, संभवतः उस दूसरे पक्षकार की सहमति के बिना दूसरे पक्षकार को समझौते के लिए बाध्य नहीं कर सकता है। वास्तव में, परिपत्र में स्वयं स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह तब तक लागू नहीं हो सकता जब तक कि ठेकेदार यह वचनबद्धता/शपथपत्र प्रस्तुत न करें कि परिपत्र के तहत मूल्य समायोजन उन्हें स्वीकार्य है। हमने देखा है कि अपीलार्थी ने इस तरह का वचन केवल सशर्त रूप से और बिना किसी पूर्वाग्रह के दिया कि परिपत्र लागू नहीं होता है और लागू नहीं हो सकता है। इस मामले में, यह स्पष्ट है कि बहुमत के निर्णय ने उक्त एकपक्षीय परिपत्र को लागू करके और समझौते के तहत एक व्यावहारिक सूत्र को समझौते के विपरीत दूसरे सूत्र द्वारा प्रतिस्थापित करके पक्षकारगण के लिए एक नया संविदा बनाया है। इस मामले में, न्याय के एक मौलिक सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है, अर्थात, किसी संविदा में एकतरफा परिवर्धन या परिवर्तन कभी भी किसी अनिच्छुक पक्षकार पर नहीं थोपा जा सकता है, न ही समझौते का कोई पक्षकार दूसरे पक्षकार के साथ किए गए सौदे को पूरा करने के लिए उत्तरदायी हो सकता है। स्पष्ट रूप से, इस तरह का आचरण इस देश में अपनाए जाने वाले न्याय के मौलिक सिद्धांतों के विपरीत होगा, और इस न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोरता है। हालांकि, हम दोहराते हैं कि यह आधार केवल बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में उपलब्ध है, जैसे कि वर्तमान मामले में तथ्यात्मक स्थिति। किसी भी परिस्थिति में कोई भी न्यायालय इस आधार पर मध्यस्थ अधिनिर्णय में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है कि न्यायालय की राय में न्याय नहीं किया गया है। यह विवाद के गुणागुण में*

प्रवेश होगा जो, जैसा कि हमने देखा है, 1996 अधिनियम की धारा 34 के लोकाचार के विपरीत है, जैसा कि इस निर्णय में पहले उल्लेख किया गया है।"

(ग) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के अनुसार, यदि कोई आपत्तिकर्ता यह प्रदर्शित करने में सक्षम है कि मध्यस्थ अधिकरण ने संविदा से आगे बढ़कर एक नया संविदा बनाने के लिए शर्तें आयात की है, तो अधिनिर्णय को रद्द किया जा सकता है क्योंकि यह न्याय की सबसे बुनियादी धारणाओं का उल्लंघन होगा जो भारत की सार्वजनिक नीति के विपरीत है। ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में की गई टिप्पणियों की पुष्टि सर्वोच्च न्यायालय ने ***पीएसए एसआईसीएएल टर्मिनल्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम बोर्ड ऑफ़ ट्रस्टीज ऑफ वी.ओ. चिदंबरनार पोर्ट ट्रस्ट तूतीकोरिन व अन्य, 2021 एससीसी ऑनलाइन एससी 508 और इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड अपने वरिष्ठ प्रबंधक के माध्यम से बनाम श्री गणेश पेट्रोलियम राजगुरुनगर अपने स्वामी लक्ष्मण दगडू थिटे के माध्यम से, (2022) 4 एससीसी 463*** में की थी। इन सिद्धांतों को लागू करते हुए, इस न्यायालय ने ***जियोनप्रो पेट्रोलियम लिमिटेड बनाम जियोफिजिकल इंस्टीट्यूट ऑफ इज़राइल, 2020 एससीसी ऑनलाइन डेल 2500*** में एक अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द कर दिया, जहां मध्यस्थ अधिकरण ने संविदा को प्रभावी रूप से फिर से लिखा था। ***डायना टेक्नोलॉजीज प्राइवेट लिमिटेड बनाम क्रॉम्पटन ग्रीव्स लिमिटेड, (2019) 20 एससीसी 1*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि जो अधिनिर्णय अस्पष्ट तर्क पर आधारित है, वह सार्वजनिक नीति के विपरीत है। संक्षेप में, यदि मध्यस्थ अधिकरण पक्षकारगण के बीच एक नया संविदा बनाता है; न्याय के मूल सिद्धांतों का उल्लंघन होता है; यदि किसी संविदा में कोई एकतरफा जोड़ या परिवर्तन किसी अनिच्छुक पक्षकार पर थोपा जाता है;

यदि समझौते के किसी पक्षकार को दूसरे पक्षकार के साथ नहीं किए गए सौदे को निष्पादित करने के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है; यदि यह न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोरता है; यदि यह न्याय की बुनियादी धारणाओं के विरुद्ध है और मध्यस्थ अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाता है; और यह अस्पष्ट तर्क पर आधारित है। वर्तमान मामले में, आक्षेपित अधिनिर्णय इनमें से अधिकांश विसंगतियों से ग्रस्त है और इसे रद्द किया जाना चाहिए।

(घ) अधिकरण ने वस्तुतः पक्षकारगण के बीच संविदा की शर्तों को फिर से लिखा है। यह संविदा "तकनीकी विनिर्देश संख्या एमईसी.वीसी22.02.06.यू.000.8001, आर-1 नवंबर, 2006 के अनुसार सिविल फाउंडेशन (पैकेज-I) के साथ एयर टर्बो कंप्रेसर, नाइट्रोजन टर्बो कंप्रेसर, एलआईएन/एलएआर टैंक सहित 650 टीपीडी एएसयू-4 की स्थापना" के लिए था, जिसे विभाज्य टर्नकी आधार पर निष्पादित किया जाना था। एनआईटी जारी की गई थी, जिसमें टीएस सीवीसी दिशानिर्देशों के अनुसार प्रस्ताव आमंत्रित किए गए थे, जो याचिकाकर्ता को पीएसयू होने के नाते बाध्य करते हैं और संविदा की शर्तों में छूट/संशोधन की अनुमति नहीं देते हैं, जिसका संविदा के निष्पादन के बाद वित्तीय प्रभाव पड़ता है, क्योंकि यह बोलीदाताओं को समान अवसर से वंचित करता है। तदनुसार, बोलीदाताओं से अनुरोध किया गया था कि वे अपने प्रस्तावों सहित विचलन (यदि कोई हो) का प्रस्ताव करें और यह खंड 03.01 में स्पष्ट रूप से निर्धारित किया गया था। प्रत्यर्थी ने पुष्टि की थी कि वह तकनीकी विनिर्देशों से विचलन की मांग नहीं कर रहा था और यह भी पुष्टि की थी कि याचिकाकर्ता उसके लिए एक रणनीतिक ग्राहक था और संभवतः इस कारण से, प्रत्यर्थी ने बेहद कम कीमत और बिजली की खपत का आंकड़ा उद्धृत किया था।

(ड़) जी.सी.सी. के खंड 3.7 में प्रावधान है कि संविदा में कोई भी संशोधन या परिवर्तन तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक कि वह लिखित रूप में न हो और प्रत्येक पक्षकार के अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा हस्ताक्षरित न हो। संविदा के अनुच्छेद 13 में प्रावधान है कि संविदा में कोई भी संशोधन तब तक वैध नहीं होगा जब तक कि पक्षकार लिखित रूप में उस पर सहमत न हों और संविदा में संशोधन जारी न किया गया हो। संविदा के अनुच्छेद 1.2 में प्रावधान है कि संविदा में संविदा समझौता, परिशिष्ट, एस.सी.सी., जी.सी.सी., संविदा तकनीकी विनिर्देश, सामान्य तकनीकी विनिर्देश और संविदा कार्यों में सुरक्षा शामिल होगी। संविदा के तहत टी.एस. के खंड 03.01 के अनुसार, प्रत्यर्थी को सभी उपकरण और घटकों की आपूर्ति टी.एस. के अनुसार सख्ती से करनी थी और खंड 03.03 के अनुसार, प्रत्यर्थी से अपेक्षा की गई थी कि वह विनिर्देशों का अध्ययन करेगा और संयंत्र और उपकरण की कार्यशीलता के बारे में स्वयं को संतुष्ट करेगा। प्रत्यर्थी एएसयू स्थापित करने के व्यवसाय में है और इसलिए वह बाजार में उपलब्ध मानक समाधानों, जिन विक्रेताओं से वह उपकरण खरीद सकता है, तथा मूल्य निहितार्थों से भली-भाँति परिचित है। इसलिए, प्रत्यर्थी को यथाशीघ्र विचलन के मुद्दों को उठाना तथा उन्हें प्रस्ताव में प्रस्तावित करना आवश्यक था, विशेष रूप से प्रत्यर्थी को विक्रेता के रूप में शामिल करने हेतु विचलन के रूप में उठाना आवश्यक था।

(च) प्रत्यर्थी संशोधनों का सुझाव देने के लिए टीएस के खंड 03.04 पर भरोसा नहीं कर सकता, जिसे वह खंड 03.01 के अनुसार प्रस्ताव के समय सुझा सकता था। टीएस का खंड 03.04, जिस पर प्रत्यर्थी और अधिकरण ने बहुत अधिक भरोसा किया है, प्रत्यर्थी को एक वैकल्पिक योजना/संयंत्र/उपकरण का संविदा करने की अनुमति देता है, हालांकि, यह इस शर्त के अधीन था कि संयंत्र के बेहतर

प्रदर्शन के लिए ऐसे संशोधन आवश्यक थे और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश प्रभावित नहीं हुए थे। इसके अतिरिक्त, इस संबंध में याचिकाकर्ता की पूर्व स्वीकृति लेना आवश्यक था।

(छ) अधिकरण द्वारा दिमाग का उपयोग न करना इस तथ्य से बड़ा है कि उसने सही खंड 03.04 पर विचार नहीं किया है, और आक्षेपित अधिनिर्णय के पैराग्राफ 10.32 में निकाला गया खंड एनआईटी में खंड है, जिसे बाद में टीएस में संशोधित किया गया था। कई अंतरों के साथ अंतिम संविदा सहित, सबसे महत्वपूर्ण शब्द *'निविदाकर्ता किसी भी विकल्प की पेशकश कर सकता है...'* को *'ठेकेदार किसी भी विकल्प का संविदा कर सकता है...'* से बदल दिया गया। इसलिए, संविदा के निष्पादन के पश्चात, प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित तथा याचिकाकर्ता द्वारा अनुमोदित कोई भी विकल्प संविदा का हिस्सा बनाया जाना चाहिए, जो वर्तमान मामले में नहीं हुआ, क्योंकि मांगे गए किसी भी संशोधन को कोई स्वीकृति नहीं दी गई, इसी प्रकार, अधिकरण द्वारा जिस खंड 06.02.07 पर भरोसा किया गया है, वह एनआईटी का है, न कि संविदा का।

(ज) अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया है कि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित संशोधन/विचलन को मंजूरी देने के लिए याचिकाकर्ता पर दायित्व था, जो खंड 03.04 की स्पष्ट भाषा के विपरीत है, इस निष्कर्ष को प्रस्तुत करके, अधिकरण ने पक्षकारगण के बीच संविदा को फिर से लिखा है और इसलिए, अधिनिर्णय भारत की सार्वजनिक नीति के साथ संघर्ष में है और इस प्रकार 1996 अधिनियम की धारा 34(2)(ख)(ii) के तहत हस्तक्षेप के लिए असुरक्षित है, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में अभिनिर्धारित किया है। खंड 03.04 याचिकाकर्ता को प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित किसी भी वैकल्पिक योजना या संशोधन को स्वीकार

करने के लिए बाध्य नहीं करता है और इसके बजाय याचिकाकर्ता को प्रस्तावों को स्वीकृत या अस्वीकृत करने का अधिकार देता है, जो खंड की भाषा से स्पष्ट है, जिसने प्रत्यर्थी को पूर्व अनुमोदन प्राप्त करने के लिए बाध्य किया है। यह एक स्थापित कानून है कि किसी संविदा को स्पष्ट अर्थ देने के लिए पढ़ा जाना चाहिए और अधिकरण ने खंड 03.04 की गलत व्याख्या की है, जिससे खंड का पूरा उद्देश्य और मंशा विफल हो गई है। ***[****संदर्भ:* ***नाभा पावर लिमिटेड (एनपीएल) बनाम पंजाब स्टेट पावर कॉरपोरेशन लिमिटेड (पीएसपीसीएल) व अन्य, (2018) 11 एससीसी 508 और स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम नोबल चार्टरिंग इंक, 2019 एससीसी ऑनलाइन डेल 7412]।***

(झ) अधिकरण ने निर्णय के पैराग्राफ 14.43 में उल्लेख किया है कि धारा 06.02.07 के तहत रखी गई सूची को धारा 03.04 के आधार पर संशोधित किया जा सकता है। यह निष्कर्ष संविदात्मक शर्तों की अनदेखी है। एनआईटी में टीएस के खंड 06.02.07 के तहत, यह उल्लेख किया गया था कि निविदाकर्ता प्रस्ताव में आवश्यक किसी भी विचलन को स्पष्ट करेगा, हालांकि, प्रत्यर्थी ने 25.02.2007 को आयोजित वाणिज्यिक बैठक में अपने प्रस्ताव में ऐसे किसी भी विचलन को स्पष्ट नहीं किया। संविदा समझौते का अनुच्छेद 7 और जी.सी.सी. का खंड 19.1 केवल संविदा के परिशिष्ट 6 में निर्दिष्ट उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं पर लागू होता है, न कि टी.एस. के खंड 06.02.07 में निर्दिष्ट लोगों पर और इसलिए, संविदा को अंतिम रूप दिए जाने के बाद, प्रत्यर्थी को केवल परिशिष्ट 6 में विक्रेताओं के लिए परिवर्धन का प्रस्ताव करने का अधिकार था, न कि खंड 06.02.07 के अंतर्गत आने वाले विक्रेताओं के लिए, अर्थात एच.टी. मोटर्स और टर्बो एक्सपैंडर्स हेतु। प्रस्तावित अतिरिक्त सुविधाएं याचिकाकर्ता द्वारा अनुमोदन के अधीन थीं और इसलिए, प्रत्यर्थी को अपने द्वारा चुने गए किसी भी विक्रेता को जोड़ने का

कोई अधिकार नहीं था और न ही याचिकाकर्ता ऐसे अतिरिक्त सुविधाओं को अनुमोदित करने के लिए बाध्य था। अनुच्छेद 7 और खंड 19.1 के तहत इस तरह के अतिरिक्त सुझाव देने की आवश्यकताओं में से एक यह थी कि प्रस्ताव पहले से ही बनाया जाना चाहिए ताकि सुविधाओं पर काम की प्रगति में बाधा न आए। हालांकि, प्रत्यर्थी द्वारा अतिरिक्त विक्रेताओं का प्रस्ताव 19.12.2008 को यानी संविदा में प्रवेश करने के 4½ महीने बाद किया गया था, जो कि संविदा की अवधि 24 महीने होने को देखते हुए एक बहुत बड़ी देरी थी। अधिकरण द्वारा अनुच्छेद 7 की भी अनदेखी की गई है।

(ञ) अधिकरण ने कंप्रेसर मोटर्स के संबंध में गलत निष्कर्ष दिया है, जिसे प्रत्यर्थी को प्रदान करना आवश्यक था और जिसके लिए खंड 06.02.02, 06.02.03, 06.02.09 और 06.04.02 में स्पष्ट रूप से टीएस प्रदान किए गए थे। विनिर्देशों में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि कंप्रेसर मोटर समकालिक होंगी। टीएस के खंड 03.01 के तहत, प्रत्यर्थी को विनिर्देशों के अनुसार सभी उपकरण और घटकों की आपूर्ति करने की आवश्यकता थी और खंड 03.03 के अनुसार, प्रत्यर्थी से अपेक्षा की गई थी कि उसने डिजाइन और अन्य विनिर्देशों का अध्ययन किया होगा और खंड 03.04 के अनुसार किसी भी वैकल्पिक प्रस्ताव में ऑफर सहित मूल्य परिवर्तन को इंगित करना आवश्यक था। 2007 में, प्रत्यर्थी ने अपनी बोली प्रस्तुत की और समकालिक मोटर प्रदान करने का ऑफर किया। निविदा के तकनीकी-वाणिज्यिक पहलुओं पर चर्चा करने के लिए 24/25.02.2007 को बैठक बुलाई गई थी, जिसमें प्रत्यर्थी की पुष्टि कि कोई विचलन प्रस्तावित नहीं किया गया था और इसकी सहमति थी कि एमएसी, बीएसी और एनटीसी के लिए मोटर सिंक्रोनस होंगे, दर्ज की गई थी। चूंकि ये कंप्रेसर मोटर एलडीआई थे, इसलिए समयसीमा को पूरा करने के लिए उन्हें पहले से ही ऑर्डर किया जाना

था। टीएस के खंड 06.02.01, 06.02.03 और 06.02.09 में स्पष्ट रूप से प्रावधान किया गया था कि मोटर क्रमशः एमएसी, बीएसी और एनटीसी के लिए सिंक्रोनस होंगे। 23.11.2007 को, एटलस कोप्को, जो खंड 06.02.07 के तहत कंप्रेसर के लिए पसंदीदा निर्माताओं में से एक है, ने याचिकाकर्ता को बीएसी के साथ सिंक्रोनस मोटर की तकनीकी व्यवहार्यता और विभिन्न परियोजनाओं के लिए आपूर्तिकर्ताओं के रूप में उनके पिछले अनुभव के बारे में पुष्टि भेजी। 04.12.2007 को, प्रत्यर्थी ने कंप्रेसर के लिए डेटा शीट मेकॉन को भेजी, जहां उन्होंने एसिंक्रोनस इंडक्शन मोटर का सुझाव दिया, जिस पर मेकॉन ने 13.12.2007 को जवाब दिया, जिसमें 18.12.2007 को लिए गए अपने रुख को दोहराया कि एसिंक्रोनस मोटर स्वीकार्य नहीं होंगे। उसी दिन, एटलस कोप्को ने याचिकाकर्ता को एक और ईमेल भेजा, जिसमें सिंक्रोनस मोटर के साथ बीएसी के लिए एक संदर्भ सूची साझा की गई। 19.12.2007 को, प्रत्यर्थी ने सिंक्रोनस मोटर के साथ एमएसी ऑर्डर करने का ऑफर किया गया था, जिसमें कहा गया कि यह अधिक महंगा था, लेकिन यह बनाए रखा कि परियोजना के लिए एसिंक्रोनस मोटर का उपयोग बिना किसी समस्या के किया जा सकता है। 20/21.12.2007 को याचिकाकर्ता और प्रत्यर्थी के बीच हुई बैठकों में, प्रत्यर्थी ने प्रिवोड नामक एक अन्य विक्रेता द्वारा प्रदान की जाने वाली सिंक्रोनस मोटरों की अनुकूलता सुनिश्चित करने का बीड़ा उठाया। मेकॉन ने 27.12.2007 को प्रिवोड को बीएसी और एनटीसी के लिए सिंक्रोनस मोटर के लिए एक अनुमोदित विक्रेता के रूप में पुष्टि की, बशर्ते कंप्रेसर निर्माता कंप्रेसर के साथ इन मोटरों की अनुकूलता की पुष्टि करें और 31.12.2007 को याचिकाकर्ता ने प्रिवोड को भी मंजूरी दे दी। 10.01.2008 को, प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता को एक पत्र भेजा जिसमें कहा गया कि परियोजना के निष्पादन के दौरान कंप्रेसर और मोटरों की

अनुकूलता प्राप्त कर ली जाएगी और इसके बाद 30.01.2008 को एक पत्र भेजा जिसमें कहा गया कि अनुकूलता के मुद्दे को हल करने के लिए समय की आवश्यकता है। हालांकि, उसके बाद कुछ नहीं किया गया और प्रत्यर्थी द्वारा कोई पुष्टि नहीं की गई और एलडीआई यानी कंप्रेसर के लिए ऑर्डर देने में पूरी तरह से विफलता रही, जिससे याचिकाकर्ता के पास 01.07.2008 को संविदा समाप्त करने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा।

(ट) अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि याचिकाकर्ता द्वारा प्रत्यर्थी के एसिंक्रोनस मोटरों के प्रस्ताव को अस्वीकार करना गलत था। अधिकरण को प्रस्तावित संशोधनों के अनुसार नहीं बल्कि संविदा की शर्तों के भीतर संबंधित दायित्वों का निर्णय लेना था। इस बात पर विचार नहीं किया गया कि प्रस्तावित विचलन संयंत्र और उपकरणों के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक थे या नहीं और क्या वे समग्र विनिर्देशों और विवरणों को प्रभावित करते हैं, जो खंड 03.04 का आवश्यक घटक था। अधिकरण द्वारा निकाला गया निष्कर्ष कि एसिंक्रोनस मोटर एक मानक समाधान थे, तकनीकी रूप से बेहतर, संसाधन के लिए आसान, अधिक मजबूत और विश्वसनीय, आदि अभिलेख पर किसी साक्ष्य या दस्तावेज़ पर आधारित नहीं थे। इसके अलावा, एक बार जब संविदा में एमएसी, बीएसी और एनटीसी के लिए सिंक्रोनस मोटर्स का प्रावधान किया गया, तो ट्रिब्यूनल इस सवाल पर नहीं जा सकता था कि वे एक गैर-मानक समाधान थे या नहीं। अधिकरण ने इस बात को नज़रअंदाज़ कर दिया कि प्रत्यर्थी के गवाह ने सहमति जताई थी कि संविदा की तकनीकी आवश्यकता सिंक्रोनस मोटर थी और यही कारण है कि सिंक्रोनस मोटरों के लिए प्रिवोड को अतिरिक्त विक्रेता के रूप में सुझाया गया था। प्रत्यर्थी के विशेषज्ञ गवाह ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि सिंक्रोनस मोटर एसिंक्रोनस इंडक्शन मोटर की तुलना में अधिक कुशल हैं और

बहुत कम गति और बहुत अधिक गति पर विद्युत ऊर्जा को यांत्रिक ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं। वास्तव में, टीएस का खंड 03.04 सिंक्रोनस मोटर्स के मामले में लागू नहीं होता क्योंकि एकमात्र प्रश्न एक अलग विक्रेता प्रिवोड का था, जिसका सुझाव प्रत्यर्थी ने 19.12.2007 को दिया था, जिसे याचिकाकर्ता ने तुरंत मंजूरी दे दी थी और इसलिए, अधिकरण का यह निष्कर्ष कि प्रिवोड को मंजूरी मिलने के बाद हुई देरी, संगतता की पुष्टि के अधीन, प्रत्यर्थी द्वारा एलडीआई का आदेश देने के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, पूरी तरह से गलत है।

(ठ) अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकालने में गलती की कि 4 घंटे के अधिशोषण चक्र समय सहित प्रस्तावित पीपीयू संविदा से विचलन नहीं था। यह निष्कर्ष न केवल टीएस के खंड 06.02.03 की स्पष्ट भाषा के विपरीत है, बल्कि प्रत्यर्थी के अपने प्रस्ताव और उसके बाद के लिखित स्पष्टीकरण/पुष्टिकरण के भी विपरीत है। खंड 06.02.03 में कहीं भी यह निर्दिष्ट नहीं किया गया है कि 'एडसोर्बर' के विरुद्ध 8 घंटे के चक्र में 4 घंटे का एडसोर्प्शन और उसके बाद 4 घंटे का पुनरुत्पादन शामिल है, जैसा कि ट्रिब्यूनल द्वारा पैराग्राफ 14.47 में गलत तरीके से देखा गया है। अधिनिर्णय के अनुच्छेद 14.46 में यह उल्लेख किए जाने के बावजूद कि एनआईटी के साथ परिचालित टीएस में चक्र समय निर्दिष्ट नहीं किया गया था, अधिकरण यह विचार करने में विफल रहा कि प्रत्यर्थी के तकनीकी प्रस्ताव के अनुसरण में संविदा के अंतर्गत खंड 06.02.03 को विशेष रूप से शामिल किया गया था। दिनांक 24-25.02.2007 की बैठक के कार्यवृत्त तथा प्रत्यर्थी के स्वयं के पत्र दिनांक 06.06.2007 में स्पष्ट रूप से तथा निस्संदेह रूप से दर्शाया गया है कि खंड 06.02.03 में केवल 8 घंटे के एडसोर्प्शन चक्र वाले पीपीयू की परिकल्पना की गई है। अधिकरण ने अधिनिर्णय के पैराग्राफ 14.61 में 8 घंटे के अवशोषण के लिए प्रत्यर्थी के प्रस्ताव के संबंध में उसकी

दलील को स्पष्ट रूप से खारिज कर दिया है, जिसमें कहा गया है कि संविदा को प्राथमिकता दी जाएगी, फिर भी खंड 06.02.03 के तहत टीएस की सराहना करने में विफल रहा, जिसमें अवशोषण के लिए 8 घंटे का चक्र प्रदान किया गया था और प्रत्यर्थी के पक्ष में निर्णय सुनाया गया। अधिकरण द्वारा प्रत्यर्थी के गवाहों के परिसाक्ष्य की परिसाक्ष्य का सही ढंग से मूल्यांकन नहीं किया गया है। प्रत्यर्थी की गवाह सुश्री तारासोवा ने अपनी प्रतिपरीक्षा में इस बात पर सहमति जताई कि 8 घंटे के अवशोषण के समय वाला पीपीयू 4 घंटे के चक्र वाले पीपीयू से अधिक महंगा होगा और इसलिए, यह स्पष्ट था कि प्रत्यर्थी ने अपनी सुविधा और कम लागत के लिए विचलन का प्रस्ताव रखा था। प्रत्यर्थी के विशेषज्ञ गवाह श्री क्रिसी जोन्स ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि पीपीयू में अवशोषण के चक्रों का इकाई के वास्तविक प्रदर्शन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और उन्होंने कहा कि 4 घंटे का अवशोषण का चक्र समय एक सामान्य एएसयू में अपेक्षित सीमा के भीतर है जो अच्छे इंजीनियरिंग डिजाइन के अनुरूप है और परिवहन के लिए आसान है, जो कारक खंड 03.04 से पूरी तरह से अलग थे।

(ड़) अधिकरण ने याचिकाकर्ता के गवाह श्री नेहरू की खंडनात्मक परिसाक्ष्य को नज़रअंदाज़ कर दिया, जिन्होंने कहा था कि लंबे चक्र समय के लिए कम संख्या में परिवर्तन और दबाव की आवश्यकता होती है, जिससे अधिशोषक का जीवन और पीपीयू की दक्षता और जीवन बढ़ जाता है। प्रत्यर्थी ने स्पष्ट रूप से 4 घंटे के चक्र वाले पीपीयू को संविदा से विचलन के रूप में समझा और यही कारण है कि टीएस के खंड 03.04 के तहत अनुमोदन मांगा गया था। 4 घंटे के चक्र वाले पीपीयू का प्रस्ताव करने के लिए दिनांक 19.12.2007 के पत्र में दिए गए कारण थे: (क) यह छोटा होगा और इसे इकट्ठा करना, परीक्षण करना और परिवहन करना सुविधाजनक होगा; और (ख) प्रत्यर्थी के मानक समाधान के रूप में समय

की बर्बादी को कम करेगा, जो टीएस के खंड 03.04 के लिए पूरी तरह से अलग था, जिसके तहत संयंत्र और उपकरणों के बेहतर प्रदर्शन हेतु उनके समग्र विवरण और विनिर्देशों को प्रभावित किए बिना संशोधन की मांग की जा सकती थी और अनुमोदित किया जा सकता था। अधिकरण ने इस मुद्दे पर विचार नहीं किया है कि सुझाया गया विचलन टीएस के खंड 03.04 के चार सीमा के भीतर कैसे आता है। विचलन को एक अच्छे इंजीनियरिंग अभ्यास के रूप में उचित ठहराने का अधिकरण का प्रयास भी टीएस के खंड 03.04 के बाहर है और इसलिए, आरोपित अधिनिर्णय टीएस के खंड 03.04 और 1996 अधिनियम की धारा 31(3) का उल्लंघन करता है।

(ढ) यह एक स्थापित कानून है कि संविदा की व्याख्या करने के लिए पक्षकारगण की मंशा और समझ को निर्धारित करने के लिए संविदा-पूर्व बातचीत/पत्राचार महत्वपूर्ण है, जो इस मामले में बोली में प्रत्यर्थी के अपने प्रस्ताव से स्पष्ट है, जहां 8 घंटे अवशोषण और 7 घंटे पुनः सक्रियण के साथ पीपीयू की पेशकश की गई थी। दिनांक 24-25.02.2007 की बैठक के कार्यवृत्त में प्रत्यर्थी की पुष्टि दर्ज है कि कोई विचलन प्रस्तावित नहीं किया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए कुछ प्रश्नों के उत्तर में, प्रत्यर्थी ने 06.06.2007 को स्पष्ट किया कि पीपीयू का अवशोषण का समय 8 घंटे होगा। सुझाए गए विचलन को याचिकाकर्ता द्वारा कभी भी अनुमोदित नहीं किया गया और प्रस्तावित विचलन को अस्वीकार करने के बाद, प्रत्यर्थी ने सुझाव दिया कि वह 8 घंटे का डिज़ाइन चक्र पेश करेगा, जिसमें 4 घंटे का अवशोषण शामिल होगा और डिज़ाइन चक्र संविदा को संतुष्ट करेगा। याचिकाकर्ता के सलाहकार मेकॉन ने सिफारिश की कि प्रस्तावित पीपीयू 8 घंटे के अवशोषण के चक्र के लिए था और इसे बदला नहीं जा सकता। इसके आधार पर, याचिकाकर्ता ने एक बार फिर मांगे गए विचलन को खारिज

कर दिया और याचिकाकर्ता द्वारा संविदा को समाप्त करने का एक कारण प्रत्यर्थी द्वारा संविदाित पीपीयू की आपूर्ति करने में असमर्थता और विचलन पर उसका निरंतर आग्रह था।

(ण) अधिकरण यह समझने में विफल रहा है कि एनआईटी विनिर्देश के 06.01.01 के अनुसार सभी आसवन स्तंभों में संरचित पैकिंग होना आवश्यक है और एनआईटी विनिर्देश के खंड 03.01 के अनुसार प्रत्यर्थी द्वारा अपने प्रस्ताव में कोई विचलन प्रस्तावित नहीं किया गया था। अधिकरण ने गलत तरीके से पाया है कि प्रत्यर्थी द्वारा सुझाया गया संशोधन टीएस के खंड 03.04 के अनुपालन में था और यह याचिकाकर्ता था जिसने इसे मंजूरी देने में देरी की। यह टीएस के खंड 03.04 के विपरीत है, जो टीएस में मांगे गए संशोधनों की मंजूरी के लिए कोई समय सीमा प्रदान नहीं करता है। वास्तव में, अभिलेख के अनुसार, याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी द्वारा कुछ आवश्यक विवरणों पर स्पष्टीकरण देने के 4 दिनों के भीतर संशोधन को मंजूरी दे दी थी।

(त) बीईडी के संबंध में अधिकरण का निष्कर्ष भी गलत है और अभिलेख के विपरीत है। अधिकरण ने पैराग्राफ 14.14 में उन कारणों को स्पष्ट किया है जिनके लिए याचिकाकर्ता द्वारा बीईडी को अस्वीकार कर दिया गया था। और उन्हें अवैध पाया। यह टिप्पणी कि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित परिवर्तनों को गलत तरीके से स्वीकृत नहीं किया गया, इस तथ्य की अनदेखी करता है कि प्रत्यर्थी को टीएस के खंड 03.04 के तहत संशोधनों की मांग करने का कोई अंतर्निहित अधिकार उपलब्ध नहीं था। इस संदर्भ में दिया गया एक और निष्कर्ष यह है कि याचिकाकर्ता ने 20.11.2007 के अपने पत्र द्वारा डिजाइन को क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने पर आपत्ति जताई थी, लेकिन पत्र को पढ़ने से ही पता चलता है कि

याचिकाकर्ता ने केवल डिजाइन को टुकड़ों में प्रस्तुत करने पर आपत्ति जताई थी, बिना जुड़े/संबंधित डिजाइन को प्रस्तुत किए और प्रत्यर्थी द्वारा बीईडी प्रस्तुत करने में देरी के लिए उसे दोषी नहीं ठहराया जा सकता। तथ्यात्मक रूप से, मेकॉन डिजाइन को अनुमोदित करने में असमर्थ था क्योंकि वे संविदा के टीएस के अनुसार नहीं थे, बल्कि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित विचलन के अनुसार थे और मेकॉन की पिछली टिप्पणियों को शामिल नहीं किया था। प्रत्यर्थी ने कुछ विवरण प्रदान करने से इनकार कर दिया और जोर देकर कहा कि उन्हें डीईडी में प्रदान किया जाएगा। इन सभी विवादास्पद मुद्दों के कारण, बीईडी को संविदा की समाप्ति की तारीख यानी 01.07.2008 तक भी मंजूरी नहीं दी जा सकी, हालांकि मंजूरी के लिए समय सीमा 5 महीने यानी दिसंबर, 2007 तक थी।

(थ) आक्षेपित निर्णय का पैरा 15.10 संविदा के अनुच्छेद 5 के विपरीत है, जिसमें कहा गया है कि समय संविदा का सार है और इसलिए, यदि परिशिष्ट 2 में समय सारणी का अनुपालन नहीं किया गया तो याचिकाकर्ता को संविदा को रद्द करने का अधिकार है। बिना किसी आधार के, अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला है कि समय संविदा का सार नहीं था। यह मानते हुए कि समय सार नहीं था, याचिकाकर्ता अभी भी प्रत्यर्थी की देरी/उल्लंघन के कारण संविदा को समाप्त करने का हकदार था। जी.सी.सी. के खंड 08.01 के अनुसार, सुविधाओं को संविदा के अनुच्छेद 5 में निर्धारित समय अवधि या ऐसे विस्तारित समय के भीतर पूरा किया जाना था, जिसका ठेकेदार खंड 42 के तहत हकदार था। अधिकरण इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि जी.सी.सी. के खंड 42.1 में केवल सीमित मामलों में समय विस्तार की अनुमति दी गई थी, जो ठेकेदार के नियंत्रण से परे थे और ठेकेदार की देरी/चूक ऐसा आधार नहीं है, जिस पर समय बढ़ाया जा सके।

(द) अधिकरण द्वारा नुकसान के बारे में दिए गए निष्कर्ष बिना किसी तथ्य या आधार के हैं। सबसे पहले, अधिकरण के लिए एक ही समय में 'लाभ की हानि' और 'निर्भरता की हानि' दोनों को अनुमति देना संभव नहीं था। अधिकरण ने प्रत्यर्थी के पक्ष में दोनों शीर्षकों के अंतर्गत हर्जाना दिया है, अर्थात (क) प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अग्रिम भुगतान और किए गए व्यय (निर्भरता की हानि) और (ख) लाभ की हानि और बी.ई.डी. और डी.ई.डी. की तैयारी में किए गए कार्य। यह ***कंचन उद्योग लिमिटेड बनाम यूनाइटेड स्पिरिट्स लिमिटेड, (2017) 8 एस.सी.सी. 237*** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के स्थापित सिद्धांतों का उल्लंघन है। अन्यथा भी, एकतरफा अनुमानित लाभप्रदता, जो कि मात्र एक धारणा है, और ठोस साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है, नुकसान के आकलन का आधार नहीं हो सकती है, जो कि वर्तमान मामले में किया गया है। ***दिलीप नेवतिया बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, 2015 एससीसी ऑनलाइन बॉम 545*** में, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि हर्जाने का दावा पेश किया जाना चाहिए और साबित भी किया जाना चाहिए।

(ध) विक्रेताओं को अग्रिम भुगतान के लिए क्षतिपूर्ति इस आधार पर दी गई है कि बीईडी के अनुमोदन में देरी के कारण प्रत्यर्थी द्वारा कंप्रेसर सहित एलडीआई का ऑर्डर नहीं दिया जा सका। यह न केवल पैरा 14.27 से 14.30 में दिए गए निष्कर्षों के विपरीत था, बल्कि एक समझ से परे तर्क पर आधारित था। प्रत्यर्थी द्वारा एलडीआई के लिए याचिकाकर्ता को कोई बिना मूल्य वाला क्रय आदेश प्रस्तुत नहीं किया गया था, क्योंकि तब वह कई नोटिसों के बावजूद संविदा की शर्तों के अनुसार 5% के माइलस्टोन भुगतान का हकदार हो जाता। वास्तव में, बिना मूल्य वाले क्रय आदेश पहली बार अधिकरण के समक्ष बाद में विचार करके प्रस्तुत किए गए थे और प्रत्यर्थी ने 5% भुगतान का दावा भी नहीं किया

था। प्रत्यर्थी के बजट और क्रय आदेशों के आधार पर अतिरिक्त व्यय की मात्रा की गणना की गई थी, लेकिन अधिकरण या प्रत्यर्थी के स्वतंत्र विशेषज्ञ द्वारा बजट का कोई स्वतंत्र सत्यापन नहीं किया गया था। अभिलेख से पता चलता है कि अप्रैल, 2008 तक प्रत्यर्थी द्वारा कंप्रेसर के लिए कोई ऑर्डर नहीं दिया गया था। घाटे को कम करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। घाटे को कम करने के कर्तव्य के साथ-साथ अनावश्यक साधनों का सहारा लेने से बचना भी कर्तव्य है, जिससे किसी पक्षकार का घाटा बढ़ सकता है। वर्तमान मामले में, घाटे को कम करने के बजाय, प्रत्यर्थी ने आगे बढ़कर याचिकाकर्ता से अनुमोदन के अभाव में विक्रेताओं को कथित रूप से अग्रिम भुगतान कर दिया।

(न) अधिकरण ने प्रत्यर्थी को बी.ई.डी. (100%) और डी.ई.डी. (50%) की तैयारी में किए गए कार्य के लिए राशि का हकदार माना है और बिना किसी तर्क के यह माना है कि राशि की दोहरी गणना नहीं की गई है। यह निष्कर्ष निम्नलिखित कारणों से विकृत और सार्वजनिक नीति के विरुद्ध है: (क) संविदा के खंड 02.01 के अनुसार, प्रक्रिया प्रवाह आरेख, सामान्य लेआउट और एकल रेखा आरेख प्रस्तुत करने और अनुमोदित करने पर भुगतान जारी किया जाना था; (ख) संविदा के 02.03.01.01 के अनुसार, अनुमोदित बिलिंग अनुसूची के अनुसार डिजाइन और इंजीनियरिंग की प्रस्तुति और अनुमोदन की प्रगति के अनुसार प्रत्येक तिमाही के अंत में आनुपातिक आधार पर 75% भुगतान जारी किया जाना था; (ग) कोई भी डी.ई.डी. पूर्ण नहीं थी और याचिकाकर्ता द्वारा अनुमोदित नहीं थी; (घ) बी.ई.डी. और डी.ई.डी. के संबंध में नुकसान के लिए दावे को प्रत्यर्थी द्वारा माफ कर दिया गया था; और बिना किसी आधार के और केवल प्रत्यर्थी के बयान के आधार पर, केवल प्रत्यर्थी के साक्षी श्री मायाल की मूल्यांकन

रिपोर्ट पर भरोसा करते हुए, अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि कोई दोहरी गणना नहीं हुई थी।

(प) लाभ की हानि का अधिनिर्णय क्षतिपूर्ति कानून और सार्वजनिक नीति के विरुद्ध था, क्योंकि: (क) प्रत्यर्थी की भारतीय बाजार में कोई उपस्थिति नहीं थी, क्योंकि वह एक रूसी पक्षकार है और केवल भारतीय बाजार पर कब्जा करने के लिए, उसने यह स्वीकार करते हुए कम कीमतें उद्धृत कीं कि याचिकाकर्ता उसका रणनीतिक ग्राहक था; (ख) प्रत्यर्थी के विशेषज्ञ गवाह संविदा के लिए अपने बजट को सत्यापित करने में विफल रहे और केवल लाभ की प्रत्याशा के आधार पर, क्षतिपूर्ति प्रदान की गई; (ग) अधिकरण ने बिना किसी निष्कर्ष या साक्ष्य के अतिरिक्त राजस्व की गणना पर भरोसा किया कि याचिकाकर्ता द्वारा अतिरिक्त राजस्व देय थे या अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों के आधार पर वास्तव में वे उत्पन्न होंगे; और (घ) अधिकरण ने इस धारणा के आधार पर लाभ की हानि का अधिनिर्णय दिया कि प्रत्यर्थी ने बिना किसी व्यवधान के संविदा पूरा कर लिया होगा, इस बात को नजरअंदाज करते हुए कि संविदा दोनों पक्षकारगण के विकल्प पर समाप्त किया जा सकता था।

<u>प्रत्यर्थी की ओर से अधिनिर्णय की गुणागण पर तर्क:</u>

(क) याचिकाकर्ता ने आईसीसी नियमों के अनुसार आईसीसी द्वारा नियुक्त तीन सदस्यीय मध्यस्थ अधिकरण द्वारा सर्वसम्मति से पारित 1996 अधिनियम की धारा 34(2)(ख)(ii) के तहत एक अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक अधिनिर्णय को चुनौती देने की मांग की है। 1996 अधिनियम की धारा 34(2)(क) या (ख) के तहत एक अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक अधिनिर्णय में हस्तक्षेप का दायरा बेहद संकीर्ण और सीमित आधार पर है और याचिका को पढ़ने से पता चलता है कि इन प्रावधानों

में उल्लिखित किसी भी आधार का उल्लेख तक नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता अधिनिर्णय को चुनौती देते हुए गुणागुण समीक्षा या अपील की मांग कर रहा है और इस न्यायालय से संविदा की फिर से व्याख्या करने और/या साक्ष्य की फिर से सराहना करके अधिकरण के निष्कर्षों को प्रतिस्थापित करने का आह्वान कर रहा है, जो अस्वीकार्य है। 2015 के संशोधन अधिनियम द्वारा 1996 के अधिनियम में संशोधन के पश्चात अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए 'पेटेंट अवैधता' का आधार उपलब्ध नहीं है। 'सार्वजनिक नीति' के तहत असाधारण परिस्थितियों में उपलब्ध तीन-स्तरीय आधार वर्तमान मामले में नहीं बनाए गए हैं, क्योंकि याचिकाकर्ता यह पता लगाने में असमर्थ है कि अधिनिर्णय का निर्माण धोखाधड़ी या भ्रष्टाचार से प्रेरित या प्रभावित था या धारा 75 या 81 का उल्लंघन था; भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन है यानी सार्वजनिक हित से संबंधित क़ानून का उल्लंघन करता है या भारत में उच्च न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों की अवहेलना करता है; या न्याय की बुनियादी धारणाओं के विपरीत है यानी न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोरता है।

(ख)इस तरह के विचार: (क) अधिनिर्णय के लिए कोई कारण नहीं; (ख) संविदात्मक प्रावधानों की व्याख्या या निर्माण; (ग) महत्वपूर्ण साक्ष्य की अनदेखी में या 'कोई साक्ष्य नहीं' के आधार पर निष्कर्ष निकालना पेटेंट अवैधता के दायरे में आने वाले आधार हैं और वर्तमान मामले में टिकने योग्य नहीं हैं, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में अभिनिर्धारित किया गया है। आक्षेपित अधिनिर्णय स्पष्ट रूप से 5,000 से अधिक पृष्ठों में फैले व्यापक दस्तावेजी साक्ष्य की विस्तृत जांच और प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत 3 तथ्य और 2 विशेषज्ञ गवाहों और याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत 3 तथ्य और 1 विशेषज्ञ गवाहों के परिसाक्ष्य की

सराहना के आधार पर एक अच्छी तरह से तर्कपूर्ण अधिनिर्णय है। गवाहों से 6 दिनों में प्रतिपरीक्षा की गई और अंतिम सुनवाई 3 दिनों में हुई। अधिकरण के निष्कर्ष न तो अनुचित हैं, न ही किसी भी तरह से विकृत या मनमौजी हैं और अधिकरण का यह दृष्टिकोण कि याचिकाकर्ता द्वारा संविदा को समाप्त करना गैरकानूनी था, मौखिक और दस्तावेजी दोनों तरह के साक्ष्यों पर आधारित है और अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक अधिनिर्णय के मामले में न्यायालय के पास उपलब्ध संकीर्ण खिड़की के भीतर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

(ग) प्रत्यर्थी रूस में एयर सेपरेशन यूनिट और उपकरणों का सबसे बड़ा निर्माता है और एएसयू से संबंधित प्रौद्योगिकी पर कई पेटेंट का मालिक है। इसने 1946 से अब तक 600 से अधिक एएसयू का निर्माण किया है, जिसमें भारत में 59 शामिल हैं, जब इसकी स्थापना नोबेल अधिनिर्णय विजेता भौतिक विज्ञानी श्री पीटर एल. कपित्सा ने की थी। इसके ग्राहकों में यूरोपीय परमाणु अनुसंधान संगठन (जिसे सीईआरएन के नाम से जाना जाता है), रूसी अंतरिक्ष एजेंसी (जिसे संघीय अंतरिक्ष एजेंसी के नाम से जाना जाता है और अब इसे अंतरिक्ष गतिविधियों के लिए रोस्कोस्मोस स्टेट कॉरपोरेशन के नाम से जाना जाता है), भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन ('इसरो') और कई यूरोपीय और चीनी बहुराष्ट्रीय कंपनियां शामिल हैं।

(घ) अधिकरण ने संविदात्मक शर्तों और खंडों की व्याख्या के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं कि संविदा ने प्रत्यर्थी को एएसयू के बेहतर प्रदर्शन के लिए संशोधनों का प्रस्ताव करने हेतु नम्यता प्रदान की और अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत ठोस साक्ष्य को देखते हुए, विशेष रूप से टीएस के खंड 03.04, संविदा समझौते के अनुच्छेद 7 और जीसीसी के खंड 19 को देखते हुए, इस निष्कर्ष को

विकृत नहीं माना जा सकता है। याचिकाकर्ता का गलत मानना है कि उसके पास प्रस्तावित संशोधनों को अस्वीकार करने का पूर्ण विवेक था और यह मानते हुए कि विवेक का प्रयोग विवेकपूर्ण और अच्छे विश्वास के साथ किया जाना चाहिए, न कि मनमाने ढंग से। अधिकरण ने पाया कि याचिकाकर्ता संविदा के निष्पादन में देरी के लिए जिम्मेदार था, क्योंकि वह अभिलेख पर मौजूद भारी मात्रा में दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों के आधार पर प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत डिजाइन और दस्तावेजों को समय पर मंजूरी देने में विफल रहा, जिसकी पुष्टि भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक ('सीएजी') की रिपोर्ट से भी हुई कि देरी कुशल कर्मियों की भारी कमी का परिणाम थी, जो डिजाइन और डिजाइन को मंजूरी दे सकते थे।

(ङ) टीएस का खंड 03.04 प्रत्यर्थी को एएसयू में वैकल्पिक योजनाएं या संशोधन प्रस्तावित करने का अधिकार देता है, यदि वे संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक हों, जब तक कि यह इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश को प्रभावित न करे, जिसमें टीएस के खंड 06.02.07 के तहत 'पसंदीदा निर्माताओं की सूची' में संशोधन शामिल हैं। खंड 03.04 और 20.03.02/20.03.06 जैसे खंड परियोजनाओं की बेहतरी के लिए 'डिजाइन और निर्माण' संविदाओं में आम हैं।

(च) प्रत्यर्थी ने संविदा दायित्वों का क्रियान्वयन शीघ्रता से किया तथा बिना किसी विलम्ब के अनुमोदन के लिए बी.ई.डी. की क्रमिक प्रस्तुति आरम्भ कर दी। 17.12.2007 तक, प्रत्यर्थी ने ए.एस.यू. के लिए सभी 42 बी.ई.डी. प्रस्तुत कर दिए थे तथा तकनीकी विवरण समझाने के लिए कई बैठकों में भाग लिया था। प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता से एक एडसोर्बर के साथ पी.पी.यू. के लिए अनुमोदन मांगा, जो

प्रत्येक 8 घंटे के चक्र में एक ड्यूटी चक्र अर्थात एडसोर्प्शन तथा पुनरुत्पादन पूरा करता है तथा एक बेहतर विकल्प था, लेकिन याचिकाकर्ता ने इस पर विचार करने से केवल इस आधार पर मना कर दिया कि प्रस्ताव संविदा विनिर्देशों से बाहर था। इस पहलू पर पक्षकारगण के बीच कई बैठकों के बावजूद याचिकाकर्ता ने 8 घंटे के चक्र के संबंध में संशोधनों पर विचार करने से मना करने के लिए कोई तकनीकी आधार नहीं दिया।

(छ) प्रत्यर्थी को संविदा के क्रियान्वयन के अगले चरण में आगे बढ़ने से पहले बी.ई.डी. की स्वीकृति की आवश्यकता थी, जिसमें लंबे समय तक डिलीवरी शेड्यूल वाले उपकरणों का ऑर्डर देना और डी.ई.डी. को अंतिम रूप देना शामिल था। हालांकि, लंबे समय तक पत्राचार के बावजूद, याचिकाकर्ता ने इस तुच्छ आधार पर बी.ई.डी. को मंजूरी देने से इनकार कर दिया कि प्रस्तावित संशोधन आदि और प्रस्तावित पी.पी.यू. संविदा की शर्तों के अनुरूप नहीं थे। प्रगति की कमी और याचिकाकर्ता के आचरण पर प्रत्यर्थी की पीड़ा 16.01.2008 के पत्र से स्पष्ट है, जिस पर अधिकरण ने ध्यान दिया है। फरवरी-मार्च, 2008 में, पक्षकारगण ने अपने सभी विवादों को लगभग सुलझा लिया था, हालांकि, याचिकाकर्ता ने इस बात से सहमत होने से इनकार कर दिया कि प्रस्तावित पी.पी.यू. संविदा के अनुरूप था और बातचीत विफल हो गई। इस बैठक के तुरंत बाद, याचिकाकर्ता ने जी.सी.सी. के खंड 37 के तहत प्रत्यर्थी को एक नोटिस जारी किया, जिसमें जोखिम खरीद कार्रवाई शुरू करने की धमकी दी गई, जिसके बावजूद प्रत्यर्थी ने काम करना जारी रखा और अपना रुख स्पष्ट किया। प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता के हर संचार का विस्तृत उत्तर दिया, जिसमें इस बात पर जोर दिया गया कि यदि संशोधनों पर जल्द से जल्द विचार किया जाता तो देरी को रोका जा सकता था, लेकिन याचिकाकर्ता की ओर से कोई प्रगति नहीं हुई।

(ज) याचिकाकर्ता का यह तर्क कि प्रत्यर्थी ने लागत कम करने के लिए संशोधन प्रस्तावित किए हैं, निराधार है। प्रत्यर्थी ने खुद को दो उपकरणों के विक्रेता के रूप में प्रस्तावित किया, अर्थात कोल बॉक्स यूनिट और टर्बो एक्सपेंडर के लिए आवश्यक वाल्व का हिस्सा क्योंकि इससे एएसयू का प्रदर्शन बेहतर होता और याचिकाकर्ता द्वारा प्रदर्शन पर कोई विपरीत साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया। संशोधनों को अस्वीकार करने के लिए सीवीसी दिशानिर्देशों पर भरोसा करना गलत था। किसी भी संविदा के किसी भी पक्षकार को संविदात्मक खंडों के तहत लाभ का दावा करने का अधिकार है और वर्तमान संविदा में, खंड 03.04 प्रत्यर्थी को उसमें उल्लिखित शर्तों के अधीन संशोधनों की पेशकश करने का अधिकार देता है, जिस पर याचिकाकर्ता ने विचार करने और जांच करने से भी इनकार कर दिया।

(झ) अधिकरण का यह निष्कर्ष कि याचिकाकर्ता द्वारा सिंक्रोनस मोटरों पर अतार्किक आग्रह के कारण प्रत्यर्थी के प्रदर्शन में देरी हुई, अच्छी तरह से तर्कपूर्ण है और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों पर आधारित है। एएसयू के लिए आवश्यक मोटर गति और हॉर्स पावर के आधार पर, प्रत्यर्थी ने एसिंक्रोनस इंडक्शन मोटर्स के उपयोग का प्रस्ताव रखा और प्रस्तुत विशेषज्ञ साक्ष्य ने इसके फायदे स्थापित किए। वास्तव में, फरवरी, 2007 की बैठक में, याचिकाकर्ता ने एसिंक्रोनस मोटरों को स्वीकार करने पर भी सहमति व्यक्त की, लेकिन उसके बाद औपचारिकताओं को पूरा करने में देरी की। प्रत्यर्थी ने मोटर निर्माताओं और कंप्रेसर आपूर्तिकर्ताओं के साथ समाधान खोजने पर सहमति व्यक्त की, हालांकि, चूंकि सिंक्रोनस मोटर एक मानक समाधान नहीं था, इसलिए आपूर्तिकर्ताओं को संबंधित एएसयू के साथ संगत उपयुक्त सिंक्रोनस मोटरों को डिजाइन करने के लिए पर्याप्त समय चाहिए था। याचिकाकर्ता द्वारा अपने मामले

का समर्थन करने के लिए कोई साक्ष्य अभिलेख पर नहीं लाया गया कि एसिंक्रोनस मोटरों का प्रस्ताव इसलिए था क्योंकि यह एक सस्ता विकल्प था। वास्तव में, प्रत्यर्थी ने संविदा निष्पादित होने से पहले ही एसिंक्रोनस मोटरों के उपयोग का प्रस्ताव रखा था और इसलिए, याचिकाकर्ता का यह तर्क देना गलत है कि यह मुद्दा पहली बार 19.12.2007 को उठाया गया था।

(ञ) पीपीयू का मुद्दा अन्य तकनीकी विनिर्देशों से अलग है क्योंकि प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित पीपीयू डिजाइन संशोधन नहीं था, जैसा कि अधिकरण द्वारा सही पाया गया। खंड 06.02.03 में 8 घंटे की ड्यूटी चक्र वाले एडसोर्बर की आवश्यकता थी, यानी एक ऐसा एडसोर्बर जो अवशोषण और पुनरुत्पादन का चक्र पूरा करने के बाद अपनी प्रारंभिक स्थिति में लौटने में 8 घंटे लेता है और इसलिए, प्रत्यर्थी का पीपीयू टीएस के अनुरूप था क्योंकि इसमें 4 घंटे के अवशोषण और 4 घंटे के पुनरुत्पादन के साथ 8 घंटे की ड्यूटी चक्र थी और इसे गलत तरीके से संविदा से विचलन माना गया था। सुश्री तारासोवा की प्रतिपरीक्षा पर गलत भरोसा किया गया क्योंकि उन्होंने केवल यह समझाया कि प्रस्तावित पीपीयू डिजाइन का परीक्षण किया गया था, विश्वसनीय और अधिक कुशल और लागत प्रभावी था। यह मानते हुए कि प्रस्तावित संशोधन संविदा विनिर्देशों के अनुसार नहीं थे, खंड 03.04 ने प्रत्यर्थी को संशोधनों का सुझाव देने की अनुमति दी। प्रत्यर्थी को लचीलापन प्रदान करने वाले इस संविदात्मक प्रावधान की अनदेखी की गई, क्योंकि याचिकाकर्ता आरंभिक रूप से निर्धारित टीएस से बाहर देखने को तैयार नहीं था, जिसके लिए वह बाध्य था, जब ठेकेदार द्वारा टीएस के खंड 03.04 के तहत अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए विकल्प पेश किए गए थे।

(ट) याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि मेकॉन/याचिकाकर्ता ने बी.ई.डी. को मंजूरी नहीं दी क्योंकि वे टी.एस. के अनुरूप नहीं थे और परिवर्धन तथा संशोधनों पर आधारित थे। इसके विपरीत और सही रूप से, अधिकरण ने माना कि प्रत्यर्थी टी.एस. के खंड 03.04, संविदा समझौते के अनुच्छेद 7 और जी.सी.सी. के खंड 19 के तहत विकल्प और संशोधन मांगने का हकदार था और यदि प्रस्ताव संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए था और इकाई के विवरण और विनिर्देश को प्रभावित नहीं करता था, तो याचिकाकर्ता को प्रस्ताव पर विचार करना आवश्यक था और अस्वीकृति इस कारण से नहीं हो सकती थी कि प्रस्ताव संविदा संबंधी तकनीकी विनिर्देशों के अनुरूप नहीं था। अधिकरण द्वारा इस निष्कर्ष में कोई त्रुटि नहीं पाई जा सकती है, जो खंड की स्पष्ट व्याख्या या सर्वोत्तम रूप से इसकी व्याख्या है।

(ठ) याचिकाकर्ता का यह तर्क कि बी.ई.डी. और डी.ई.डी. देरी से प्रस्तुत किए गए, अभिलेख के विपरीत है। प्रत्यर्थी को संविदा समझौते के परिशिष्ट 2 के खंड 02.02.01 के अनुसार 31.07.2007 से 20-21 सप्ताह के भीतर बी.ई.डी. को पूरा करना तथा उन्हें अनुमोदन के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक था। प्रत्यर्थी पर ड्राइंग को क्रमिक रूप से प्रस्तुत करने का कोई संविदात्मक दायित्व नहीं था। फिर भी, प्रत्यर्थी ने अक्टूबर, नवंबर और दिसंबर के दौरान क्रमिक रूप से बी.ई.डी. प्रस्तुत की तथा 17.12.2007 तक सभी बी.ई.डी. प्रस्तुत कर दी। जैसा कि याचिकाकर्ता के गवाहों ने स्वीकार किया तथा अभिलेखों से पता चलता है, मेकॉन ने अपनी टिप्पणियाँ प्रदान करने में कम से कम एक महीने से डेढ़ महीने का समय लिया। अधिकरण द्वारा यह सही रूप से नोट किया गया कि प्रदान की गई टिप्पणियाँ गुणात्मक रूप से अपर्याप्त थीं तथा संविदा के कार्यान्वयन में देरी करने के लिए जिम्मेदार थीं। अधिकरण ने सही रूप से टिप्पणी की कि मेकॉन

की टिप्पणियाँ सत्तावादी, अनावश्यक थीं तथा बी.ई.डी. के अनुमोदन में देरी को उचित नहीं ठहराती थीं।

(ड़) याचिकाकर्ता का यह तर्क कि एलडीआई के लिए ऑर्डर देने में देरी प्रत्यर्थी के कारण हुई, निराधार और बेबुनियाद है। अधिकरण ने सही पाया कि संविदा के तहत, अन्य बातों के साथ-साथ, खंड 20.03.07 और 20.04.01.07 के अनुसार, प्रत्यर्थी को एलडीआई के लिए तब तक पक्का ऑर्डर देने की अनुमति नहीं थी, जब तक कि याचिकाकर्ता/मेकॉन ने एलडीआई से संबंधित डिजाइन और दस्तावेजों को अपनी मंजूरी नहीं दे दी थी। उपकरण ऑर्डर करने से पहले नियोक्ता की मंजूरी की प्रतीक्षा करने की प्रथा संविदा के अनुरूप है और 'डिजाइन और निर्माण' संविदाओं से संबंधित उद्योग अभ्यास के अनुरूप है।

(ढ़) अधिकरण ने सही निष्कर्ष निकाला कि याचिकाकर्ता द्वारा जी.सी.सी. के खंड 44.2 के तहत संविदा को समाप्त करना गलत और अनुचित था। अधिनिर्णय को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि अधिकरण ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले दस्तावेजों, संविदात्मक प्रावधानों, मौखिक साक्ष्यों पर विचार किया और विशेषज्ञ साक्ष्य का लाभ उठाया, जो वर्तमान याचिका में हस्तक्षेप करने की छूट नहीं देता है। अधिकरण ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों से पाया कि प्रत्यर्थी की ओर से मुद्दों को दूर करने और संविदा को पूरा करने की वास्तविक इच्छा थी, जो पक्षकारगण के बीच आदान-प्रदान किए गए विभिन्न संचारों की ओर इशारा करता है। यह निष्कर्ष निकाला गया कि संविदा को केवल देरी के आधार पर समाप्त नहीं किया जा सकता है, क्योंकि इसमें समय के विस्तार और परिसमाप्त नुकसान की कटौती का प्रावधान शामिल है। अधिकरण ने तथ्य का निष्कर्ष दिया कि देरी

प्रत्यर्थी के कारण नहीं थी, बल्कि याचिकाकर्ता/मेकॉन की गलत कार्रवाइयों के कारण हुई थी।

(ण) अधिकरण ने प्रत्यर्थी को विभिन्न मदों के अंतर्गत क्षतिपूर्ति तथा अन्य मौद्रिक राहत प्रदान करने का उचित निर्णय लिया है, जो कि संविदा समाप्ति को अवैध ठहराने का स्वाभाविक परिणाम है। संविदा समाप्ति के समय प्रत्यर्थी ने 50% डी.ई.डी. पूर्ण कर ली थी तथा सभी बी.ई.डी. निर्धारित समय के भीतर प्रस्तुत कर दी थी, इसलिए किए गए कार्य के भुगतान के लिए अधिनिर्णय को विपरीत अर्थात् सार्वजनिक नीति के विपरीत नहीं कहा जा सकता। अधिकरण का यह निष्कर्ष कि हानियों का अल्पीकरण संभव नहीं था, सही दृष्टिकोण है। विचाराधीन डिजाइन संविदा के लिए विशिष्ट थे तथा गोपनीय प्रकृति के थे तथा वर्तमान संविदा की तकनीकी विशिष्टताओं के अनुरूप बनाए जाने के कारण उन्हें किसी अन्य पक्षकार को नहीं बेचा जा सकता था।

(त) जहां तक अग्रिम भुगतान और व्यय का सवाल है, प्रत्यर्थी द्वारा कुछ एलडीआई के लिए 3 विक्रेताओं को अग्रिम भुगतान किया गया था और प्रत्यर्थी ने उपकरणों के लिए अहस्ताक्षरित खरीद आदेश और भुगतान के सबूत पेश किए थे, जो निर्विवाद थे। अधिकरण ने प्रत्यर्थी द्वारा संविदा की अवधि के दौरान किए गए व्यय के लिए 1,51,016 अमेरिकी डॉलर का भुगतान किया। मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान किसी भी स्तर पर, याचिकाकर्ता ने किए गए व्यय के दावे से इनकार नहीं किया और आपत्ति केवल एक बाद का विचार है।

(थ) याचिकाकर्ता द्वारा लाभ की हानि के निर्णय को बिना किसी आधार के चुनौती दी गई है। निर्माण संविदाओं में लाभ की हानि आम तौर पर न्यायालयों द्वारा दी जाती है, जहां निर्णय को बरकरार रखा जाता है और उल्लंघन पाया जाता है।

इस मामले में, याचिकाकर्ता के विशेषज्ञ गवाह ने प्रतिपरीक्षा के दौरान स्वीकार किया कि इस बात की स्पष्ट संभावना थी कि प्रत्यर्थी ने संविदा पर लाभ कमाया होगा। अधिकरण द्वारा पक्षकारगण द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों की बारीकी से संवीक्षा करने के बाद राशि दी गई, जिसमें विशेषज्ञ साक्ष्य, प्रत्यर्थी का वित्तीय ट्रैक रिकॉर्ड और समान संविदाओं में लाभ मार्जिन सहित उसी पंक्ति में अन्य कंपनियों के व्यवसाय के आधार पर शामिल थे। अधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि कुल संविदा मूल्य के 3.8% पर लाभ की हानि में से बीईडी और डीईडी के लिए दी गई राशि को घटाना इस मामले के तथ्यों में सही अनुमान होगा। याचिकाकर्ता का तर्क कि अधिकरण ने अपेक्षा के साथ-साथ निर्भरता हानि को गलत तरीके से अधिनिर्णीत करने में गलती की, गलत है। ***कंचन उद्योग (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करना भी उतना ही गलत है, क्योंकि अपेक्षा और भरोसे के आधार पर नुकसान तब तक दिया जा सकता है, जब तक कि प्राप्त करने वाला पक्षकार एक ही नुकसान की भरपाई एक से अधिक बार न कर ले।

25. मैंने पक्षकारगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं को सुना है तथा उनके तर्कों की जांच की है।

<u>प्रारंभिक आपत्तियाँ: विश्लेषण और निष्कर्ष।</u>

26. प्रत्यर्थी की ओर से उठाई गई प्रारंभिक आपत्तियों को इस प्रकार संक्षेपित किया जा सकता है: (क) याचिका 27.07.2018 को अधिनिर्णय प्राप्ति की तिथि से 3 महीने 16 दिन बाद 12.11.2018 को दायर की गई थी, उस स्तर पर देरी के लिए माफी के लिए कोई आवेदन नहीं किया गया था; (ख) 12.11.2018 को फाइल करना गैर मौजूद और संपूर्ण था और वैध याचिका केवल 07.12.2018 को दायर की गई थी, जो 27.07.2018 से 3 महीने

और 30 दिनों से अधिक थी और धारा 34(3) के प्रावधान के तहत देरी को माफ नहीं किया जा सकता है; (ग) यह मानते हुए कि 06.08.2018 को अधिनिर्णय प्राप्त हुआ था और याचिका 12.11.2018 को 3 महीने के भीतर थी, फाइल गैर-मौजूद होने के कारण, इस तिथि पर परिसीमा समाप्त नहीं होगी और उचित याचिका 07.12.2018 को 30 दिनों की क्षमा अवधि से परे दायर की गई थी; और (घ) यह मानते हुए कि 06.12.2018 को एक वैध फाइल किया गया था, याचिकाकर्ता देरी की माफी के लिए पर्याप्त कारण बनाने में विफल रहा है। संक्षेप में तर्क यह था कि किसी भी कोण से देखा जाए तो याचिका समयबद्ध है और केवल इस आधार पर खारिज होने योग्य है।

27. सबसे पहला और सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न जिसका उत्तर दिया जाना आवश्यक है: 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित 3 महीने की परिसीमा अवधि की शुरुआत या तिथि क्या है और इसका उत्तर अधिनिर्णय की डिलीवरी की तिथि में निहित है, जो बदले में अन्य मुद्दों को प्रभावित करेगा। इस मुद्दे पर निर्णय लेने से पहले, यह ध्यान रखना उचित होगा कि संविदा के अनुच्छेद 10.1 के अनुसार पक्षकारगण के बीच मध्यस्थता कार्यवाही शुरू हुई जो इस प्रकार है:-

> *"10.1 मध्यस्थता (संदर्भ जी. सी. सी. खंड 6)*
>
> > *" इस संविदा के निर्माण, अर्थ, दायरे, संचालन या प्रभाव से संबंधित या उससे संबंधित पक्षकारगण के बीच उत्पन्न होने वाले किसी भी विवाद, मतभेद को नियोक्ता और ठेकेदार के बीच सौहार्दपूर्ण तरीके से सुलझाया जाएगा। हालांकि, अगर नियोक्ता और ठेकेदार अपने विवादों/मतभेदों को सौहार्दपूर्ण तरीके से हल करने में सक्षम नहीं हैं, तो उक्त विवादों/मतभेदों को मध्यस्थता के समक्ष सुलह के लिए भेजा जाएगा। मध्यस्थता खंड का उपयोग ठेकेदार द्वारा केवल सुलह कार्यवाही की विफलता पर ही किया जाएगा।" "*

28. मध्यस्थता खंड जीसीसी के अनुच्छेद 6 के संदर्भ में था जो इस प्रकार है:-

"<u>अनुच्छेद 6 जीसीसी</u>

6. विवादों का निपटारा

सुलह और मध्यस्थता

विवादों की स्थिति में मामले को मध्यस्थता से पहले सुलह के लिए भेजा जाएगा। सुलह कार्यवाही के लिए लागू नियम "सुलह और मध्यस्थता के स्कोप फोरम" (एससीएफए) के होंगे। मध्यस्थता खंड का उपयोग ठेकेदार द्वारा केवल सुलह कार्यवाही की विफलता पर ही किया जाएगा। सभी संविदा जिनका मूल्य 5.0 करोड़ रुपए (भारतीय और विदेशी ठेकेदारों दोनों के लिए) और उससे कम है, तदर्थ मध्यस्थता के लिए जाएंगे जहां बीएसपी के प्रबंध निदेशक द्वारा एक निष्पक्ष मध्यस्थ नियुक्त किया जाएगा और मध्यस्थता कार्यवाही मध्यस्थता और सुलह अधिनियम 1996 द्वारा शासित होगी। आयोजन स्थल भिलाल (छत्तीसगढ़) होगा। भारतीय पक्षकारगण के साथ संविदाओं का मध्यस्थता, जहां संविदा मूल्य 5.0 करोड़ रुपए से अधिक है और विदेशी पक्षकारगण के साथ 5.0 करोड़ रुपए से अधिक और 20 करोड़ रुपए तक के मूल्य के संविदा, भारतीय मध्यस्थता परिषद (आईसीए/ "स्कोप फोरम ऑफ कॉन्सिलिएशन एंड आर्बिट्रेशन" (एससीएफए) के नियमों द्वारा शासित होंगे, जैसा कि ठेकेदार द्वारा सहमति व्यक्त की गई है। स्थान नई दिल्ली होगा। विदेशी ठेकेदार के साथ मध्यस्थता या कंसोर्टियम संविदाओं (विदेशी ठेकेदार सहित) में जहां संविदा मूल्य 20 करोड़ रुपए से अधिक है, अंतर्राष्ट्रीय चैंबर ऑफ कॉमर्स (आईसीसी), पेरिस के मध्यस्थता के नियमों द्वारा शासित होंगे। मध्यस्थ कार्यवाही का स्थान नई दिल्ली होगा।

सुलह या मध्यस्थता कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, नियोक्ता और ठेकेदार अपने संविदात्मक दायित्वों का पालन करना जारी रखेंगे।"

29. जी.सी.सी. के अनुच्छेद 5.1 में प्रावधान है कि मध्यस्थता कार्यवाही सहित संविदा भारत के कानूनों के अनुसार शासित और व्याख्या किया जाएगा और जी.सी.सी. के अनुच्छेद 6 के अनुसार, मध्यस्थता का स्थान नई दिल्ली था। निस्संदेह, अनुच्छेद 6 में प्रावधान है कि विदेशी ठेकेदार के साथ मध्यस्थता या विदेशी ठेकेदार सहित कंसोर्टियम संविदाओं के संबंध में, जहां संविदा मूल्य 20 करोड़ रुपए से अधिक था, अंतर्राष्ट्रीय चैंबर ऑफ कॉमर्स (आई.सी.सी.), पेरिस के मध्यस्थता नियमों द्वारा शासित होगा। बेशक, यहाँ

पक्षकारगण के बीच मध्यस्थता कार्यवाही आई.सी.सी. मध्यस्थता नियम, 2012 द्वारा शासित थी। अधिनिर्णय की डिलीवरी की तारीख से संबंधित विवाद अनिवार्य रूप से अध्याय XV के तहत आई.सी.सी. नोट्स 140 और 141 के बीच एक अंतर्क्रिया को शामिल करता है जिसका शीर्षक है "अधिनिर्णय, परिशिष्ट और निर्णयों की अधिसूचना" जिसे नीचे उद्यत संदर्भ और 1996 अधिनियम की धारा 31(5) और 34(3) हेतु उद्धृत किया गया है :-

"XV- अधिनिर्णयों, परिशिष्ट और निर्णयों की अधिसूचना

140. सचिवालय पक्षकारगण को अधिनिर्णयों, परिशिष्टों और निर्णयों की मूल प्रति (अनुच्छेद 35(1)) अधिसूचित करेगा।

141. अधिनिर्णयों, परिशिष्टों और निर्णयों की पीडीएफ हस्ताक्षरित मूल प्रति की शालीनता प्रति पक्षकारगण को ईमेल द्वारा भेजी जाएगी। ईमेल द्वारा शालीनता प्रति भेजने से मध्यस्थता आईसीसी नियमों के तहत कोई समय सीमा लागू नहीं होती है।"

30. याचिकाकर्ता का मामला यह है कि 27.07.2018 को आईसीसी द्वारा ई-मेल के माध्यम से दिनांक 20.07.2018 के अधिनिर्णय की शालीनता प्रति भेजी गई थी, लेकिन शालीनता प्रति की प्राप्ति आईसीसी नियमों के तहत समयसीमा और अधिनियम की धारा 34(3) के तहत 3 महीने की परिसीमा की शुरुआत को ट्रिगर नहीं करेगी। मैंने इस मुद्दे पर अपना विचार व्यक्त किया है। इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि पक्षकारगण ने सहमति व्यक्त की थी कि आईसीसी नियम वर्तमान संविदा से संबंधित विवाद उत्पन्न होने और पक्षकारगण द्वारा मध्यस्थता का सहारा लेने की स्थिति में शासी नियम होंगे। पक्षकार स्वायत्तता मध्यस्थता का सर्वोपरि सिद्धांत है और इसे विधानमंडल ने 1996 अधिनियम की धारा 2(6) को अधिनियमित करके दोहराया है, जो यह प्रावधान करता है कि धारा 28 को छोड़कर, जब 1996 अधिनियम का भाग-I, पक्षकारगण को किसी निश्चित मुद्दे को निर्धारित करने के

लिए स्वच्छंद छोड़ता है, उक्त स्वच्छंदता में पक्षकारगण का किसी भी व्यक्ति को, जिसमें कोई संस्था भी शामिल है, उस मुद्दे को निर्धारित करने के लिए अधिकृत करने का अधिकार शामिल होगा। ***ओएनजीसी बनाम एफकॉन्स (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि पक्षकार स्वायत्तता मध्यस्थता का एक प्रमुख सिद्धांत है। आईसीसी नियमों को शासी नियमों के रूप में चुनने के बाद, इसमें निर्धारित प्रक्रिया मध्यस्थता के संचालन के लिए चुनी गई प्रणाली भी थी और पक्षकारगण को बाध्य करती है।

31. आईसीसी नोट 140 के अवलोकन से पता चलता है कि सचिवालय को पक्षकारगण को अधिनिर्णय, परिशिष्ट और निर्णयों की मूल प्रति सूचित करना आवश्यक था। नोट 141, स्पष्ट शब्दों में, यह मानता है कि ई-मेल द्वारा अधिनिर्णय की पीडीएफ हस्ताक्षरित मूल प्रति की शालीनता प्रति आईसीसी नियमों के तहत किसी भी समयसीमा को ट्रिगर नहीं करेगी। 27.07.2018 की ई-मेल दर्शाती है कि अधिनिर्णय की प्रति संलग्न करते समय, यह कहा गया था कि अधिनिर्णय की मूल प्रति का पालन किया जाएगा और शालीनता प्रति आईसीसी नियमों के तहत समयसीमा को ट्रिगर नहीं करेगी। आईसीसी नोट 141 की स्पष्ट भाषा को ध्यान में रखते हुए, मैं प्रत्यर्थी से सहमत नहीं हो पा रहा हूं कि 27.07.2018 को अधिनिर्णय की शालीनता प्रति की प्राप्ति की तारीख 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित 3 महीने की परिसीमा की गणना के लिए प्रारंभिक बिंदु होगी। नोट 141 का महत्व इसकी भाषा से स्पष्ट है जहाँ 'शालीनता प्रति' शब्द का प्रयोग किया गया है, उसके बाद 'आईसीसी नियमों के तहत समयसीमा को ट्रिगर नहीं करेगा' शब्द का प्रयोग किया गया है तथा इस नोट को स्पष्ट अर्थ और प्रभाव दिया जाना चाहिए, जिसके अनुसार शालीनता प्रति की प्राप्ति को परिसीमा के प्रारंभ के उद्देश्य से अधिनिर्णय की डिलीवरी के रूप में, या तो अधिनिर्णय में त्रुटियों को सुधारने हेतु, यदि कोई हो, या न्यायालय में अधिनिर्णय को चुनौती देने हेतु नहीं समझा जाना चाहिए।

32. प्रत्यर्थी द्वारा आईसीसी नियमों के अनुच्छेद 3 और 23 पर भरोसा करना गलत है क्योंकि ये अनुच्छेद दलीलों और अन्य लिखित संचार से संबंधित हैं, न कि अधिनिर्णय की डिलीवरी से, जिसका प्रावधान आईसीसी नोट 140 और 141 के तहत किया गया है। इसी तरह, अनुच्छेद 34(1) पर भी गलत तरीके से भरोसा किया गया है, क्योंकि यह केवल यह प्रावधान करता है कि एक बार अधिनिर्णय दिए जाने के बाद, सचिवालय पक्षकारगण को मध्यस्थ अधिकरण द्वारा हस्ताक्षरित टेक्स को अधिसूचित करेगा और टेक्स को भेजा जाना को मूल हस्ताक्षरित अधिनिर्णय भेजने के रूप में नहीं माना जा सकता है। मेरे विचार में, आईसीसी नोट 141 और 1996 अधिनियम की धारा 31(5) और 34(3) के बीच वास्तव में कोई टकराव नहीं है। धारा 34(3) में प्रावधान है कि किसी निर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन उस तिथि से 3 महीने के बाद नहीं किया जा सकता है, जिस तिथि को वह आवेदन करने वाले पक्षकार को मध्यस्थता निर्णय प्राप्त हुआ है और धारा 31(5) में प्रावधान है कि निर्णय की हस्ताक्षरित प्रति अधिनिर्णय के पक्ष को सौंपी जाएगी। नोट 140/141 विभिन्न क्षेत्रों में काम करते हैं और निर्णय की तामील के दो चरणों को मान्यता देते हैं, एक शालीनता प्रति और उसके बाद मूल निर्णय। आईसीसी नियमों द्वारा शासित होने के लिए सहमत होकर, पक्षकार सहमत हुए कि शालीनता प्रति की प्राप्ति को मध्यस्थता निर्णय की प्राप्ति नहीं माना जाएगा और इस प्रकार धारा 31(5) के तहत निर्णय की तामील तब होगी जब मूल प्रति प्राप्त हुई हो, न कि शालीनता प्रति और परिणामस्वरूप धारा 34(3) के तहत आपत्तियां दर्ज करने की परिसीमा अवधि मूल निर्णय के तामील की तिथि से चलनी शुरू होगी।

33. प्रत्यर्थी का यह तर्क सही नहीं है कि निर्णय पर हस्ताक्षर करने के बाद आईसीसी नियम लागू होना बंद हो जाते हैं और 1996 अधिनियम के प्रावधान लागू हो जाते हैं और इस प्रकार 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत समयसीमा निर्धारित करने के लिए नोट 141 लागू नहीं होगा। 1996 अधिनियम की धारा 31 'मध्यस्थ अधिनिर्णय के प्रारूप और विषय-वस्तु' से संबंधित है और यह भी प्रावधान करती है कि मध्यस्थ अधिनिर्णय दिए जाने

के बाद, हस्ताक्षरित प्रति प्रत्येक पक्षकार को सौंपी जाएगी। धारा 32 में यह प्रावधान है कि मध्यस्थ कार्यवाही अंतिम मध्यस्थ अधिनिर्णय या उप-धारा (2) के तहत अधिकरण के आदेश द्वारा समाप्त की जाएगी और उप-धारा (3) में प्रावधान है कि धारा 33 और धारा 34(4) के अधीन, मध्यस्थ अधिकरण का अधिदेश मध्यस्थ कार्यवाही की समाप्ति के साथ समाप्त हो जाएगा। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि धारा 32 तब लागू होती है जब धारा 31 के तहत पूरी प्रक्रिया पूरी हो जाती है। ***टेक्को त्रिची (पूर्वोक्त)*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मध्यस्थता अधिनिर्णय की डिलीवरी एक औपचारिकता नहीं है और इसलिए, केवल प्रावधान की आवश्यकता और/या मध्यस्थता के पक्षकारगण को नियंत्रित करने वाले अन्य नियमों के अनुसार धारा 31(5) के तहत पक्षकारगण को अधिनिर्णय दिए जाने के बाद और धारा 31 के तहत परिकल्पित पूरी प्रक्रिया पूरी होने के बाद, कार्यवाही को समाप्त करने के लिए धारा 32 आती है और वह भी 1996 अधिनियम की धारा 33 के अधीन। नोट 141 में 'आईसीसी नियमों के तहत' अभिव्यक्ति को सीमित व्याख्या नहीं दी जा सकती है, जिसका अर्थ केवल नियमों के तहत समयसीमाओं की व्याख्या करना है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि शालीनता प्रति प्राप्त होते ही धारा 34(3) के तहत परिसीमाएँ लागू हो जाएंगी। यह न केवल आईसीसी नियमों के विपरीत होगा, जो पक्षकारगण की पसंद के अनुसार शासकीय नियम हैं, बल्कि किसी दिए गए मामले में कानून की एक अकल्पनीय स्थिति को जन्म देगा, जैसा कि प्रत्यर्थी द्वारा सही ढंग से इंगित किया गया है, जहां आईसीसी नियमों के अनुच्छेद 35(2) के तहत, मध्यस्थता कार्यवाही में किसी पक्षकार को अधिनिर्णय की प्राप्ति की तारीख से लिपिकीय, गणना संबंधी, मुद्रण संबंधी या इसी तरह की किसी भी त्रुटि के सुधार हेतु आवेदन करने के लिए उपलब्ध 30 दिनों की अवधि, शालीनता प्रति प्राप्त होने पर शुरू नहीं होगी, लेकिन 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत अधिनिर्णय को चुनौती देने की परिसीमा, शालीनता प्रति प्राप्त होने की तारीख से पहले शुरू होगी।

34. कुछ इसी तरह का मुद्दा ***आदित्यसाई कॉटस्पिन प्राइवेट लिमिटेड बनाम लुइस ड्रेफस कमोडिटीज इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, 2015 एससीसी ऑनलाइन बॉम 3410*** में बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष उठा था, जहां प्रत्यर्थी ने सीमा पर अधिनियम की धारा 34 के तहत अधिनिर्णय को चुनौती देने वाली याचिका की स्थिरता पर आपत्ति जताई थी। याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि 1996 के अधिनियम की धारा 34(3) के साथ धारा 31(5) के तहत चूंकि मध्यस्थ से स्वयं अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त नहीं हुई थी, जैसा कि कॉटन एसोसिएशन ऑफ इंडिया नियमों के तहत प्रावधान किया गया है, इसलिए धारा 34(3) के तहत परिसीमा शुरू नहीं हुई। दूसरी ओर, प्रत्यर्थी ने तर्क दिया कि उक्त नियमों के तहत कॉटन एसोसिएशन ने अधिकरण को सभी प्रशासनिक सहायता प्रदान करने के लिए एक सचिव को प्रतिनियुक्त किया था, जिसमें मध्यस्थ द्वारा अधिनिर्णय दिए जाने की सूचना जारी करना भी शामिल था। प्रत्यर्थी से असहमत होते हुए, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने कहा कि अधिनियम की धारा 34(3) के तहत, प्रत्येक पक्षकार को एक हस्ताक्षरित प्रति दी जानी चाहिए और पक्षकारगण के बीच मध्यस्थता को नियंत्रित करने वाले नियमों में मध्यस्थता के लिए एक प्रक्रिया का प्रावधान है, जो मध्यस्थ की नियुक्ति से लेकर अधिनिर्णय की डिलीवरी तक है, जिसके अनुसार मध्यस्थ को व्यक्तिगत रूप से पक्षकारगण को अधिनिर्णय की एक प्रति भेजने की आवश्यकता होती है और इसलिए एसोसिएशन के सचिव से प्राप्त प्रति परिसीमा अवधि को ट्रिगर नहीं करेगी। एक बार जब पक्षकार भारतीय कपास संघ द्वारा सभी उद्देश्यों के लिए बनाए गए मध्यस्थता नियमों में निर्धारित तरीके और तरीके से मध्यस्थता के साथ आगे बढ़ने के लिए सहमत हो जाते हैं, तो उक्त प्रक्रिया का पालन करना होगा और यह मध्यस्थता के लिए पक्षकारगण को बाध्य करेगा। इसलिए पहला प्रश्न याचिकाकर्ता के पक्ष में तय किया जाता है, जिसमें कहा गया है कि कि 27.07.2018 पर अधिनिर्णय की शालीनता प्रति की प्राप्ति अधिनियम की खंड 34 (3) के तहत अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए समय सीमा को ट्रिगर नहीं करती है।

35. प्रत्यर्थी द्वारा ***आईमैक्स कॉरपोरेशन (पूर्वोक्त)*** में दिए गए निर्णय पर भरोसा करना गलत है, क्योंकि इस निर्णय का यहां शामिल मुद्दे पर कोई प्रयोज्यता नहीं है। उक्त मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि चूंकि मध्यस्थता का स्थान लंदन था, इसलिए भारत में अधिनिर्णय पर कोई आपत्ति दर्ज नहीं की जा सकती थी। उक्त मामले में, मध्यस्थता खंड ने मध्यस्थता समझौते के लिए लागू कानून को निर्दिष्ट किए बिना, आईसीसी नियमों के अनुरूप एक अधिनिर्णय की परिकल्पना की थी। इस संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने देखा कि मध्यस्थता के संचालन यानी आईसीसी नियमों की प्रयोज्यता के बारे में पक्षकारगण द्वारा एक स्पष्ट विकल्प बनाया गया था, लेकिन उन्होंने मध्यस्थता का स्थान नहीं चुना था और इसलिए जब आईसीसी ने मध्यस्थता के स्थान के रूप में लंदन को चुना, तो मध्यस्थता से संबंधित सभी मामलों में यू.के. का कानून लागू होगा और उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी करने में गलती की कि मध्यस्थता का स्थान ही अधिनियम के भाग-I को बाहर करने के लिए निर्णायक कारक नहीं था। उच्च न्यायालय के निर्णय को रद्द कर दिया गया और अधिनियम की धारा 34 के तहत बॉम्बे उच्च न्यायालय के समक्ष दायर याचिका को खारिज कर दिया गया।

36. दूसरा और उतना ही महत्वपूर्ण मुद्दा जो विचार के लिए उठता है, वह यह है कि क्या मध्यस्थता समझौतों के पक्षकार के अधिवक्ता/अधिकृत प्रतिनिधियों को अधिनिर्णय की डिलीवरी को 1996 अधिनियम की धारा 31(5) के तहत परिकल्पित अधिनिर्णय की डिलीवरी के रूप में माना जा सकता है। उपर्युक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए कि अधिनिर्णय की सौजन्य प्रति समयसीमा को ट्रिगर नहीं करेगी, पी.एच. शर्मा, एस.बी. माथुर, ए.सी. राठी और आशीष रस्तोगी द्वारा 27.07.2018 को प्रतियों की प्राप्ति, परिसीमा के उद्देश्य के लिए अप्रासंगिक होगी।

37. याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए तथ्यों और विवरण के कालक्रम के अनुसार, अधिनिर्णय की मूल हस्ताक्षरित प्रति याचिकाकर्ता के अधिवक्ता को 02.08.2018 को प्राप्त हुई, जिसे फिर दिल्ली में कॉर्पोरेट कार्यालय में याचिकाकर्ता के कानूनी विभाग को भेजा गया और 06.08.2018 को वहां प्राप्त हुई। याचिकाकर्ता का तर्क है कि धारा 34(3) के तहत परिसीमा अवधि 06.08.2018 से शुरू होगी न कि 02.08.2018 से। यह तर्क 1996 अधिनियम की धारा 31(5) के प्रावधानों पर आधारित है, जो यह प्रावधान करता है कि मध्यस्थता निर्णय दिए जाने के बाद, प्रत्येक 'पक्षकार' को एक हस्ताक्षरित प्रति सौंपी जाएगी। यह न्यायालय इस पहलू पर याचिकाकर्ता के तर्क में गुणागुण पाता है। 1996 अधिनियम की धारा 31(5) में प्रावधान है कि मध्यस्थता अधिनिर्णय दिए जाने के बाद, प्रत्येक पक्षकार को एक हस्ताक्षरित प्रति सौंपी जाएगी। ***टेक्को त्रिची (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय एक ऐसे मामले की सुनवाई कर रहा था, जिसमें मध्यस्थ अधिकरण ने 10/11.03.2001 को अपना निर्णय दिया था और उस पर हस्ताक्षर भी किए थे, जिसे 12.03.2001 को दक्षिण रेलवे के महाप्रबंधक के कार्यालय में पहुंचाया गया था और कार्यालय में किसी व्यक्ति, शायद आवक क्लर्क द्वारा स्वीकार किया गया था, लेकिन प्रतिलिपि मुख्य अभियंता को 19.03.2001 को प्राप्त हुई थी। मुख्य अभियंता ने धारा 34(3) के तहत विलंब के लिए माफी मांगने के लिए 10.07.2001 को 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत एक याचिका दायर की। सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह था कि धारा 34(3) के अंतर्गत सीमा के आरंभिक बिंदु के प्रयोजनों के लिए अधिनिर्णय किस प्रभावी तिथि को दिया गया था और इस संदर्भ में अगला प्रश्न यह उठा कि "पक्षकार" शब्द का क्या अर्थ दिया जाना चाहिए? सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी की कि रेलवे जैसे बड़े संगठनों में धारा 34(3) के साथ धारा 2(एच) में संदर्भित "पक्षकार" को कार्यवाही से सीधे जुड़े और उसमें शामिल व्यक्ति के रूप में समझा जाना चाहिए और जो मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाही को नियंत्रित करता है। सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी की कि मामले के तथ्यों में मुख्य अभियंता ने समझौते पर हस्ताक्षर किए थे,

मध्यस्थता कार्यवाही में भारत संघ का प्रतिनिधित्व किया था और मध्यस्थता कार्यवाही की सीधी जानकारी थी। गौरतलब है कि रेल मंत्रालय का कार्य क्षेत्र बहुत बड़ा है, जिसमें कई प्रभाग और विभाग शामिल हैं। महाप्रबंधक प्रभाग के शीर्ष पर होता है और उसके पास कई विभागों हेतु नीतियां, दिशा-निर्देश, प्रशासनिक निर्देश देने आदि की जिम्मेदारी होती है। संबंधित विभागों का दिन-प्रतिदिन का प्रबंधन विभागीय प्रमुख के पास होता है, जो वास्तव में जानता है कि मामला क्या है और मध्यस्थता अधिनिर्णय की कमियों, शामिल प्रश्नों के तथ्यात्मक और कानूनी पहलुओं से परिचित है और अधिनिर्णय को चुनौती देने या स्वीकार करने का निर्णय लेने की स्थिति में है। सर्वोच्च न्यायालय ने देखा कि धारा 31(5) के तहत अधिनिर्णय देना महज औपचारिकता का मामला नहीं है, बल्कि यह एक सारगर्भित मामला है क्योंकि यह धारा 33(1) और 34(3) आदि के तहत सीमाओं की कई अवधियों को गति प्रदान करता है। इस निर्णय को पढ़ने से, यह न्यायालय यह स्वीकार करने में असमर्थ है कि "पक्षकार" अभिव्यक्ति का अर्थ मध्यस्थता कार्यवाही में किसी पक्षकार का प्रतिनिधित्व करने वाला अधिवक्ता होगा।

38. ***बनारसी कृष्णा (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय ने ***टेक्को त्रिची (पूर्वोक्त)*** और ***आर्क बिल्डर्स (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा करते हुए कहा कि किसी अधिवक्ता द्वारा कार्यवाही में किसी पक्षकार की ओर से कार्य करना और दलील देना एक बात है और अधिवक्ता द्वारा स्वयं पक्षकार के रूप में कार्य करना दूसरी बात है। 1996 अधिनियम की धारा 2(ज) में परिभाषित "पक्षकार" शब्द स्पष्ट रूप से ऐसे व्यक्ति को इंगित करता है जो मध्यस्थता समझौते का पक्षकार है। यह परिभाषा किसी भी तरह से ऐसे समझौते के पक्षकार के प्रतिनिधि को शामिल करने के लिए योग्य नहीं है और धारा 31(5) और 34(3) में किसी भी संदर्भ का मतलब केवल पक्षकार ही हो सकता है, न कि उसका प्रतिनिधि या अधिवक्ता, जिसे *वकालतनामा* के आधार पर कार्य करने का अधिकार है। इसलिए, 02.08.2018 को अधिवक्ता द्वारा अधिनिर्णय की प्राप्ति को याचिकाकर्ता को

अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति की डिलीवरी के रूप में नहीं माना जा सकता है। याचिकाकर्ता की ओर से यह सही तर्क दिया गया कि सेल के देश भर में इस्पात संयंत्र हैं, उनमें से एक भिलाई इस्पात संयंत्र (बीएसपी) है, जो वर्तमान मामले में 31.07.2007 के संविदा का पक्षकार था और परिणामस्वरूप मध्यस्थता खंड उसमें शामिल था और इसलिए, मध्यस्थता समझौते का हस्ताक्षरकर्ता था। मध्यस्थता अधिनिर्णय याचिकाकर्ता के दिल्ली स्थित कॉरपोरेट कार्यालय के कानूनी विभाग में 06.08.2018 को प्राप्त हुआ और यह 1996 के अधिनियम की धारा 34(3) के तहत अधिनिर्णय को चुनौती देने के उद्देश्य से परिसीमा का प्रारंभिक बिंदु होगा न कि 27.07.2018 या 02.08.2018।

39. इस प्रकार, 06.08.2018 से गणना की जाए तो धारा 34(3) के तहत तीन महीने की परिसीमा अवधि 06.11.2018 को समाप्त हो गई और याचिकाकर्ता को इस तिथि से पहले वर्तमान आपत्तियां फाइल करने का कानूनी अधिकार था, जबकि माना जाता है कि आपत्तियां 12.11.2018 को फाइल की गई थीं। हालांकि, याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आग्रह किया कि फाइलिंग तीन महीने की सीमा अवधि के भीतर किया गया था और समर्थन में उन्होंने न्यायलय को तारीखों के घटनाक्रम के माध्यम से बताया। यह आग्रह किया गया कि तीन महीने की अवधि 06.11.2018 को समाप्त हो गई थी, लेकिन दिवाली की छुट्टी के कारण उच्च न्यायालय 04.11.2018 से 11.11.2018 तक बंद था और याचिका तुरंत 12.11.2018 को दायर की गई थी। यह तथ्य प्रत्यर्थी द्वारा आक्षेपित नहीं है और उच्च न्यायालय के कैलेंडर से पुष्ट होता है, जिसका न्यायालय ने सुनवाई के दौरान अवलोकन किया। परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 4 में प्रावधान है कि जहां किसी वाद, अपील या आवेदन के लिए निर्धारित अवधि उस दिन समाप्त होती है जब न्यायालय बंद होता है, तो वाद, अपील या आवेदन उस दिन संस्थित, पेश या किया जा सकता है जब न्यायालय पुनः खुलता है। याचिकाकर्ता का यह तर्क उचित है और स्वीकार किया जाता है।

40. हालाँकि, मामला यहीं समाप्त नहीं होता है। प्रत्यर्थी ने गंभीर आपत्ति उठाई है कि 12.11.2018 को दायर याचिका कानून की नज़र में एक *गैर-मौजूदा* फाइलिंग थी और इसके समर्थन में फाइलिंग में दोषों को इंगित किया, जिन्हें निर्णय के पहले भाग में विस्तार से सामने लाया गया है और संक्षिप्तता के लिए दोहराया नहीं गया है। संक्षेप में, प्रत्यर्थी के अनुसार, रजिस्ट्री द्वारा इंगित दोष ये थे: (क) याचिका के प्रत्येक पृष्ठ पर हस्ताक्षर किए जाएं; (ख) सत्य कथन में रिक्त स्थान भरे जाएं; (ग) वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम के अनुसार सत्य कथन फाइल किया जाए; (घ) अधिनिर्णय फाइल न किया जाए; (ङ) बुकमार्क किए बिना और पृष्ठांकन के बिना कुल 300 पृष्ठ फाइल किए जाएं; (च) याचिका और आवेदन के समर्थन में शपथ पत्र उम्र, पता आदि के पूर्ण विवरण के साथ फाइल किए जाएं; (छ) कैविएट रिपोर्ट प्राप्त की जाए; (ज) *वकालतनामा* फाइल किया जाए और अधिवक्ता तथा सभी याचिकाकर्ताओं द्वारा हस्ताक्षरित किया जाए; (झ) सभी दस्तावेजों और मुख्तारनामा पर मुहर लगाई जाए; और (ज) न्यायालय शुल्क गायब है।

41. दोनों पक्षकारगण ने 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत याचिका दायर न करने के मुद्दे पर कई निर्णयों पर व्यापक रूप से भरोसा किया। प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने कई दोषों की ओर इशारा किया, जो 12.11.2018 को याचिका की प्रारंभिक फाइलिंग के समय रजिस्ट्री द्वारा उठाए गए थे। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने व्यापक रूप से आग्रह किया कि याचिका दायर करते समय बताए गए सभी दोष जरूरी नहीं कि घातक हों और इस मामले में रजिस्ट्री द्वारा बताए गए दोष ठीक किए जा सकते हैं। इस बात पर जोर दिया गया कि जब तक दस्तावेजों/याचिका का स्वामित्व स्थापित किया जा सकता है, तब तक फाइल करना *गैर-मौजूदा* नहीं कहा जा सकता है और इस संदर्भ में ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त)*** में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय पर जोर दिया गया, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अगर याचिका किसी पक्षकार या उसके अधिकृत और नियुक्त अधिवक्ता के हस्ताक्षर के बिना दायर की जाती है और हर

दोष हेतु, यदि उपाय संभव है, तो फाइलिंग को *गैर-मौजूदा* मानी जा सकती है। मध्यस्थता अधिनिर्णय पर आपत्ति दर्ज कराने का अधिकार एक महत्वपूर्ण अधिकार है और इसे हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए, जब तक कि पक्षकार पूरी तरह से लापरवाह न पाया जाए। इस बात पर ज़ोर दिया गया कि 12.08.2018 को दायर की गई याचिका एक विस्तृत याचिका थी, जिसमें व्यापक आधार थे और याचिका के हर पृष्ठ पर याचिकाकर्ता के अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे; याचिका सत्यापित की गई थी और अधिवक्ता द्वारा हस्ताक्षरित थी और उसके साथ सत्य कथन और *वकालतनामा* था, जिसमें वेलफेयर स्टाम्प की अनुपस्थिति जैसी मामूली खामी थी। सत्य कथन फाइल करने की आवश्यकता वाणिज्यिक न्यायालय अधिनियम, 2015 द्वारा शुरू की गई थी और यह वाद पर लागू होती है और इसे धारा 34 के तहत याचिका पर सख्ती से लागू नहीं किया जा सकता है। जहां तक 12.11.2018 को याचिका के साथ अधिनिर्णय फाइल न करने का सवाल है, तर्क यह था कि यह कोई ऐसा दोष नहीं है जो घातक हो और ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त) में***, न्यायालय ने आपत्ति याचिका फाइल करने में देरी को माफ कर दिया था, जबकि आपत्ति यह थी कि याचिका दायर करने के समय परिसीमा अवधि के भीतर अधिनिर्णय फाइल नहीं किया गया था। दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने जोरदार ढंग से और समान वाक्पटुता के साथ इस दलील का खंडन किया और तर्क दिया कि रजिस्ट्री द्वारा पहली बार फाइल किए जाने पर बताई गई कोई भी खामी ठीक नहीं की जा सकती थी और किसी भी मामले में, अधिनिर्णय फाइल न करना और सत्य का दोषपूर्ण विवरण फाइल करना घातक था और उन्होंने ***विद्या ड्रोलिया (पूर्वोक्त); पैनेसिया बायोटेक लिमिटेड (पूर्वोक्त); प्लैनेटकास्ट टेक्नोलॉजीज लिमिटेड (पूर्वोक्त);*** और ***ओएनजीसी बनाम साई रामा (पूर्वोक्त)*** में दिए गए निर्णयों पर भरोसा किया।

42. मैंने दोनों पक्षकारगण द्वारा प्रस्तुत और उन पर भरोसा किए गए निर्णयों का अवलोकन किया है। दोनों पक्षकारगण द्वारा कई प्रकार के दोषों से निपटने के लिए कई

निर्णयों पर भरोसा किया गया है, लेकिन विस्तार से बचने के लिए, मैं ***विद्या द्रोलिया (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय और ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त), ओएनजीसी बनाम साई रामा (पूर्वोक्त), प्लैनेटकास्ट टेक्नोलॉजीज लिमिटेड (पूर्वोक्त)*** और ***पैनेसिया बायोटेक लिमिटेड (पूर्वोक्त)*** में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठों के निर्णयों का उल्लेख कर सकता हूँ, जो *गैर-मौजूदा* फाइलिंग करने के पहलू पर हैं। ***विद्या द्रोलिया (पूर्वोक्त)*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

> *"186. धारा 34 को इसके वर्तमान स्वरूप में प्रदान करने के पीछे विधायकों का उद्देश्य, पूर्ण अपील प्रक्रिया के बजाय अधिनिर्णय की सीमित समीक्षा करना है। किसी निर्णय पर आपत्ति करने का इरादा रखने वाले पक्षकार को सबसे पहले धारा 34(1) के तहत एक आवेदन फाइल करना होगा, जिसमें आपत्तियों सहित अधिनिर्णय की प्रति और अन्य आवश्यक दस्तावेज भी शामिल होंगे, जो अधिनियम की धारा 34(2)(क) और (ख) के तहत दिए गए आधारों को संतुष्ट करने के लिए सबूत के तौर पर आवश्यक हैं। ऐसी पूरी याचिका अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित समय अवधि के भीतर फाइल की जानी चाहिए, ऐसा न करने पर अपील निरर्थक हो जाती है। धारा 34(3) के तहत निर्धारित परिसीमा आपत्ति दर्ज करने के अधिकार से बंधी हुई है। धारा 34 के तहत दायर की गई आपत्तियां अधिनियम की धारा 34(2) के तहत दिए गए सीमित आधारों से संबंधित होनी चाहिए। विधायी अधिनियम की धारा 34 के तहत कई परिसीमाएँ प्रदान करने का इरादा रखती है, जिनका कड़ाई से पालन किया जाना आवश्यक है ताकि भारतीय मध्यस्थता को समयबद्ध बनाया जा सके और वाणिज्यिक रूप से इसे चुनना विवेकपूर्ण हो। अधिनियम की धारा 37, धारा 34 के आदेश सहित कुछ अन्य निर्दिष्ट आदेशों के विरुद्ध सीमित अपील का प्रावधान करती है।"*

43. ***ओएनजीसी बनाम साई राम (पूर्वोक्त)*** में, इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने कहा कि हर अनुचित फाइलिंग को गैर-मौजूदा नहीं कहा जा सकता। 1996 अधिनियम की धारा 34 अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन दायर करने के लिए कोई विशेष प्रक्रिया निर्दिष्ट नहीं करती है, हालांकि, यह उन आधारों को निर्धारित करती है जिन पर ऐसा आवेदन किया जा सकता है। इस प्रकार, पहली और सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि याचिका में मध्यस्थ अधिनिर्णय को अलग रखने के आधार बताए जाने चाहिए और यह

भी आवश्यक है कि आवेदन के साथ अधिनिर्णय की एक प्रति हो क्योंकि जिस अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है उसकी प्रति के बिना उसे अलग रखने के आधारों की सराहना करना असंभव होगा। निर्णय से प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं:

> *"32. यह ध्यान देने योग्य है कि ए एंड सी अधिनियम की धारा 34 में मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन फाइल करने की कोई विशेष प्रक्रिया निर्दिष्ट नहीं की गई है। हालांकि, इसमें ऐसे आधार बताए गए हैं जिन पर ऐसा आवेदन किया जा सकता है। इस प्रकार, ए एंड सी अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन के लिए पहली और सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता यह है कि इसमें उन आधारों को बताया जाना चाहिए जिन पर आवेदक मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द करने की मांग करता है। यह भी आवश्यक है कि आवेदन के साथ अधिनिर्णय की एक प्रति भी हो क्योंकि चुनौती दिए गए अधिनिर्णय की प्रति के बिना अधिनिर्णय को रद्द करने के आधारों का आकलन करना असंभव होगा। उपरोक्त के अलावा, आवेदन में पक्षकारगण के नाम और उन तथ्यों का उल्लेख होना चाहिए जिनके संदर्भ में आवेदक मध्यस्थता अधिनिर्णय को रद्द करने की मांग करता है।*
>
> *XXX XXX XXX*
>
> *37. इसलिए, यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं के बीच अंतर है जिन्हें ठीक किया जा सकता है और वे दोष जो इतने मौलिक हैं कि आवेदन को ए एंड सी अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन के रूप में बिल्कुल भी नहीं माना जा सकता है।*
>
> *XXX XXX XXX*
>
> *41. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि दिए गए मामलों में बहुत सारे दोष हो सकते हैं। अलग-अलग विचार किए गए प्रत्येक दोष फाइलिंग को गैर-मौजूदा के रूप में प्रस्तुत करने के लिए अपर्याप्त हो सकते हैं। हालांकि, यदि इन दोषों पर संचयी रूप से विचार किया जाता है, तो यह निष्कर्ष निकल सकता है कि फाइलिंग गैर-मौजूदा है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए कि क्या फाइल किया गया आवेदन अप्रमाणित है, न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए कि क्या फाइल किया गया आवेदन, जैसा कि वह है, समझने योग्य है, उसका फाइल किया जाना अधिकृत है; उसके साथ कोई अधिनिर्णय है; तथा उसकी विषय-वस्तु में पक्षकारगण के नाम तथा अधिनिर्णय को चुनौती देने के आधार सहित महत्वपूर्ण विवरण दिए गए हैं।"*

44. ***पैनेसिया बायोटेक लिमिटेड (पूर्वोक्त)*** में, खंड न्यायपीठ को एक बार फिर धारा 34 याचिका के संदर्भ में *गैर-मौजूदा* फाइलिंग करने के मुद्दे पर विचार करने के लिए बुलाया गया था। न्यायालय ने माना कि धारा 34(3) अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए आवेदन फाइल करने के संबंध में प्रक्रिया निर्धारित करती है। हालांकि, फाइलिंग करने की तारीख का पता लगाने के लिए, याचिका में उल्लेखित दोषों की प्रकृति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अधिनिर्णय की प्रति फाइल न करने के विशिष्ट मुद्दे पर खंड न्यायपीठ ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

> *"25. अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत आपत्तियां फाइल करने में पहली कमी यह थी कि याचिकाओं के साथ अधिनिर्णय फाइल नहीं किया गया था। एक प्रश्न यह उठता है कि क्या अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत फाइल किया गया आवेदन, जिसके साथ अधिनिर्णय प्राप्त होने के बावजूद अधिनिर्णय की प्रमाणित प्रति नहीं है, को औपचारिक या घातक दोष माना जाना चाहिए।*
>
> *26. धारा 34 याचिका के साथ अधिनिर्णय फाइल करने के महत्व को मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 39 का संदर्भ देकर समझा जा सकता है, जो किसी अधिनिर्णय को रद्द करने या रद्द करने से इनकार करने वाले आदेश के खिलाफ अपील का प्रावधान करती है। मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 41 के अनुसार धारा 39 के तहत अपील का प्रारूप की विषय-वस्तु सि.प्र.स. के प्रावधानों के अनुसार होनी चाहिए, अर्थात आदेश XLI नियम 1 सि.प्र.स. जैसा कि अधीक्षण अभियंता बनाम बी सुब्बा रेड्डी, (1999) 4 एससीसी 423 में कहा गया है।*
>
> *27. प्रासंगिक रूप से, इस तरह के विनिर्देश को अधिनियम, 1996 में बाहर रखा गया है; वास्तव में, सि.प्र.स. की प्रयोज्यता को अधिनियम, 1996 की धारा 19(1) के तहत विशेष रूप से बाहर रखा गया है। अधिनियम, 1996 किसी अधिनिर्णय के खिलाफ आपत्तियां फाइल करते समय ऐसी कोई प्रक्रिया या दस्तावेज निर्दिष्ट नहीं करता है। हालांकि, उचित और वैध फाइलिंग के नियमों को वर्षों से कानून के सामान्य सिद्धांतों के रूप में लागू किया गया है। इस प्रकार, फाइल करने में दोष ऐसी प्रकृति के नहीं होने चाहिए जो फाइल को निराशाजनक रूप से अपर्याप्त बना दे कि यह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत आवेदन/याचिका के चरित्र को बनाए रखने में विफल हो जाए।*

28. विद्या द्रोलिया (पूर्वोक्त) के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि विधायकों द्वारा अधिनियम, 1996 की धारा 34 को उसके वर्तमान स्वरूप में प्रदान करने का उद्देश्य पूर्ण अपील प्रक्रिया के बजाय अधिनिर्णय की सीमित समीक्षा करना था। धारा 34(3) के अंतर्गत निर्धारित परिसीमा आपत्तियां दायर करने के अधिकार से बंधी हुई है। आपत्तियां अधिनियम की धारा 34(2) के अंतर्गत दिए गए सीमित आधारों से संबंधित होनी चाहिए। किसी निर्णय पर आपत्ति करने का इरादा रखने वाले पक्षकार को सबसे पहले धारा 34(1) के तहत एक आवेदन फाइल करना होगा, जिसमें आपत्तियों के साथ-साथ निर्णय की प्रति और अन्य आवश्यक दस्तावेज भी शामिल होंगे, जो अधिनियम की धारा 34(2)(क) और (ख) के तहत दिए गए आधारों को संतुष्ट करने के लिए सबूत के तौर पर आवश्यक हैं। ऐसी पूरी याचिका अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित समय अवधि के भीतर फाइल की जानी चाहिए, ऐसा न करने पर अपील निरर्थक हो जाती है।

29. इसके अतिरिक्त, धारा 34 के तहत याचिका दायर करने के लिए निश्चित समय सीमा प्रदान करना विधायी इरादा था, जिसका कड़ाई से पालन किया जाना आवश्यक था ताकि मध्यस्थता को समयबद्ध और व्यावसायिक रूप से विवेकपूर्ण बनाया जा सके।

30. यह ध्यान देने योग्य है कि सर्वोच्च न्यायालय ने चिंटेल्स इंडिया लिमिटेड बनाम बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड, (पूर्वोक्त) में कहा था कि अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत आवेदन न केवल धारा 34 के खंड 3 के तहत निर्धारित समय के भीतर होना चाहिए, बल्कि आवेदन करने के आधार को निर्धारित करके धारा 34 (2) और (2 क) के अनुपालन में भी होना चाहिए।

31. अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत याचिका के साथ आक्षेपित अधिनिर्णय की एक प्रति फाइल करने की पूर्व-आवश्यकता पर इस न्यायालय द्वारा कार्यकारी अभियंता बनाम श्री राम कंस्ट्रक्शन, (2010) 120 डीआरजे 615 (डीबी) और एसकेएस पावर जनरेशन (छत्तीसगढ़) लिमिटेड बनाम आईएससी प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड, 2019 एससीसी ऑनलाइन डेल 8006 में जोर दिया गया है।

32. इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉरपोरेशन लिमिटेड बनाम जॉइंट वेंचर ऑफ़ साई रामा इंजीनियरिंग एंटरप्राइजेज और मेघा इंजीनियरिंग एंड इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड, 2023 एससीसी ऑनलाइन डेल 63 में देखा था कि हालांकि अधिनियम, 1996 की धारा 34 किसी अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए आवेदन फाइल करने के लिए कोई विशेष प्रक्रिया निर्धारित नहीं करती है, लेकिन इसमें निश्चित रूप से उन आधारों को निर्धारित करना होगा जिन पर आवेदन

किया गया है। यह भी माना गया कि आवेदन के साथ आक्षेपित अधिनिर्णय भी होना चाहिए क्योंकि अन्यथा उन आधारों को समझना असंभव होगा जिन पर अधिनिर्णय को चुनौती दी गई है। यह निम्नानुसार देखा गया:

> *"42. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि दिए गए मामलों में बहुत सारे दोष हो सकते हैं। अलग-अलग विचार किए गए प्रत्येक दोष फाइलिंग को गैर-मौजूदा के रूप में प्रस्तुत करने के लिए अपर्याप्त हो सकते हैं। हालांकि, यदि इन दोषों को संचयी रूप से माना जाता है, तो यह निष्कर्ष निकल सकता है कि फाइलिंग गैर-मौजूदा है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए कि क्या फाइलिंग गैर-मौजूदा है, न्यायालय को इस प्रश्न का समाधान करना चाहिए कि क्या दायर किया गया आवेदन, जैसा कि दायर किया गया है, समझने योग्य है, इसकी फाइलिंग अधिकृत है; इसके साथ एक अधिनिर्णय है; और सामग्री में पक्षकारगण के नाम और अधिनिर्णय को चुनौती देने के आधार सहित भौतिक विवरण शामिल हैं।"*

33. इसके अलावा, ब्रह्मपुत्र क्रैकर एंड पॉलीमर लिमिटेड बनाम राजशेखर कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड, 2023 एससीसी ऑनलाइन डेल 516 में, इस न्यायालय की एकल पीठ ने निम्न प्रकार से अभिनिर्धारित किया:

> *"15. धारा 34 के तहत एक याचिका मध्यस्थ अधिकरण द्वारा दिए गए अधिनिर्णय को चुनौती देती है। जिस याचिका के साथ उसकी प्रति नहीं दी गई है, उसे धारा 34 के तहत प्रस्तुत वैध चुनौती के रूप में नहीं समझा या पहचाना जा सकता है। अधिनिर्णय फाइल न करना स्पष्ट रूप से एक मौलिक दोष होगा। ऐसा इसलिए क्योंकि अधिनिर्णय फाइल करने का एक अनिवार्य तत्व होगा और इसे एक अपरिवर्तनीय शर्त के रूप में देखा जा सकता है। अधिनियम की धारा 34 के तहत होने का दावा करने वाली एक याचिका जिसमें न तो वे आधार हैं जिन पर अधिनिर्णय का विरोध किया गया है या जो उसकी प्रति संलग्न करने में विफल रहती है, उसे संभवतः अधिनियम की धारा 34 के तहत वैध रूप से शुरू की गई कार्रवाई के रूप में समझा या स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह ध्यान देने योग्य है कि मध्यस्थ निर्णय फाइल न करना एक मौलिक दोष माना गया है और यह स्पष्ट रूप से भारत बायोटेक और तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम लिमिटेड दोनों में फाइलिंग को गैर-मौजूदा बनाता है। दुर्गा कंस्ट्रक्शन कंपनी में डिवीजन बेंच द्वारा फाइलिंग के गैर मौजूदा के मूल सिद्धांत को संक्षेप में समझाया गया था कि यह एक याचिका या एक पक्षकार द्वारा दायर आवेदन है जो इतनी निराशाजनक रूप से अपर्याप्त है या दोषों से ग्रस्त है जो कार्यवाही की प्रथा हेतु स्पष्ट रूप से*

मौलिक हैं। अतः स्पष्ट है कि यदि उपर्युक्त मूल सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाए तो यह स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 34 के अंतर्गत प्रस्तुत की जाने वाली याचिका को तब तक स्वीकृत नहीं माना जा सकता है जब तक कि उसके साथ अधिनिर्णय की प्रति संलग्न न हो।

16. न्यायालय ने यह भी ध्यान में रखा है कि सत्य कथन या अधिनिर्णय के बिना धारा 34 के तहत याचिका दायर करना या याचिका दायर करने का प्रयास करना हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए, खासकर तब जब इसे धारा 34 में निर्धारित सीमा अवधि को शुरू होने से रोकने के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। ऐसे प्रयासों को स्पष्ट रूप से हतोत्साहित और अस्वीकृत किया जाना चाहिए। यह उस बड़ी क्षति को रोकने हेतु है जो न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने हेतु आश्वस्त करती है कि अधिनिर्णय की एक प्रति फाइल करना और सत्य कथन प्रस्तुत करना अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका की आधारभूत, बुनियादी और अपरिहार्य आवश्यकताएँ मानी जानी चाहिए।

34. अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने एम्ब्रोसिया कॉर्नर हाउस (पूर्वोक्त) के मामले पर भरोसा किया था, जिसमें इस न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत याचिका को वैध माना था, भले ही उसके साथ अधिनिर्णय न हो। हालांकि, निर्णय के अवलोकन से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि आक्षेपित अधिनिर्णय को अलग फ़ोल्डर में ई-फाइल नहीं किया गया था, जैसा कि दिल्ली उच्च न्यायालय (मूल पक्ष) नियम, 2018 के तहत आवश्यक था। उन विशिष्ट परिस्थितियों में, आपत्तियों पर विचार किया गया और पहली फाइलिंग को गैर-मौजूदा नहीं पाया गया। स्पष्ट रूप से, ऐसा नहीं है कि अधिनियम की धारा 34 के तहत आपत्तियों के साथ अधिनिर्णय दायर नहीं किया गया था। इसलिए, एम्ब्रोसिया कॉर्नर हाउस (पूर्वोक्त) में शामिल तथ्य स्पष्ट रूप से अलग-अलग हैं।

35. इसके अतिरिक्त, यह देखा गया है कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 30.08.2010 को जारी प्रैक्टिस निर्देश पर अपीलार्थीगण के अधिवक्तागण द्वारा दिया गया भरोसा, जिसमें न्यायालय द्वारा संपूर्ण मध्यस्थता अभिलेख को तलब करने का प्रावधान है, गलत है। न्यायालय को मध्यस्थता अभिलेख को तलब करने में सक्षम बनाने वाली प्रक्रिया की तुलना याचिकाकर्ता द्वारा अधिनिर्णय के साथ याचिका दायर करने की आवश्यकता से नहीं की जा सकती। मध्यस्थ अभिलेख संपूर्ण कार्यवाही का होता है, जिसे बाद में तभी बुलाया जा सकता है, जब अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत याचिका में प्रथम दृष्टया योग्यता पाई जाती है, जो न्यायालय के लिए बाधा होगी, यदि अधिनिर्णय प्रथम दृष्टया दायर नहीं किया जाता है।

36. इसलिए, यह लगातार माना जाता रहा है कि अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत याचिका के साथ अधिनिर्णय फाइल न करना एक घातक दोष है, जिससे ऐसा फाइलिंग करना गैर-मौजूदा हो जाता है। धारा 34 के तहत आपत्तियाँ धारा 34(2) के तहत निर्धारित न्यायोचित आधार पर होनी चाहिए क्योंकि ऐसे आधार केवल विद्वान मध्यस्थ द्वारा दिए गए अधिनिर्णय का संदर्भ देकर ही पता लगाए जा सकते हैं। अधिनिर्णय फाइलिंग करना एक खाली प्रक्रियात्मक आवश्यकता नहीं है क्योंकि अधिनिर्णय के बिना, न्यायालय आपत्ति याचिका में लिए गए आधारों को समझने में पूरी तरह से असमर्थ हो जाता है और इस प्रकार यह निर्णय लेने में असमर्थ हो जाता है कि याचिका नोटिस जारी करने या सीधे खारिज करने के गुणागुण है या नहीं। अधिनिर्णय के अभाव में, जिन आधारों पर आपत्तियां ली गई हैं, उनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता और उन पर विचार नहीं किया जा सकता, यदि वे धारा 34(2) के दायरे में आते हैं और इस प्रकार, बिना आक्षेपित अधिनिर्णय के आपत्तियां फाइल करने से संपूर्ण आपत्तियां अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत विचार हेतु समझ से बाहर हो जाती हैं।

37. इसलिए, न्यायालय के लिए आगे की कार्यवाही के लिए अधिनिर्णय एक अति आवश्यक है, जिसका अर्थ है कि न्यायालय अधिनिर्णय फाइल होने तक आगे की कार्यवाही नहीं कर सकता। पहला कदम अधिनिर्णय फाइल होने पर ही शुरू होगा और इसलिए, फाइलिंग करने की प्रभावी तिथि अनिवार्य रूप से याचिका के समर्थन में अधिनिर्णय फाइल करने की तिथि होगी और तब तक इसे वैध फाइलिंग नहीं माना जा सकता। आवश्यक परिणाम यह है कि अधिनिर्णय फाइलिंग न करना एक घातक दोष है, जो फाइलिंग को गैर-मौजूदा बनाता है।

38. विचाराधीन मामलों में, वर्तमान अपील में, आपत्तियां अधिनिर्णय के साथ प्रस्तुत किए बिना दायर की गई थीं, जिसे केवल 31.07.2019 को दूसरी बार पुनः फाइलिंग करने पर विलम्ब से दायर किया गया है, जो तीन महीने और तीस दिन की अवधि से परे है। यह एक ऐसा दोष है जो घातक है और 31.05.2019 को प्रारंभिक फाइलिंग और 31.07.2019 तक पुनः फाइल करने की बाद की तारीखों को गैर-मौजूदा बनाता है।"

45. उपर्युक्त निर्णयों के अनुसरण में, हाल ही में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने ***यूनियन ऑफ इंडिया बनाम एनसीसी लिमिटेड, मू.वि.या (वाणि) 66/2023*** में 23.02.2024 को निर्णय दिया, जिसमें याचिका को मूल रूप से दायर किए जाने के समय अधिनिर्णय की प्रति न होने के कारण खारिज कर दिया गया। इसलिए, इन सभी निर्णयों में

एक बात समान है कि अधिनिर्णय की प्रति के बिना 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका दायर करना एक *गैर-मौजूदा* फाइलिंग है। याचिका के साथ ही अधिनिर्णय फाइल करने के महत्व को किसी अन्य कारण से कम नहीं आंका जा सकता। 1996 अधिनियम की धारा 31 "मध्यस्थता अधिनिर्णय के प्रारूप और विषय-वस्तु" से संबंधित है तथा उप-धारा (5) में यह अनिवार्य किया गया है कि अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्रत्येक पक्षकार को सौंपी जाएगी। वर्षों से, मध्यस्थता कार्यवाही में किसी पक्षकार को अधिनिर्णय दिए जाने से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर गंभीर बहस और तर्क-वितर्क होते रहे हैं, जैसे कि अधिनिर्णय देने की तिथि और तरीका तथा अधिनिर्णय का प्राप्तकर्ता तथा इन मुद्दों पर कई निर्णय दिए गए हैं। वास्तव में, वर्तमान मामले में भी अधिनिर्णय दिए जाने की तिथि और जिस पक्षकार को दिया गया, वे ही पक्षकारगण के बीच विवादास्पद मुद्दे हैं। धारा 31(5) के तहत अधिनिर्णय देने का यह महत्व और सार्थकता है, इसलिए यह प्रश्न उत्तर मांगता है: क्या कोई पक्षकार, जो अधिनिर्णय देने की तिथि पर गंभीरता से बहस करता है, यह तर्क दे सकता है कि 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका सहित अधिनिर्णय फाइल न करना अप्रासंगिक है और इसका उत्तर केवल एक जोरदार "नहीं" हो सकता है। स्पष्ट रूप से यह नहीं समझा जा सकता है कि मध्यस्थ अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए दायर की गई याचिका, चुनौती दिए गए अधिनिर्णय के बिना दायर की जाएगी।

46. तथ्यों पर वापस आते हुए, निर्विवाद स्थिति यह है कि 12.11.2018 को याचिका के साथ मध्यस्थता अधिनिर्णय फाइल नहीं किया गया था, जब इसे मूल रूप से फाइल किया गया था और सत्य कथन और शपथ पत्रों, आवेदनों और मुख्तारनामा आदि पर हस्ताक्षर करने में गंभीर दोष थे। भले ही तर्क के लिए, न्यायालय को अन्य दोषों को नजरअंदाज करना पड़ा, जो याचिकाकर्ता के अनुसार उद्धृत निर्णयों के संदर्भ में ठीक हो सकते हैं, अधिनिर्णय के बिना फाइल करना गैर-मौजूदा था। याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया कि ***ओएनजीसी बनाम साई रामा (पूर्वोक्त)*** और ***पैनेसिया बायोटेक लिमिटेड***

(पूर्वोक्त) में खंड न्यायपीठों ने ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त)*** में पहले के निर्णय पर विचार नहीं किया है और वे पक्षपातपूर्ण हैं। यह न्यायालय इस मामले में याचिकाकर्ता से सहमत नहीं हो सकता है, क्योंकि ***ओरिएंटल इंश्योरेंस (पूर्वोक्त)*** में खंड न्यायपीठ ने अधिनिर्णय फाइल न करने के मुद्दे पर विशेष रूप से विचार नहीं किया है और निष्कर्ष संचयी रूप से प्रस्तुत किए गए थे। इसके अलावा, ***विद्या द्रोलिया (पूर्वोक्त)*** में सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि अधिनिर्णय पर आपत्ति करने का इरादा रखने वाले पक्षकार को पहले अधिनिर्णय की प्रति सहित धारा 34(1) के तहत एक आवेदन दायर करना आवश्यक है, जो कि इस न्यायालय के लिए बाध्यकारी है, भले ही वह आदेशात्मक हो।

47. एक बार जब यह पाया जाता है कि 12.11.2018 को फाइल किया गया मामला गैर-मौजूदा था, तो इसका परिणाम यह है कि याचिका 1996 अधिनियम की धारा 34(3) के तहत निर्धारित तीन महीने की परिसीमा अवधि के भीतर दायर नहीं की गई थी। धारा 34(3) के परंतुक में, हालांकि, 3 महीने से परे 30 दिनों की क्षमा अवधि प्रदान की गई है और यदि न्यायालय को लगता है कि आवेदक को तीन महीने के भीतर आवेदन करने से पर्याप्त कारण से रोका गया था, तो वह देरी को क्षमा कर सकता है। हालांकि, यह शक्ति एक केवियट द्वारा सीमित है कि 30 दिनों की अवधि से परे क्षमा नहीं दी जा सकती है क्योंकि विधायिका ने "लेकिन उसके बाद नहीं" अभिव्यक्ति का उपयोग किया है। याचिका पर कथित रूप से समय सीमा समाप्त होने के संदर्भ में जांच किए जाने वाला अगला और एकमात्र अन्य प्रश्न यह देखना है कि क्या याचिका को 3 महीने की परिसीमा अवधि की समाप्ति की तारीख से 30 दिनों के भीतर फिर से फाइल किया गया था और फाइल करने की प्रकृति क्या थी, यदि पहले प्रश्न का उत्तर सकारात्मक है।

48. निस्संदेह तीन महीने की सीमा अवधि 06.11.2018 को समाप्त हो गई। 11.11.2018 तक अवकाश के लिए उच्च न्यायालय बंद होने के कारण 12.11.2018 को

फाइल किया गया था। 30 दिनों की अवधि जिसके भीतर देरी को माफ किया जा सकता है, 06.11.2018 से शुरू होगी और 06.12.2018 को समाप्त होगी और, इसलिए, यदि 06.11.2018 को या उससे पहले उचित याचिका दायर नहीं की गई थी, तो इस न्यायालय के पास देरी को माफ करने का कोई अधिकार नहीं होगा। फाइलिंग लॉग और दोनों पक्षकारगण द्वारा उठाई गई आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने पाया कि जब 06.12.2018 को याचिका पुनः दायर की गई थी, तो उसके साथ अधिनिर्णय भी था और सभी भौतिक दोष दूर कर दिए गए थे, सिवाय कुछ छोटी-मोटी खामियों के जैसे कि वादपत्र में फाइल दस्तावेजों/प्रतियों की प्रामाणिकता को सूचित करने वाला कोई कथन नहीं था, इंडेक्स-II पर हस्ताक्षर नहीं किए गए थे, आदि, जो मेरे विचार से, फाइलिंग को गैर-मौजूदा नहीं कहा जा सकता है और इन्हें भी 07.12.2018 को हटा दिया गया था। ***ओएनजीसी बनाम साई राम (पूर्वोक्त)*** में, खंड न्यायपीठ ने निम्नलिखित टिप्पणी की:-

> *"37. इसलिए, यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि प्रक्रियात्मक आवश्यकताओं के बीच अंतर है जिन्हें ठीक किया जा सकता है और वे दोष जो इतने मौलिक हैं कि आवेदन को ए एंड सी अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन के रूप में बिल्कुल भी नहीं माना जा सकता है।*
>
> *38. वर्तमान मामले के तथ्यों के अनुसार, 23.01.2019 को दायर किया गया आवेदन आक्षेपित अधिनिर्णय को चुनौती देने वाला आवेदन नहीं था। वह फाइल करना स्पष्ट रूप से गैर-मौजूदा था। इसी प्रकार, 04.02.2019 को दायर आवेदन भी एक अन्य मामले से संबंधित था, जिसे आक्षेपित अधिनिर्णय को चुनौती देने वाला आवेदन नहीं माना जा सकता था। 22.02.2019 को दायर किया गया आवेदन इंडेक्स के केवल 10 पेज का था। इसे भी आवेदन नहीं माना जा सकता था; हालांकि, 20.02.2019 और 23.02.2019 को दायर आवेदन को गैर-मौजूदा नहीं माना जा सकता है।*
>
> *39. 20.02.2019 को फाइल आवेदन से संबंधित फाइलिंग लॉग में रजिस्ट्री द्वारा नोट किए गए दोष इस प्रकार हैं: -*
>
> > *"कुल 6313 पृष्ठ फाइल किए गए। कैविएट रिपोर्ट प्राप्त की जाए। न्यायालय शुल्क का भुगतान किया जाए। शपथ पत्र सत्यापित नहीं हैं,*

हस्ताक्षरित नहीं हैं। कृपया बुकमार्किंग सही करें। दस्तावेज़ों के खंड बनाए जाएं। ई-फाइलिंग के अतिरिक्त, 22.10.2018 से प्रभावी एआरबी अधिनियम 1996 की धारा 9, 11 और 34 के तहत दायर किए गए नए मामलों की हार्ड कॉपी फाइल करना अनिवार्य है। दस्तावेजों का अभिविन्यास सही होना चाहिए। कृपया बुकमार्किंग सही करें। सभी अनुक्रमणिकाओं को पृष्ठांकित किया जाना चाहिए।"

40. यह ध्यान देने योग्य है कि 20.02.2019 को फाइल किए गए आवेदन के साथ दिए गए शपथ पत्रों पर हस्ताक्षर किए गए थे, लेकिन उन्हें सत्यापित नहीं किया गया था और इस सीमा तक, बताए गए दोष सटीक नहीं हैं। उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि कोई भी दोष मौलिक नहीं है, जिससे प्रस्तुत आवेदन कानून की दृष्टि में गैर-मौजूदा हो। जैसा कि बताया गया है, सभी दोष सुधारे जा सकने वाले दोष हैं। यह स्थापित कानून है कि दलीलों का समर्थन करने वाले शपथ पत्र में किसी भी दोष को ठीक किया जा सकता है। अभिलेख से यह देखा गया है कि फाइल करने के साथ एक निष्पादित वकालतनामा भी था, हालांकि, उस पर मुहर नहीं लगी थी। यह भी स्थापित कानून है कि न्यायलय शुल्क फाइल करना आवश्यक है, हालांकि, आवेदन के साथ न्यायलय शुल्क फाइल न करने का दोष ठीक किया जा सकता है। उपर्युक्त को देखते हुए, हम यह स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि 20.02.2019 या उसके बाद 23.02.2019 को दायर किया गया आवेदन, गैर-मौजूदा था।

41. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि दिए गए मामलों में बहुत सारे दोष हो सकते हैं। अलग-अलग विचार किए गए प्रत्येक दोष, फाइल को गैर-मौजूदा बनाने के लिए अपर्याप्त हो सकते हैं। हालांकि, यदि इन दोषों पर संचयी रूप से विचार किया जाता है, तो यह निष्कर्ष निकल सकता है कि फाइल गैर-मौजूदा है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए कि क्या फाइल किया गया आवेदन गैर-मौजूदा है, न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए कि क्या फाइल किया गया आवेदन, सुबोध है, उसका फाइल किया जाना अधिकृत है; इसके साथ कोई अधिनिर्णय है; और सामग्री में पक्षकारगण के नाम और अधिनिर्णय पर आपत्ति जताने के आधार सहित सामग्री विवरण निर्धारित किया गया है।"

49. मेरा मानना है कि 06.12.2018 को अधिनिर्णय के साथ पूरी याचिका दायर की गई थी और इस दिन फाइल की गई याचिका को गैर-मौजूदा नहीं कहा जा सकता। इसलिए, यदि याचिकाकर्ता पर्याप्त कारण बताने में सक्षम है, तो देरी को माफ किया जा सकता है। देरी के कारणों को स्पष्ट करने वाले अतिरिक्त शपथ पत्र द्वारा समर्थित देरी के लिए माफी

की मांग करते हुए याचिकाकर्ता की ओर से परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत आवेदन दायर किया गया है। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता को ई-मेल के माध्यम से 02.08.2018 (गुरुवार) को अधिनिर्णय की मूल हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त हुई, हालांकि इसे मध्यस्थता समझौते के पक्षकार को दिया जाना चाहिए था। अधिवक्ता द्वारा दिल्ली स्थित कॉरपोरेट कार्यालय में याचिकाकर्ता के विधि विभाग को अधिनिर्णय की मूल हस्ताक्षरित प्रति भेजी गई तथा 06.08.2018 (सोमवार) को प्राप्त हुई। अधिवक्ता द्वारा 17.08.2018 को विधिक राय भेजी गई, जिसमें अधिनिर्णय को चुनौती देने की सलाह दी गई। बीएसपी मध्यस्थता समझौते पर हस्ताक्षरकर्ता था। प्लांट का नेतृत्व सीईओ कर रहे थे, जिनके पास ही यह निर्णय लेने का अधिकार था कि अधिनिर्णय को चुनौती दी जाए या उसे स्वीकार किया जाए। सीईओ के तत्वावधान में बीएसपी के कार्यकारी निदेशक (परियोजनाएं) द्वारा समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। अधिनिर्णय और कानूनी राय की जांच के बाद, अगस्त, 2018 के चौथे सप्ताह में पूरी फाइलें बीएसपी को भेज दी गईं। इसके बाद सभी दस्तावेज आदि 31.08.2018 की नोटशीट में कार्यकारी निदेशक, बीएसपी द्वारा 01.09.2018 को और सीईओ, बीएसपी के समक्ष 05.09.2018 को विचारार्थ प्रस्तुत किए गए। सक्षम प्राधिकारी ने उसी दिन, यानी 05.09.2018 को अधिनिर्णय को चुनौती देने का निर्णय लिया और कानूनी तौर पर सलाह दी गई कि परिसीमा 05.09.2018 से लागू होगा। इस निर्णय की सूचना दिल्ली स्थित विधि विभाग को दी गई, जहां निर्णय को चुनौती देने के लिए आगे की कार्रवाई के रूप में नए अधिवक्ता को नियुक्त करने का निर्णय लिया गया। कुछ विधि फर्मों और अधिवक्तागण का चयन किया गया तथा मामले के गुणागुण पर चर्चा करने और फीस संरचना को समझने हेतु सम्मेलन आयोजित किए गए। अंत में, अक्टूबर 2018 के पहले सप्ताह में मामले को दस्तावेजों के साथ अधिवक्ता को सौंप दिया गया। दस्तावेज हजारों पृष्ठों में थे और उन्हें पिछले अधिवक्ता से एकत्र करने के बाद 12.10.2018 को नए अधिवक्ता को सौंप दिया गया। 29.10.2018 को नए अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के

अधिकारियों को सूचित किया कि संशोधित याचिकाओं आदि में अनुक्रमणिका और अनुलग्नक सहित अभिलेख से कई खंड गायब थे। अधिकारियों के सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद, पूरा अभिलेख प्राप्त नहीं किया जा सका और उपलब्ध सामग्री के साथ याचिका तैयार करने के लिए 11.10.2018 से 01.11.2018 के बीच सम्मेलन आयोजित किए गए। यह भी कहा गया है कि याचिकाकर्ता के अधिवक्ता का कार्यालय 04.11.2018 से 11.11.2018 तक दिवाली की लंबी छुट्टियों हेतु बंद था और इस प्रकार याचिका 12.11.2018 को दायर की गई थी। चूंकि मध्यस्थता अभिलेख 8000 से अधिक पृष्ठों में फैला हुआ था, इसलिए याचिका दायर करने में समय लगा। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया कि देरी अनजाने में, सद्भावनापूर्ण और याचिकाकर्ता के नियंत्रण से परे थी। यह भी तर्क दिया गया कि किसी निर्णय को चुनौती देना एक मूल्यवान अधिकार है और चूंकि याचिकाकर्ता ने निर्णय की मूल हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त होने की तिथि से 3 महीने के भीतर याचिका दायर न करने के लिए पर्याप्त कारण बताए हैं, इसलिए न्याय के हित में देरी को माफ किया जाना चाहिए।

50. अतिरिक्त शपथ पत्र में दिए गए स्पष्टीकरण पर विचार करने के बाद, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि याचिकाकर्ता ने देरी को माफ करने के लिए पर्याप्त कारण बताए हैं। 06.08.2018 को विधि विभाग द्वारा अधिनिर्णय प्राप्त होने के बाद, याचिकाकर्ता के अधिकारियों ने अधिवक्ता से कानूनी राय लेने, नए अधिवक्ता को नियुक्त करने, सम्मेलनों और चर्चाओं का आयोजन करने के लिए मामले को लगन से आगे बढ़ाया और सक्षम प्राधिकारी की ओर से निर्णय लेने में कोई देरी नहीं हुई। तदनुसार देरी को माफ किया जाता है।

<u>गुणागुण पर विश्लेषण और निष्कर्ष:</u>

51. वर्तमान संविदा ऑक्सीजन प्लांट-II, भिलाई में 700 टीडीबी एएसयू4 की स्थापना से संबंधित है। संविदा के तहत, प्रत्यर्थी को आवश्यक संयंत्र और उपकरणों की डिजाइन, निर्माण और आपूर्ति करनी थी तथा 24 महीने में बीएसपी के लिए एएसयू स्थापित और चालू करना था। मेकॉन को परियोजना के लिए तकनीकी सलाहकार नियुक्त किया गया था। संविदा मूल्य 26,912,000 अमेरिकी डॉलर था और 146,66,053/- रुपए की राशि सेनवैट क्रेडिट के रूप में भुगतान की जानी थी। जीसीसी के खंड 13.2 के अनुरूप, प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता के पक्ष में दो पीबीजी अर्थात एक 13,45,600 अमेरिकी डॉलर और दूसरा 86,97,416/- रुपए की राशि हेतु दिनांक 21.08.2007 को प्रस्तुत किए। याचिकाकर्ता ने 01.07.2008 के पत्र के माध्यम से संविदा समाप्त कर दिया।

52. संविदा में मुख्य संविदा समझौता; एससीसी; जीसीसी; संविदा तकनीकी विनिर्देश; सामान्य तकनीकी विनिर्देश; और संविदा कार्यों में सुरक्षा शामिल है। प्रासंगिक संविदात्मक प्रावधान निम्नानुसार हैं:-

<u>क. संविदा</u>

"3.1 <u>प्रभावी तिथि</u> (संदर्भ जीसीसी खंड 1)

संविदा की प्रभावी तिथि संविदा पर हस्ताक्षर करने की तिथि है। ठेकेदार द्वारा संविदा पर हस्ताक्षर करने के 30 (तीस) दिनों के भीतर निष्पादन बैंक गारंटी प्रस्तुत की जाएगी।

निम्नलिखित कार्यवाहियाँ परिकल्पित हैं:

एसबीडी प्रारूप में ठेकेदार से निष्पादन बैंक गारंटी (पीबीजी) प्राप्त होने के 15 (पंद्रह) दिनों के भीतर नियोक्ता द्वारा ऋण पत्र (एल/सी) खोला जाएगा।

यदि नियोक्ता द्वारा ऋण पत्र खोलने में देरी होती है, तो प्रभावी तिथि तदनुसार बढ़ाई जाएगी। हालांकि, यदि ठेकेदार द्वारा पीबीजी प्रस्तुत करने में देरी होती है, तो संविदा की प्रभावी तिथि संविदा पर हस्ताक्षर करने की तिथि के रूप में ही रहेगी, बशर्ते कि पीबीजी प्रस्तुत करने के 15 (पंद्रह) दिनों के भीतर एल/सी खोला गया हो।

5.1 <u>समापन का समय</u> (संदर्भ जीसीसी खंड 8 और परिशिष्ट-2)

समय ही संविदा का सार है।

सुविधाएं संविदा की प्रभावी तिथि से चौबीस (24) महीनों में पूरी हो जाएंगी। नियोक्ता द्वारा जारी किए गए प्रवर्तन प्रमाणपत्र में उल्लिखित प्रवर्तन की तिथि पर सुविधाओं को पूरा माना जाएगा। ठेकेदार द्वारा प्रवर्तन की तिथि से छह (6) महीने की अवधि के भीतर प्रदर्शन गारंटी पैरामीटर स्थापित किए जाएंगे। प्रवर्तन प्रमाणपत्र जारी करने की तिथि से बारह (12) महीने की दोष दायित्व अवधि पूरी होने के बाद ही प्रदर्शन गारंटी पैरामीटर स्थापित होने के बाद ही सुविधाओं को सभी मामलों में पूरा माना जाएगा। सुविधाओं के पूरा होने की समय-सारिणी को दर्शाने वाला बार चार्ट परिशिष्ट-2 में दिया गया है। ठेकेदार जी.सी.सी. के उप-खण्ड 11.7.2 के अनुसार संविदा की समग्र वितरण अनुसूची के भीतर साइट पर निर्माण के लिए आवश्यक तार्किक अनुक्रम में संयंत्र और उपकरण, संरचनाओं और अपवर्तक की आपूर्ति की व्यवस्था करेगा।

6.2 यदि इस संविदा के कार्यान्वयन के बारे में किसी भी मामले पर ठेकेदार और परामर्शदाता के बीच कोई मतभेद है, तो मामले को नियोक्ता को भेजा जाएगा, जिसका निर्णय अंतिम होगा और ठेकेदार और परामर्शदाता दोनों पर बाध्यकारी होगा।

9.1.1 *<u>सुविधाओं के पूरा होने में देरी के कारण परिसमाप्त क्षति</u>*
(संदर्भ जीसीसी उप-खंड 29.2)

यदि ठेकेदार जीसीसी के खंड 1 में परिभाषित "सुविधाओं को पूरा करने" को पूरा करने के समय के भीतर या जीसीसी के खंड 42 (पूरा करने के लिए समय का विस्तार) के तहत किसी भी विस्तार के भीतर नियोक्ता के लिए जिम्मेदार नहीं होने वाले कारणों से प्राप्त करने में विफल रहता है, नियोक्ता निर्धारित क्षति की राशि की वसूली करेगा, लेकिन जुर्माने के रूप में नहीं, ठेकेदार के खाते से कटौती करके या ठेकेदार की बैंक गारंटी को भुनाकर (जीसीसी के उप-खंड 13.1.2 के अनुसार), 0.5% की दर से, कुल संविदा मूल्य प्लस वृद्धि, यदि कोई हो, ठेकेदार को भुगतान या देय करों और कर्तव्यों को छोड़कर, विलंब के प्रति पूर्ण सप्ताह संविदा मूल्य के अधिकतम 6% तक और भुगतान या देय करों और शुल्कों को छोड़कर, यदि कोई हो, जैसा कि जीसीसी के खंड 29.2 में निर्दिष्ट है।

यदि ठेकेदार एक संघ है, तो नियोक्ता संघ के प्रत्येक सदस्य के खाते से कटौती करके या उपरोक्त खंड के अनुसार उनकी बैंक गारंटी को भुनाकर, संविदा मूल्य के

अधिकतम 5% तक, साथ ही वृद्धि, यदि कोई हो, जीसीसी के उप-खंड 7.11.1 में निर्दिष्ट सुविधाओं के संबंधित दायरे के करों और शुल्कों को छोड़कर, परिसमाप्त क्षति की राशि वसूल करेगा, लेकिन दंड के रूप में नहीं। हालांकि, संघ का प्रत्येक सदस्य परिसमाप्त क्षति का भुगतान करने के लिए नियोक्ता के लिए संयुक्त रूप से और व्यक्तिगत रूप से बाध्य होगा।

<u>ख. जीसीसी</u>

1.1 निम्नलिखित शब्दों और अभिव्यक्तियों के अर्थ इस प्रकार होंगे:

"संविदा" का अर्थ नियोक्ता और ठेकेदार के बीच किया गया संविदा समझौता है, साथ ही इसमें संदर्भित संविदा दस्तावेज भी; वे संविदा का गठन करेंगे और ऐसे सभी दस्तावेजों में "संविदा" शब्द का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा।

"संविदा दस्तावेज" का अर्थ संविदा समझौते के अनुच्छेद 1.2 (संविदा दस्तावेज) में सूचीबद्ध दस्तावेज (इसमें कोई संशोधन सहित) है।

"जीसीसी" का अर्थ संविदा की सामान्य शर्तें हैं।

"एससीसी" का अर्थ है संविदा की विशेष शर्तें।

"तकनीकी विनिर्देश" का अर्थ है तकनीकी विनिर्देश, अनुसूचियां, विस्तृत डिजाइन, तकनीकी डेटा के विवरण, प्रदर्शन विशेषताओं का मूल्य और संविदा के अन्य सभी विवरण।

"जीटीएस" का अर्थ है सामान्य तकनीकी विनिर्देश।

"दिन" का अर्थ है ग्रेगोरियन कैलेंडर का कैलेंडर दिन।

"महीना" का अर्थ है ग्रेगोरियन कैलेंडर का कैलेंडर महीना।

"नियोक्ता" का अर्थ है स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (सेल), भिलाई स्टील प्लांट और इसमें नियोक्ता के कानूनी उत्तराधिकारी या अनुमत नियुक्ति शामिल हैं।

"अभियंता" का अर्थ है नियोक्ता द्वारा उप-खंड 17.1 (अभियंता) में दिए गए तरीके से नियुक्त किया गया व्यक्ति और नियोक्ता द्वारा सौंपे गए कर्तव्यों का पालन करना।

"परामर्शदाता" का अर्थ है संविदा समझौते के अनुच्छेद 6 में निर्दिष्ट नियोक्ता द्वारा सौंपे गए कर्तव्यों का पालन करने के लिए एससीसी के खंड 1.4 में नामित व्यक्ति (व्यक्तियों)।

"ठेकेदार" का अर्थ है वह व्यक्ति (व्यक्तियों) जिसकी संविदा निष्पादित करने की बोली नियोक्ता द्वारा स्वीकार की गई है और संविदा समझौता में उसका नाम इस प्रकार है, और इसमें ठेकेदार के कानूनी उत्तराधिकारी या अनुमत नियुक्ति शामिल हैं। यदि संविदा दो या अधिक सदस्यों के संघ के साथ है, तो ठेकेदार का अर्थ संघ के एक या अधिक सदस्यों से होगा, जैसा भी मामला हो

"ठेकेदार के प्रतिनिधि" का अर्थ है ठेकेदार द्वारा नामित कोई व्यक्ति और नियोक्ता द्वारा उप-खंड 17.2 (ठेकेदार के प्रतिनिधि) में दिए गए तरीके से ठेकेदार द्वारा सौंपे गए कर्तव्यों को पूरा करने के लिए अनुमोदित कोई व्यक्ति। साइड वर्क के लिए ठेकेदार के प्रतिनिधि का अर्थ उप-ठेकेदारों और उप-ठेकेदार के उप-ठेकेदारों के प्रतिनिधि से भी होगा।

"उप-ठेकेदार", विक्रेताओं सहित, का अर्थ है कोई भी व्यक्ति जिसे सुविधाओं के किसी भी हिस्से का निष्पादन, किसी भी डिजाइन की तैयारी या किसी भी संयंत्र और उपकरण की आपूर्ति सहित ठेकेदार द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उप-संविदाित किया जाता है, और इसमें उसके कानूनी उत्तराधिकारी या अनुमत नियुक्ति शामिल हैं।

"संविदा मूल्य" का अर्थ है संविदा समझौता के अनुच्छेद 2.1 (संविदा मूल्य) में निर्दिष्ट राशि, जो संविदा के अनुसरण में किए जा सकने वाले ऐसे परिवर्धन और समायोजन या कटौती के अधीन है।

"आधार तिथि" का अर्थ है परिशिष्ट-4 के उप-खंड 2.1 में दी गई तिथि जिसे संविदा समझौता के परिशिष्ट-4 के उप-खंड 2.3 से 2.9 में दिए गए मूल्य भिन्नता सूत्रों में माना जाएगा।

"सुविधाओं" का अर्थ है इसके खंड 7, तकनीकी विनिर्देश और परिशिष्ट 1 के खंड 1.4 में निर्दिष्ट कार्य और इसमें डिज़ाइन और इंजीनियरिंग कार्य, सिविल इंजीनियरिंग कार्य, इस्पात संरचनाओं की आपूर्ति, संयंत्र और उपकरण, रिफ्रैक्टरीज और कमीशनिंग स्पेयर और संविदा के तहत ठेकेदार द्वारा किए जाने वाले इंस्टॉलेशन सेवाएँ शामिल हैं।

"संयंत्र और उपकरण" का तात्पर्य स्थायी संयंत्र, उपकरण, मशीनरी और सभी प्रकार की चीजों से है जिन्हें ठेकेदार द्वारा संविदा के तहत सुविधाओं में प्रदान और शामिल किया जाएगा, लेकिन इसमें ठेकेदार के उपकरण शामिल नहीं हैं।

"स्थापना सेवाएँ" का अर्थ है सुविधाओं के लिए संयंत्र और उपकरण की आपूर्ति के लिए सहायक वे सभी सेवाएँ, जिन्हें ठेकेदार द्वारा संविदा के तहत प्रदान किया जाना है, जैसे कि डिजाइन और इंजीनियरिंग, पर्यवेक्षण कार्य, सीमा शुल्क और बंदरगाह मंजूरी, लोडिंग और अनलोडिंग, विघटन और संशोधन, मध्यवर्ती भंडारण, परिवहन और समुद्री या अन्य समान बीमा का प्रावधान, निरीक्षण, शीघ्रता, साइड तैयारी कार्य (ठेकेदार के उपकरण के प्रावधान और उपयोग और आवश्यक सभी निर्माण सामग्री की आपूर्ति सहित), स्थापना, परीक्षण, प्री-कमीशनिंग, कमीशनिंग, प्रदर्शन गारंटी परीक्षणों का प्रतिपादन, संचालन और रखरखाव मैनुअल का प्रावधान, प्रशिक्षण, आदि।

"ठेकेदार के उपकरण" का अर्थ है सभी संयंत्र उपकरण, मशीनरी, औजार, उपकरण, उपकरण या हर तरह की चीजें जो ठेकेदार द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं की स्थापना, पूरा होने और रखरखाव के लिए आवश्यक हैं, लेकिन इसमें संयंत्र और उपकरण, या सुविधाओं का हिस्सा बनने या बनने के लिए अभिप्रेत अन्य चीजें शामिल नहीं हैं।

"साइट" का अर्थ है वह भूमि और अन्य स्थान जहाँ सुविधाएँ स्थापित की जानी हैं, और ऐसी अन्य भूमि या स्थान जिन्हें साइट का हिस्सा बनाने के लिए संविदा में निर्दिष्ट किया जा सकता है।

"प्रभावी तिथि" का अर्थ है संविदा समझौते पर हस्ताक्षर करने की तिथि।

"समापन समय" का अर्थ है संविदा समझौते और संविदा के प्रासंगिक प्रावधानों में किए गए प्रावधानों के अनुसार अनुच्छेद 5.1 में निर्दिष्ट समय जिसके भीतर सुविधाओं को समग्र रूप से पूरा किया जाना है (या सुविधाओं के एक हिस्से का जहाँ ऐसे हिस्से के पूरा होने के लिए एक अलग समय निर्धारित किया गया है)।

"निरीक्षक"/"निरीक्षण अभियंता" का अर्थ नियोक्ता या उसके कर्तव्य प्राधिकृत प्रतिनिधि द्वारा या उसकी ओर से संविदा के तहत उपकरण, सामग्री, आपूर्ति या कार्य का निरीक्षण करने के लिए नामित कोई व्यक्ति या फर्म होगी।

"प्री-कमीशनिंग" का अर्थ है एकीकृत परीक्षण रन (उच्च तापमान पर संचालन वाली सुविधाओं के मामले में कोल्ड इंटीग्रेटेड ट्रायल रन) का संचालन करने सहित जाँच, परीक्षण और तकनीकी विनिर्देशों में निर्दिष्ट अन्य आवश्यकताओं को पूरा करना, जो ठेकेदार द्वारा खंड 24 (प्रारंभिक स्वीकृति) में दिए गए अनुसार कमीशनिंग की तैयारी में किए जाने हैं।

सुविधाओं की "प्रारंभिक स्वीकृति" का अर्थ है कि सुविधाएँ परिचालन और संरचनात्मक रूप से पूरी हो गई हैं और उन्हें हल्की और साफ स्थिति में रखा गया है, और सुविधाओं की प्री-कमीशनिंग के संबंध में सभी कार्य पूरे हो गए हैं; दूसरे शब्दों में, सुविधाएँ स्टार्ट-अप और कमीशनिंग के लिए उपयुक्त हैं और प्रारंभिक स्वीकृति प्रमाणपत्र खंड 24 (प्रारंभिक स्वीकृति) में दिए गए अनुसार जारी किया गया है।

"प्रारंभिक स्वीकृति प्रमाणपत्र" का अर्थ है प्रारंभिक स्वीकृति परीक्षणों के सफल समापन पर नियोक्ता द्वारा जारी किया जाने वाला प्रमाणपत्र।

"कमीशनिंग" का अर्थ है ठेकेदार द्वारा सुविधाओं का संचालन, जो गारंटीकृत उत्पादन क्षमता के 98% से कम उत्पादन स्तर तक नहीं है, जैसा कि खंड 25 (कमीशनिंग) में प्रदान किया गया है।

"कमीशनिंग प्रमाणपत्र" नियोक्ता द्वारा उप-खंड 25.3 के अनुसार जारी किया जाने वाला प्रमाणपत्र है।

"सुविधाओं का पूरा होना" का अर्थ है कि सुविधाओं को खंड 25 (कमीशनिंग) के अनुसार चालू किया गया है। सुविधाओं को सभी मामलों में पूरा माना जाएगा और तब स्वीकार किया जाएगा जब खंड 27 (प्रदर्शन गारंटी परीक्षण) के अनुसार प्रदर्शन गारंटी पैरामीटर स्थापित किए गए हों और खंड 28 के अनुसार अंतिम स्वीकृति प्रमाणपत्र जारी किया गया हो।

"अधिग्रहण" का अर्थ है कि नियोक्ता, कमीशनिंग प्रमाणपत्र जारी करने के बाद, सुविधाओं की देखभाल और संरक्षण के साथ-साथ नुकसान या क्षति के जोखिम के लिए जिम्मेदार होगा, और उसके बाद सुविधाओं को अपने अधीन कर लेगा।

"प्रदर्शन गारंटी परीक्षण" का अर्थ तकनीकी विनिर्देशों में निर्दिष्ट परीक्षण है, जो यह पता लगाने के लिए किया जाना है कि क्या सुविधाएं खंड 27 (प्रदर्शन

गारंटी परीक्षण) के प्रावधानों के अनुसार तकनीकी विनिर्देशों में निर्दिष्ट प्रदर्शन गारंटियों को प्राप्त करने में सक्षम हैं।

"अंतिम स्वीकृति" का अर्थ सुविधाओं के नियोक्ता द्वारा स्वीकृति है जो ठेकेदार द्वारा खंड 27 (प्रदर्शन गारंटी परीक्षण) के प्रावधानों के अनुसार सुविधाओं की प्रदर्शन गारंटी सहित सभी मामलों में संविदा की पूर्ति को प्रमाणित करती है।

"अंतिम स्वीकृति प्रमाण पत्र" नियोक्ता द्वारा खंड 28 के अनुसार जारी किया जाने वाला प्रमाण पत्र है।

"दोष दायित्व अवधि" का अर्थ है ठेकेदार द्वारा दी गई वारंटी की वैधता की अवधि, जो सुविधाओं के कमीशनिंग प्रमाणपत्र जारी करने की तिथि से शुरू होती है, जिसके दौरान ठेकेदार सुविधाओं के संबंध में दोषों के लिए जिम्मेदार होता है, जैसा कि खंड 30 (दोष दायित्व) में प्रावधान किया गया है।

3.6 संपूर्ण संविदा

संविदा संविदा के विषय मेलर के संबंध में नियोक्ता और ठेकेदार के बीच संपूर्ण संविदा का गठन करता है और संविदा की तिथि से पहले पक्षकारगण के बीच किए गए सभी संचार, वार्ता और समझौतों (चाहे लिखित या मौखिक) को प्रतिस्थापित करता है।

13.5 सुरक्षा के तहत दावे (बैंक गारंटी)

यदि नियोक्ता किसी बैंक गारंटी के तहत किसी भी दावे के लिए खुद को हकदार मानता है, तो वह ठेकेदार को पंजीकृत एयरमेल पोस्ट द्वारा ठेकेदार की चूक को निर्दिष्ट करते हुए सूचित करेगा, जिस पर उसका दावा आधारित है, और वह ठेकेदार से उसे ठीक करने की मांग करेगा। यदि ठेकेदार ऐसी सूचना प्राप्त होने के चौदह दिनों के भीतर सुधार करने या सुधार के लिए कदम उठाने में विफल रहता है, तो नियोक्ता सुरक्षा को आयोजित करने का हकदार होगा।

18.3 प्रगति रिपोर्ट

18.3.1 ठेकेदार उप-खंड 18.2 (निष्पादन का कार्यक्रम) में निर्दिष्ट कार्यक्रम में निर्दिष्ट सभी गतिविधियों की प्रगति की निगरानी करेगा, और हर महीने अभियंता को कम्प्यूटरीकृत नेटवर्क विश्लेषण रिपोर्ट के साथ प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।

18.3.2. प्रगति रिपोर्ट अभियंता को स्वीकार्य प्रारूप में होगी और इसमें निम्नलिखित दर्शाया जाएगा: (क) प्रत्येक गतिविधि के लिए नियोजित प्रतिशत पूर्णता की तुलना में प्राप्त प्रतिशत; और (ख) जहां कोई गतिविधि कार्यक्रम से पीछे है, वहां टिप्पणियां और संभावित परिणाम दिए जाएंगे और सुधारात्मक कार्रवाई की जाएगी।

18.4 निष्पादन की प्रगति

18.4.1 यदि किसी भी समय ठेकेदार की वास्तविक प्रगति उप-खण्ड 18.2 (कार्य-निष्पादन का कार्यक्रम) में निर्दिष्ट कार्यक्रम से पीछे रह जाती है या यह स्पष्ट हो जाता है कि यह इस प्रकार पीछे रह जाएगा, तो ठेकेदार अभियंता के अनुरोध पर, वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए एक संशोधित कार्यक्रम तैयार करेगा और अभियंता को प्रस्तुत करेगा तथा प्रगति में तेजी लाने के लिए उठाए जा रहे कदम के बारे में अभियंता को सूचित करेगा, ताकि उप-खण्ड 18.1 (कार्य-निष्पादन का समय) के अंतर्गत सुविधाओं के पूरा होने के समय के भीतर पूरा हो सके, या उप-खण्ड 42.1 (कार्य-निष्पादन के लिए समय का विस्तार) के अंतर्गत हकदार किसी भी विस्तार, नियोक्ता और ठेकेदार के बीच अन्यथा सहमत किसी भी विस्तारित अवधि को प्राप्त किया जा सके।

18.5.2 ठेकेदार अपने स्वयं के मानक परियोजना निष्पादन योजना और प्रक्रियाओं के अनुसार संविदा को निष्पादित कर सकता है, इस सीमा तक कि वे संविदा में निहित प्रावधान के साथ टकराव नहीं करते हैं।

19.1 अनुमोदित उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं की सूची (परिशिष्ट 6) जो संविदा संविदा का हिस्सा है, आपूर्ति या सेवाओं की प्रमुख मदों को निर्दिष्ट करती है और प्रत्येक मद के समक्ष अनुमोदित उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं के नाम को इंगित करती है। जब तक किसी उप-ठेकेदार/विक्रेता को ऐसी किसी मद के समक्ष सूचीबद्ध नहीं किया जाता है, तब तक ठेकेदार संविदा संविदा के परिशिष्ट-8 में दी गई अनुमोदित सूची में शामिल करने के लिए ऐसी मद के लिए उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं की सूची तैयार करेगा।

नियोक्ता ठेकेदार द्वारा प्रस्तावित उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं की ऐसी सूची पर 15 दिनों की अवधि के भीतर अनुमोदन या टिप्पणी देगा।

ठेकेदार समय-समय पर अनुमोदित सूची में किसी भी अतिरिक्त को नियोक्ता के समक्ष पर्याप्त समय में स्वीकृति के लिए प्रस्तावित कर सकता है ताकि सुविधाओं पर काम की प्रगति में बाधा न आए। किसी भी उप-ठेकेदार/विक्रेता के लिए नियोक्ता

द्वारा ऐसा अनुमोदन ठेकेदार को संविदा के तहत अपने किसी भी दायित्व, कर्तव्य या जिम्मेदारी से मुक्त नहीं करेगा।

19.2 ठेकेदार उप-खण्ड 19.1 में उल्लिखित अपनी सूची में सूचीबद्ध लोगों में से ऐसे प्रमुख मद के लिए अपने उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं का चयन करेगा। किसी भी उप-ठेकेदार/विक्रेता को अतिरिक्त मद के लिए ऐसे किसी उप-ठेकेदार/विक्रेता के साथ तब तक नहीं रखा जाएगा जब तक कि उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं को नियोक्ता द्वारा लिखित रूप में अनुमोदित नहीं किया जाता है और उनके नाम संविदा संविदा के परिशिष्ट 8 में दी गई अनुमोदित उप-ठेकेदारों/विक्रेताओं की सूची में नहीं जोड़े जाते हैं।

20.1.1 ठेकेदार संविदा के प्रावधान के अनुपालन में बुनियादी और विस्तृत डिजाइन और इंजीनियरिंग कार्य को निष्पादित करेगा, या जहां ऐसा निर्दिष्ट नहीं है, वहां अच्छे इंजीनियरिंग अभ्यास के अनुसार निष्पादित करेगा।

20.3.1 ठेकेदार संविदा संविदा के परिशिष्ट-2 के उप-खंड 2.2 के रूप में सूचीबद्ध डिजाइन/दस्तावेजों को तैयार करेगा (या अपने उप-ठेकेदारों से तैयार करवाएगा) तथा उन्हें उप-खंड 18.2 (कार्यक्रम का निष्पादन) की आवश्यकताओं के अनुसार तथा निर्दिष्ट रूप में अनुमोदन या समीक्षा के लिए अभियंता/परामर्शदाता को प्रस्तुत करेगा।

20.3.2 अभियंता/परामर्शदाता द्वारा अनुमोदित किए जाने वाले डिजाइन/दस्तावेजों द्वारा कवर या उनसे संबंधित सुविधाओं के किसी भी भाग को अभियंता/परामर्शदाता के अनुमोदन के बाद ही निष्पादित किया जाएगा।

20.3.5 उप-खण्ड 20.3.1 से 20.3.3 के अनुसार अभियंता/परामर्शदाता द्वारा अभियंता / परामर्शदाता के अनुमोदन की आवश्यकता वाले किसी भी डिजाइन / दस्तावेज की प्राप्ति के चौदह (14) दिनों के भीतर, अभियंता/परामर्शदाता या तो इसकी एक प्रति ठेकेदार को अपनी स्वीकृति के साथ लौटा देगा या ठेकेदार को लिखित रूप में अपनी अस्वीकृति और उसके कारणों और अभियंता / परामर्शदाता द्वारा प्रस्तावित संशोधनों के बारे में सूचित करेगा।

अभियंता / परामर्शदाता संशोधित डिजाइन पर कोई नई टिप्पणी नहीं देगा, जहां सभी टिप्पणियां डिजाइन में शामिल की गई हैं, यदि अभियंता / परामर्शदाता ने

संशोधनों के अधीन डिजाइन / दस्तावेज को मंजूरी दी है; ठेकेदार आवश्यक संशोधन करेगा, जिसके बाद दस्तावेजों को मंजूरी दे दी गई मानी जाएगी।

20.3.6 अभियंता / परामर्शदाता किसी भी दस्तावेज को इस आधार पर अस्वीकृत नहीं करेगा कि दस्तावेज संविदा के किसी निर्दिष्ट प्रावधान का अनुपालन नहीं करता है या यह अच्छे इंजीनियरिंग अभ्यास के विपरीत है।

20.3.7 यदि अभियंता / परामर्शदाता ड्राइंग / दस्तावेज को अस्वीकृत करता है, तो ठेकेदार ड्राइंग / दस्तावेज को संशोधित करेगा और इसे उप-खंड 20.3.5 के अनुसार अभियंता / परामर्शदाता की स्वीकृति के लिए पुनः प्रस्तुत करेगा। यदि अभियंता / परामर्शदाता ड्राइंग / दस्तावेज को संशोधन के अधीन अनुमोदित करता है, तो ठेकेदार आवश्यकता संशोधन करेगा, जिसके बाद दस्तावेज को अनुमोदित माना जाएगा।

29.2.1 यदि ठेकेदार, नियोक्ता के अलावा अन्य कारणों से, इसके खंड 42 (पूरा करने के लिए समय का विस्तार) के अंतर्गत, इसके खंड 1 में परिभाषित सुविधाओं को पूरा करने में, या इसके किसी विस्तार में असफल रहता है, तो नियोक्ता परिसमाप्त क्षति की राशि वसूल करेगा, लेकिन जुर्माने के रूप में नहीं, बल्कि ठेकेदार के खाते से कटौती करके या ठेकेदार की बैंक गारंटी को संविदा मूल्य के 0.5% की दर से, देरी के प्रत्येक पूरे सप्ताह के लिए, संविदा मूल्य के अधिकतम 5% तक और करों और शुल्कों को छोड़कर, यदि कोई हो, वृद्धि के रूप में वसूल करेगा।

42.1 परिशिष्ट-2 में निर्दिष्ट पूर्णता के लिए समय बढ़ाया जाएगा यदि ठेकेदार को निम्नलिखित में से किसी भी कारण से संविदा के तहत अपने किसी भी दायित्व के निष्पादन में देरी या बाधा होती है:

> *क) इसके खंड 41 (सुविधाओं में परिवर्तन) में दिए गए अनुसार सुविधाओं में कोई परिवर्तन*
>
> *ख) इसके खंड 39 (अनिवार्य बाध्यता) में दिए गए अनुसार किसी अनिवार्य बाध्यता की घटना, या इसके उप-खंड 34.2 के पैरा (क) और (ख) में निर्दिष्ट या संदर्भित किसी भी मामले की अन्य घटना*
>
> *ग) इसके खंड 43 (निलंबन) के तहत नियोक्ता द्वारा दिया गया कोई निलंबन आदेश*

घ) इसके खंड 10 के तहत नियोक्ता द्वारा चूक, यदि सुविधाओं के पूरा होने में देरी का कारण साबित होती है

ऐसी अवधि तक जो सभी परिस्थितियों में उचित रूप से उचित होगी और जो ठेकेदार द्वारा सहन की गई देरी या बाधा को उचित रूप से दर्शाएगी।

44.1 नियोक्ता की सुविधा हेतु समाप्ति

44.1.1 नियोक्ता किसी भी समय ठेकेदार को समाप्ति की सूचना देकर किसी भी कारण से संविदा को समाप्त कर सकता है जो कि खंड 44.1 को संदर्भित करता है।

44.1.2 उप-खंड 44.1.1 के तहत समाप्ति की सूचना प्राप्त होने पर, ठेकेदार या तो तुरंत या समाप्ति की सूचना में निर्दिष्ट तिथि पर

क) ऐसे काम को छोड़कर, जिसे नियोक्ता पहले से ही निष्पादित सुविधाओं के उस हिस्से की सुरक्षा के लिए बिक्री के उद्देश्य से समाप्ति की सूचना में निर्दिष्ट कर सकता है, या साइट को साफ और सुरक्षित स्थिति में छोड़ने के लिए आवश्यक किसी भी काम को छोड़कर, आगे के सभी काम बंद कर देगा।

ख) नीचे दिए गए पैराग्राफ (डी) (II) के अनुसार नियोक्ता को सौंपे जाने वाले उप-संविदाओं को छोड़कर, सभी उप-संविदाओं को समाप्त करें

ग) साइट से ठेकेदार के सभी उपकरण हटा दें, ठेकेदार और उसके उपठेकेदारों के कर्मियों को साइट से वापस बुला लें, साइट से किसी भी प्रकार का मलबा, कचरा और मलबा हटा दें, और पूरी साइट को साफ और सुरक्षित स्थिति में छोड़ दें

घ) इसके अलावा, ठेकेदार, इसके उप खंड 44.1.3 में निर्दिष्ट भुगतान के अधीन,

(i) समाप्ति के आंकड़ों तक ठेकेदार द्वारा निष्पादित सुविधाओं के हिस्सों को नियोक्ता को सौंपना

(ii) जहां तक कानूनी रूप से संभव हो, समाप्ति की तारीख पर सुविधाओं और संयंत्र और उपकरण के लिए ठेकेदार के सभी अधिकार, शीर्षक और लाभ नियोक्ता को सौंपें, और, ठेकेदार और उसके उपठेकेदारों के बीच संपन्न कोई भी उपसंविदा में, जैसा कि नियोक्ता द्वारा आवश्यक हो

(iii) सुविधाओं के संबंध में समाप्ति की तिथि पर ठेकेदार या उसके उपठेकेदारों द्वारा तैयार किए गए सभी डिजाइन, विनिर्देश और अन्य दस्तावेज नियोक्ता को सौंपें।

44.2 ठेकेदार के चूक हेतु समाप्ति

44.2.2 यदि ठेकेदार

(क) ने संविदा को छोड़ दिया है या अस्वीकार कर दिया है

(ख) बिना किसी वैध कारण के सुविधाओं पर तुरंत काम शुरू करने में विफल रहा है या नियोक्ता से आगे बढ़ने के लिए लिखित निर्देश प्राप्त करने के बाद अट्ठाईस (28) दिनों से अधिक समय के लिए संविदा के निष्पादन की प्रगति को निलंबित कर दिया है।

(ग) संविदा के अनुसार संविदा निष्पादित करने में लगातार विफल रहता है या उचित कारण के बिना संविदा के तहत अपने दायित्वों को पूरा करने में लगातार लापरवाही करता है

(घ) इस अनुच्छेद के खंड 18 (प्रदर्शन का कार्यक्रम) के तहत प्रस्तुत कार्यक्रम में निर्दिष्ट तरीके से सुविधाओं को निष्पादित करने और पूरा करने के लिए पर्याप्त सामग्री, सेवाएं या श्रम (पर्याप्त संसाधन) प्रदान करने से इनकार करता है या असमर्थ है, प्रगति की दर जो नियोक्ता को उचित आश्वासन देती है कि ठेकेदार इस अनुच्छेद के खंड 8 के अनुसार पूरा होने के समय तक सुविधाओं को पूरा कर सकता है,

तब नियोक्ता, संविदा के तहत अपने किसी अन्य अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ठेकेदार को एक नोटिस दे सकता है जिसमें चूक की प्रकृति बताई जाएगी और ठेकेदार को उसमें सुधार करने के लिए कहा जाएगा। यदि ठेकेदार ऐसी सूचना प्राप्त होने के चौदह (14) दिनों के भीतर सुधार करने या सुधार के लिए कदम उठाने में विफल रहता है, तो नियोक्ता ठेकेदार को इस उप-धारा 44.2 का संदर्भ देते हुए समाप्ति की सूचना देकर संविदा को तुरंत समाप्त कर सकता है।

ग. परिशिष्ट-2

1.1 संविदा समझौते के अनुच्छेद 5 के अनुसार संविदा की प्रभावी तिथि से 24 महीनों के भीतर सुविधाएं चालू कर दी जाएंगी और ठेकेदार द्वारा कमीशन की

तारीख से छह (6) महीनों के भीतर गारंटीकृत प्रदर्शन पैरामीटर स्थापित किए जाएंगे।(..)

2.1 संविदा की प्रभावी तिथि से चार सप्ताह के भीतर, ठेकेदार अनुमोदित संख्या प्रणाली का उपयोग करके शीर्षक द्वारा सभी डिजाइन और दस्तावेजों की प्रारंभिक सूची अभियंता/परामर्शदाता को प्रस्तुत करेगा और खंड 2.2 और 2.3 में दी गई समय सारिणी के अनुरूप डिजाइन को प्रस्तुत करने की अनुसूची को इंगित करेगा। यह सूची ठेकेदार द्वारा वर्ष की प्रत्येक तिमाही के अंत में अद्यतन और प्रस्तुत की जाएगी।

<u>घ. तकनीकी विशिष्टताएँ</u>

03.04 *निविदाकर्ता संयंत्र और उपकरण के लिए कोई वैकल्पिक योजना या संशोधन प्रस्तुत कर सकता है जिसे वह संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक समझे। जब तक कि यह इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश को प्रभावित न करे। हालांकि, ऐसे सभी परिवर्तन और संशोधन के लिए क्रेता से पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना होगा, ऐसे वैकल्पिक प्रस्ताव के लिए मूल्य परिवर्तन, यदि कोई हो, अलग से इंगित किया जाएगा।*

06.02.07 *<u>पसंदीदा निर्माताओं की सूची</u>*

निविदाकर्ता को विभिन्न उपकरणों और आपूर्तियों के निर्माण के साथ-साथ उनके लिए निर्देशों के लिए सेप(sic...) के भाग के रूप में संलग्न "उपकरणों और आपूर्तियों के पसंदीदा ब्रांड" का संदर्भ लेना होगा।

उपकरणों के निर्माताओं का चयन उन निर्माताओं और प्रकारों में से किया जाएगा जो नियमित रूप से संयंत्रों में उपयोग किए जा रहे हैं और जो संतोषजनक ढंग से काम कर रहे हैं।

निविदाकर्ता द्वारा प्रस्ताव के साथ संदर्भ सूची प्रदान की जाएगी।

निविदाकर्ता प्रस्ताव में आवश्यक किसी भी विचलन को स्पष्ट करेगा। हीट एक्सचेंजर्स के लिए विक्रेताओं के पास एएसएमई यू-स्टांप और आईएसओ 9000 प्रमाणन होना चाहिए।

अतिरिक्त तकनीकी मदों हेतु निर्माता नीचे दिए गए हैं:

<u>तकनीकी उपकरण</u>

मुख्य एयर कंप्रेसर एवं बूस्टर एयर कंप्रेसर एवं नाइट्रोजन कंप्रेसर	:	*सीमेंस (डेमैग), एटलस कोपको, कोबे मंटार्बो, कूपर*
ब्रेज़्ड एल्यूमीनियम एक्सचेंजर	:	*विक्रेता को अल्पेमा का सदस्य होना चाहिए*
विस्तार टर्बाइन	:	*एटलस, कोप्को, क्रायोस्टार प्रैक्स एयर*
क्रायोजेनिकपंप (एचपीडब्यूटी)	:	*क्रायोस्टार, क्रायोपंप, एसीडी क्रायोमेक, एटलस, कोप्को*
अन्य क्रायो पंपस एच टी मोटर्स	:	*इंडियन कंप्रेसर्स लिमिटेड सीमेंस, एबीबी.जीई, अल्सथॉम*

53. संविदा समाप्त होने पर, प्रत्यर्थी ने मध्यस्थता के लिए अनुरोध भेजा और तीन सदस्यीय मध्यस्थ अधिकरण का गठन किया गया। पक्षकारगण ने अपने-अपने दावे और प्रति-दावे दायर किए और दलीलों के आधार पर, अधिकरण ने निम्नलिखित मुद्दों का निपटान किया:

1.	क्या दावेदार या प्रत्यर्थी संविदा के निष्पादन और कार्यान्वयन में देरी हेतु जिम्मेदार है?
2.	क्या दावेदार द्वारा संयंत्र और उपकरण के लिए वैकल्पिक योजनाओं/संशोधनों/विचलनों का सुझाव संविदा का उल्लंघन था?
3.	क्या प्रत्यर्थी द्वारा भिलाई इस्पात संयंत्र में 700 टीपीडी एएसयू की स्थापना हेतु संबंधित सुविधाओं सहित संविदा की सामान्य शर्त के खंड 44.2 के तहत संविदा को समाप्त करना न्यायसंगत, उचित और कानूनी था।
4.	क्या प्रत्यर्थी द्वारा जोखिम खरीद कार्रवाई उचित और कानूनी थी?
5.	क्या प्रत्यर्थी द्वारा प्रदर्शन बैंक गारंटी का नकदीकरण उचित और कानूनी था? यदि नहीं, तो क्या दावेदार प्रदर्शन बैंक गारंटी के अवैध नकदीकरण के लिए क्षतिपूर्ति का हकदार है?
6.	क्या दावेदार संविदा के तहत बुनियादी इंजीनियरिंग ड्राइंग और विस्तृत डिजाइन इंजीनियरिंग ड्राइंग पर ड्राइंग और दस्तावेजों की तैयारी के लिए किए गए खर्चों के कारण क्षतिपूर्ति का हकदार है? यदि हाँ, तो कितनी राशि में?

7.	क्या दावेदार विक्रेताओं को स्वयं द्वारा किए गए अग्रिम भुगतान के कारण क्षतिपूर्ति का हकदार है? यदि हाँ, तो कितनी राशि में?
8.	क्या दावेदार संविदा के निष्पादन हेतु दावेदार द्वारा किए गए व्यय के लिए क्षतिपूर्ति का हकदार है? यदि हाँ, तो कितनी राशि में?
9.	क्या दावेदार लाभ और साख की हानि के लिए क्षतिपूर्ति का हकदार है? यदि हाँ, तो कितनी राशि में?
10.	क्या प्रत्यर्थी परियोजना के निष्पादन के लिए वैकल्पिक एजेंसी के साथ संविदा करने के लिए अंतर संविदा मूल्य के कारण क्षतिपूर्ति का हकदार है?
11.	क्या प्रत्यर्थी बिजली खपत की अतिरिक्त लागत के कारण क्षतिपूर्ति पाने का हकदार है?
12.	क्या प्रत्यर्थी 01.08.2009 + से 24.05.2011 की अवधि के लिए प्रत्यर्थी द्वारा खरीदी गई 172621.344 मीट्रिक टन मात्रा के लिए ऑक्सीजन की अंतर लागत का हकदार है?
13.	क्या प्रत्यर्थी 8 तिमाहियों हेतु साख पत्र के शुल्क का हकदार है?

54. मुद्दे सं. 1 पर अधिकरण ने निष्कर्ष दिया कि साक्ष्यों से यह स्पष्ट है कि बी.ई.डी. को अस्वीकार करने का मुख्य कारण धारा 03.04 के अनुसार टी.एस. में प्रस्तावित परिवर्तन थे, लेकिन याचिकाकर्ता ने किसी भी परिवर्तन पर गलत तरीके से आपत्ति ली। बी.ई.डी. को अस्वीकार करने का कारण यह था कि प्रत्यर्थी को उन विक्रेताओं को ऑर्डर देने के बाद विभिन्न एल.डी.आई. के टी.एस. को दर्शाते हुए बी.ई.डी. प्रदान करने चाहिए थे, जिनके साथ प्रत्यर्थी को समस्या थी, क्योंकि यह उद्योग अभ्यास के विपरीत था, जिसके अनुसार एल.डी.आई. को ऑर्डर देने से पहले बी.ई.डी. को मंजूरी देना आवश्यक था। अधिकरण ने पाया कि प्रत्यर्थी द्वारा 17.12.2007 तक बी.ई.डी. प्रस्तुत कर दिए गए थे और साथ ही, प्रत्यर्थी एल.डी.आई. के विभिन्न विक्रेताओं से पूछताछ कर रहा था ताकि बी.ई.डी. अनुमोदित होने पर ऑर्डर दे सके। बी.ई.डी. स्वीकृत करने के लिए कई अनुस्मारकों के बावजूद, याचिकाकर्ता ने अनुमोदन में देरी की और परिणामस्वरूप, एल.डी.आई. में देरी हुई। बी.ई.डी. अनुमोदित न होने के बावजूद, प्रत्यर्थी ने संविदा को समय पर पूरा करने के लिए, वास्तव में 18.02.2008 तक मेन हीट एक्सचेंज आदि के लिए ऑर्डर दे दिए और अग्रिम भुगतान कर दिया। प्रत्यर्थी ने कार्ययोजनाओं के साथ अपनी मासिक प्रगति रिपोर्ट

नियमित रूप से प्रस्तुत की तथा जी.सी.सी. के खंड 18.03 और 18.04 के अंतर्गत अपने कर्तव्यों का पालन किया। बी.ई.डी. के पहलू पर, अधिकरण ने पाया कि प्रत्यर्थी द्वारा डी.ई.डी. तैयार करने के अपने दायित्वों का कोई उल्लंघन नहीं किया गया तथा यह भी पाया कि उद्योग क्रिया के अनुसार, डी.ई.डी. को बी.ई.डी. के अनुमोदन के पश्चात ही अंतिम रूप दिया जा सकता है। अधिकरण ने स्वीकार किया कि प्रत्यर्थी ने बी.ई.डी. के अनुमोदन से पूर्व सिविल कार्यों तथा साइट की तैयारी के साथ-साथ निर्माण को आगे बढ़ाने के लिए हर संभव प्रयास किया था तथा कार्यों के निष्पादन के लिए आदेशित किए जाने वाले उपकरणों के लिए डिजाइन तथा दस्तावेज याचिकाकर्ता द्वारा गलत तरीके से विलंबित किए गए थे। इन निष्कर्षों पर पहुंचने के लिए, अधिकरण ने संचार, विशेषज्ञ साक्षीगण सहित साक्षीगण के साक्ष्य पर भरोसा किया। ध्यान देने योग्य बात यह है कि मेकॉन के प्रदर्शन पर, स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड में आधुनिकीकरण और विस्तार पर भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक की रिपोर्ट का संदर्भ दिया गया था, श्री जोन्स, प्रत्यर्थी के साक्षी ने अपनी रिपोर्ट और मौखिक साक्ष्य में विशेष रूप से इस पर भरोसा किया था। उन्होंने कहा कि रिपोर्ट से मंत्रालय के रुख का पता चलता है कि हर समय, परियोजनाओं के निष्पादन के लिए आवश्यक संख्या से अधिक डिजाइन उपलब्ध थे क्योंकि ठेकेदार डिजाइन उपलब्ध कराने में सक्षम थे, लेकिन बड़ा मुद्दा यह था कि डिजाइन अनुमोदित नहीं हो रहे थे। अधिकरण ने नोट किया कि रिपोर्ट में सलाहकारों की नियुक्ति के संबंध में एक सुसंगत नीति की कमी की भी आलोचना की गई थी और कहा गया था कि मेकॉन में कुशल पर्यवेक्षकों और सर्वेक्षणकर्ताओं की भारी कमी थी, जिसका श्री नेहरू के अनुसार परियोजना से कोई लेना-देना नहीं था। इस रिपोर्ट पर, अधिकरण ने पाया कि मेकॉन के संसाधनों की कमी और धीमे अनुमोदन के बारे में शिकायतें इस परियोजना के अनुभव के समान हैं, जैसा कि अभिलेख से पता चलता है।

55. टीएस के खंड 03.04 के अनुसार, संयंत्र और उपकरण के लिए प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित वैकल्पिक योजनाओं/संशोधनों/विचलनों को अस्वीकार करने के पहलू पर, अधिकरण ने पाया कि प्रत्यर्थी को टीएस में वैकल्पिक योजनाओं और संशोधनों का प्रस्ताव करने का निस्संदेह अधिकार है। हालांकि, ऐसे प्रस्तावों के लिए अपेक्षित शर्तें यह होंगी कि प्रत्यर्थी का मानना है कि प्रस्तावित संशोधन संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक है और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देशों को प्रभावित नहीं करता है और महत्वपूर्ण रूप से याचिकाकर्ता की पूर्व अनुमोदन आवश्यक है। धारा 03.04 के अंतर्गत पारस्परिक दायित्वों की व्याख्या करते हुए अधिकरण ने माना कि जब याचिकाकर्ता को संविदा की टीएस में कोई वैकल्पिक योजना/संशोधन या विचलन प्राप्त हुआ, तो वह धारा 03.04 में निर्धारित मापदंडों के विरुद्ध प्रस्ताव की समीक्षा करने और इसे अनुमोदित करने के लिए बाध्य था, यदि प्रत्यर्थी का मानना था कि यह संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक था और इसमें संदेह करने के लिए कोई बाध्यकारी तकनीकी कारण नहीं थे और यह समग्र विवरण/विनिर्देशों को प्रभावित नहीं करता था, लेकिन याचिकाकर्ता किसी अन्य आधार पर प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं कर सकता था। अधिकरण ने आगे कहा कि संविदा के अनुच्छेद 7 और जीसीसी के खंड 19 के अंतर्गत प्रत्यर्थी को विक्रेताओं/उप-ठेकेदारों को नियुक्त करने का अधिदेश दिया गया था, जिन्हें याचिकाकर्ता द्वारा अनुमोदित किया गया था और संविदा के परिशिष्ट-6 में अनुमोदित सूची में शामिल किया गया था। इन दोनों प्रावधानों ने प्रत्यर्थी को याचिकाकर्ता के अनुमोदन हेतु सूची में जोड़ने या हटाने का प्रस्ताव करने की अनुमति दी। टीएस के खंड 06.02.07 में पसंदीदा निर्माताओं के संकेत का भी प्रावधान था और प्रत्यर्थी ने सूची बनाए रखी, जिसे खंड 03.04 के आधार पर संशोधित किया जा सकता था। ऐसा मानते हुए, अधिकरण ने प्रत्यर्थी द्वारा अनुरोधित विशिष्ट संशोधनों और अनुमोदन न करने के लिए याचिकाकर्ता के तर्क की जांच की।

56. शीर्षक 'पीपीयू' के अंतर्गत, अधिकरण ने ठोस तर्क के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि याचिकाकर्ता ने संविदा की समाप्ति से पहले प्रस्तावित पीपीयू को अस्वीकार करने के लिए कोई तकनीकी कारण नहीं बताया, सिवाय इस आधार के कि यह संविदा के अनुरूप नहीं था। अधिकरण की राय में, याचिकाकर्ता के गवाहों द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण प्रत्यर्थी के रुख के मुकाबले स्वीकार्य नहीं थे, जिसने 600 एएसयू का निर्माण किया था। निर्णय का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:-

> *"14.45 पीपीयू प्री-प्यूरीफिकेशन यूनिट है, जो टीएसए का हिस्सा है। टीएसए हवा में अशुद्धियों को अवशोषित करने का कार्य करता है, जिससे धूल, कार्बन मोनोऑक्साइड और नमी दूर हो जाती है। इसमें दो बीईडी हैं, ताकि जब एक उपयोग में हो, तो दूसरा पुनः उत्पन्न जाए।*
>
> *14.46 संविदा से पहले 6 जून 2007 को दावेदार ने तकनीकी प्रश्नों का उत्तर दिया, जिसमें आइटम 2 और आगे ए 2 शामिल हैं*

"2.	*"कृपया अपने वायु शोधन प्रणाली की विशिष्ट विशेषताओं को इंगित करें, जिसके परिणामस्वरूप 2% के बजाय 0.3% कम वायु हानि होती है।*	*अवशोषक में गैस की मात्रा (अवशोषित गैस और मुक्त स्थान की मात्रा सहित) 1579 एनएम1 के बराबर है। दबाव मुक्त होने के दौरान 8 घंटे में एक बार गैस की हानि होती है। सामान्य। गैस की विशिष्ट हानि = (1570 एनएम 3/1 9x 600 3 x 8 घंटे 100% = 0.2% (चेक)।"*

> *पत्र के ए2 में दावेदार द्वारा यह बताया गया कि चक्र समय (क) 2295 बीआर(हीटिंग) (ख) 5,11 बीआर (कूलिंग) और (ग) 0.495 दबाव समय और 0.076 समतुल्य समय था; और 8 घंटे का अवशोषण समय था। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि नवंबर 2006 में पृष्ठ 17 पर सी2 में दावेदार सहित रेंडरर्स को भेजे गए तकनीकी विनिर्देश में चक्र समय, अवशोषण या पुनरुत्पादन के लिए कोई अवधि निर्दिष्ट नहीं की गई थी। जो कुछ भी सामान्य रूप से निर्दिष्ट किया गया था वह एक "पुनरुत्पादन प्रणाली" थी, जिसमें वाहिकाओं (बीईडी) के दो सेट थे। प्रत्यर्थी का तर्क है कि दावेदार ने स्पष्ट रूप से संकेत दिया था कि वे एक पी.पी.यू. की आपूर्ति करेंगे*

जिसमें क्रमशः अवशोषण और पुनरुत्पादन के लिए 8 घंटे का समय होगा। प्रत्यर्थी के समापन प्रस्तुतियों के पैराग्राफ VIA. I, पृष्ठ 8 का संदर्भ लें। श्री शिपोव से श्री आडवाणी ने पूछा कि क्या दावेदार के 6 जून 2007 के पत्र के उपरोक्त अंशों में, दावेदार 8 घंटे के अवशोषण चक्र होने पर 2% के बजाय 0.2% की कम वायु हानि की पेशकश कर रहा था और उन्होंने उत्तर दिया कि दावेदार ने यह नहीं कहा कि गैस की हानि 2% से 0.2% तक कम हो जाएगी, बल्कि केवल यह सूचित किया कि यदि अवशोषण का चक्र 8 घंटे का था, तो हानि 0.2% होगी। सुश्री तारासोवा ने प्रतिपरीक्षा के दौरान कहा कि यह पेशकश इसलिए की गई क्योंकि प्रत्यर्थी ने उनसे 8 घंटे का अवशोषण चक्र और 8 घंटे का पुनरुत्पादन समय प्रदान करने के लिए कहा था और यह संभव था।

14.47 पीपीयू से संबंधित संविदा में प्रासंगिक प्रावधान तकनीकी विनिर्देशों का खंड 06-02-03 है जो 8 घंटे की ड्यूटी चक्र के साथ रेडियल बीईडी टाइप को निर्दिष्ट करता है। ड्यूटी चक्र प्रारंभिक अवस्था से एक समान प्रारंभिक अवस्था तक क्रियाओं का दोहराया गया अनुक्रम है, जिसमें अवशोषण और पुनरुत्पादन दोनों शामिल हैं।

"02. <u>वायु शोधन प्रणाली</u>

एडसोर्बर	*8 घंटे की ड्यूटी चक्र वाला रेडियल बीईडी टाइप, जिसमें देरी से बदलाव के मामले में 51-90 मिनट का डिज़ाइन मार्जिन है।*
मात्रा	*दो पात्रों का एक सेट, क्षमता 2 x 100%।"*

ध्यान देने वाली बात यह है कि एडसोर्प्शन और रीजनरेशन के लिए कोई निर्दिष्ट समय नहीं है। यह प्रावधान टेंडर तकनीकी विनिर्देशों में भी था, और श्री नेहरू ने प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि एडसोर्प्शन समय का कोई उल्लेख नहीं किया गया था।

14.48 14 दिसंबर 2007 को, दावेदार ने अपना डिज़ाइन प्रस्तुत किया, जिसमें पी.पी.यू. के लिए 8 घंटे का पूर्ण चक्र समय था, जिसमें 4 घंटे अवशोषण के लिए और 4 घंटे पुनरुत्पादन के लिए थे।

14.49 119 दिसंबर 2007 को, दावेदार ने प्रत्यर्थी को विभिन्न परिशिष्टों के साथ पत्र लिखा, जिसमें पी.पी.पी. परिशिष्ट 6 के लिए प्रस्तावित तकनीकी समाधानों के आधार का वर्णन किया गया था:

" परिशिष्ट 6 पूर्व-शोधन इकाई (पी. पी. यू.)

बीओसी द्वारा निर्मित एएसयू-3 (क्यूपी-II बीएसपी) के मौजूदा पीपीयू में अवशोषण का चक्र 8 घंटे है। यह अवशोषक में प्रवाह की अक्षीय दिशा के कारण होता है। अवशोषण के लिए हवा की गति को स्वीकार्य बनाने के लिए आपको अवशोषक के व्यास को 4 मीटर से अधिक तक बढ़ाना होगा। इससे अवशोषक की ऊंचाई 4 मीटर से कम नहीं होनी चाहिए। इस तरह के डिजाइन में अवशोषक की मात्रा बहुत बड़ी होनी चाहिए और 8 घंटे के अवशोषण के लिए पर्याप्त होनी चाहिए।

क्रायोजेनमैश द्वारा निर्मित अवशोषक के आधुनिक डिजाइन में वायु प्रवाह की रेडियल दिशा होती है। यह तथ्य अवशोषक के आयामों को न्यूनतम करने और रेलवे द्वारा परिवहन के लिए इसे सुविधाजनक बनाने की अनुमति देता है। इससे हमें अपनी सुविधाओं पर अवशोषक का निर्माण करने, उसका परीक्षण करने और उसे आपकी साइट पर स्थापना के लिए तैयार करने का अवसर मिलता है। आयामों को न्यूनतम करने से अवशोषण का 4 घंटे का चक्र बनता है। यह पैरामीटर एएसयू में किसी भी चीज़ को प्रभावित नहीं करता है, लेकिन हमें अपने मानक समाधान (समय की बर्बादी नहीं) का उपयोग करने, आयामों को न्यूनतम करने (वितरण में कोई समस्या नहीं, साइट पर संयोजन) का अवसर देता है, ताकि आपको सबसे अधिक गारंटीकृत निर्भरता पीपीयू की आपूर्ति की जा सके।

उपर्युक्त पहलुओं को ध्यान में रखते हुए हम आशा करते हैं कि पीपीयू के 4 घंटे के चक्र के लिए हमें आपकी स्वीकृति मिल जाएगी, क्योंकि इस निर्णय के बिना हम सिविल कार्यों के डिजाइन और नियोजन के अगले चरण पर आगे नहीं बढ़ सकते।"

14.50 20 और 21 दिसंबर 2007 को हुई बैठक में, 256 प्रत्यर्थी और मेकॉन ने दावेदार के 4 घंटे के अवशोषण और 4 घंटे के पुनरुत्पादन चक्र के प्रस्ताव को "संविदा के अनुरूप नहीं" बताते हुए खारिज कर दिया। 27 दिसंबर 2007 को, मेकॉन ने दावेदार को यह सलाह देते हुए भी लिखा कि 24 और 25 जुलाई 2006 को हुई बैठक में, दावेदार ने अवशोषण के लिए 8 घंटे के चक्र समय की पुष्टि की थी और इसे "संविदा में शामिल किया गया था", और दावेदार "पीपीयू के तकनीकी विनिर्देश में बड़े बदलावों के लिए अनुरोध कर रहा था, जिसका पीपीयू प्रणाली के डिजाइन और आकार के साथ-साथ अधिशोषक की कम मात्रा के कारण पर्याप्त व्यावसायिक प्रभाव होगा। तदनुसार, यह अनुशंसा की जाती है कि मेसर्स जेएससी

क्रायनोजेन को 8 घंटे के अवशोषण समय के माध्यम से उनके प्रस्ताव और संविदा के अनुसार पीपीयू की आपूर्ति करने के लिए कहा जाएगा"।

14.51 प्रत्यर्थी को 10 जनवरी 2008 के पत्र द्वारा, दावेदार ने 8 घंटे के ड्यूटी चक्र के लिए तकनीकी औचित्य प्रदान किया, जिसमें 4 घंटे अवशोषण के लिए और 4 घंटे पुनरुत्पादन के लिए थे। दावेदार ने 16 घंटे के चक्र के साथ-साथ 8 घंटे के चक्र के निर्माण और आपूर्ति के लिए पीपीयू सहित कई प्रणालियों के बारे में कई अवसरों की सलाह दी। इसने संविदा का संदर्भ दिया और कारण बताए कि क्यों इसका प्रस्ताव संविदा और विशेष रूप से मद 6 को संतुष्ट करता है:

> *"6. डिज़ाइन किया गया चक्र निम्नलिखित है:*
>
> | | |
> |---|---|
> | *-अवशोषण:* | *240 मिनट (देरी से बदलाव के मामले में डिज़ाइन किया गया मार्जिन-72 मिनट)* |
> | *-हीटिंग* | *76 मिनट* |
> | *-कूलिंग* | *140 मिनट* |
> | *-फिलिंग* | *19 मिनट* |
> | *-प्रेशर रिलीज* | *5 मिनट* |
> | ***कुल*** | ***400 मिनट (8 घंटे)"।*** |

14.52 मेकॉन ने 14 जनवरी 2008 को दावेदार को पत्र लिखा, जिसमें पुनः 8 घंटे के पीपीवी या अवशोषण समय की मांग की गई, जो "बिल्कुल उनके प्रस्ताव, एमओएम और संविदा के अनुरूप हो" और दावेदार को चेतावनी दी गई कि वह संशोधनों की मांग करके कोई देरी न करे "जिसे इस स्तर पर स्वीकार नहीं किया जा सकता"। यह मेकॉन द्वारा 20 नवंबर 2007 को अपने पत्र में अपनाई गई स्थिति के समान था।

> *"मेसर्स जेएससी क्रायोजेनमैश के साथ संविदा पर 31.07.2007 को हस्ताक्षर किए गए थे। हमें यह बताते हुए खेद है कि मेसर्स जेएससी क्रायोजेनमैश संविदा पर हस्ताक्षर करने के तुरंत बाद संविदा की शर्तों से कई बड़े विचलन की मांग कर रहा है। यह क्रिया स्वीकार्य नहीं है।*
>
> *मेसर्स जेएससी क्रायोजेनमैश को यह ध्यान रखना चाहिए और सुनिश्चित करना चाहिए कि पूरी परियोजना संविदा में निर्धारित अनुसार ही निष्पादित की जाए क्योंकि ईएसपी के लिए मेरे विचलन के लिए सहमत होना संभव नहीं होगा।*

मेसर्स जेएससी क्रायोजेनमैश ईएसपी और जेएससी क्रायोजेनमैश द्वारा हस्ताक्षरित संविदा के अनुरूप परियोजना समय पर निष्पादित करने के लिए संविदात्मक रूप से बाध्य है।"

14.53 18 जनवरी 2008 को, दावेदार ने प्रत्यर्थी को लिखे पत्र में दोहराया कि पीपीवी पर उसके प्रस्तावों का सार, जैसा कि बाद के पत्रों में बताया गया है, "संविदा के साथ किसी भी विचलन की अनुपस्थिति है। हम अपने सर्वोत्तम समाधान को स्वीकृत करने का प्रयास कर रहे हैं जो बहुत विश्वसनीय है, और विनिर्माण में तत्काल लॉन्च करने के लिए तैयार है।"

14.54 25 फरवरी 2008 से 6 मार्च 2008 तक तकनीकी मुद्दों को हल करने के लिए पक्षकारगण और मेकॉन के बीच बैठकें हुईं। कार्यवृत्त विवादास्पद हैं क्योंकि दावेदार ने उन पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया। कार्यवृत्त में कहा गया है कि दावेदार ने पीपीयू के तीन विक्रेताओं की पेशकश की थी, और तीसरे को 8 घंटे के अवशोषण चक्र के साथ स्वीकार कर लिया गया था।

14.55 114 अप्रैल 2008 को, दावेदार ने अपने प्रस्तावित पीपीयू के अनुमोदन में गतिरोध पर निराशा व्यक्त करते हुए प्रत्यर्थी को लिखा:

"यदि आपका उद्देश्य संविदा को तोड़ना है तो सब कुछ स्पष्ट है। यदि आपका उद्देश्य समय पर स्टील उत्पादन को दोगुना करने के लिए आवश्यक मात्रा में ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और आर्गन प्राप्त करना है तो कृपया हमारे पत्रों एच421/18 6095 और 25.12.2007 और एच421/18-43 और 10.01.2008 में दिए गए तर्कों का पालन करें।"

14.56 3 जून 2008 को, दावेदार ने फिर से संविदा और पिछले पत्रों का अनुपालन करते हुए अपने प्रस्ताव का उल्लेख किया।

14.57 1 जुलाई 2008 के उस समाप्ति पत्र में, 265 ग्राउंड 4 पर भरोसा किया गया था कि दावेदार ने 8 घंटे अवशोषण चक्र समय के साथ एक पीपीयू का ऑफर किया था। इस प्रस्ताव में और "संविदा के प्रावधानों के अनुसार इसे प्रदान किया जाना चाहिए था। 4 घंटे के अवशोषण समय के साथ पीपीयू प्रदान करने के लिए मेसर्स जेएससी क्रायोजेनमैश का आग्रह सहमत संविदा का उल्लंघन था।" ऐसा लगता है कि समाप्ति के समय पीपीयू ही एकमात्र वास्तविक प्रमुख मुद्दा बचा था। प्रत्यर्थीगण के 20 मार्च 2008 के पत्र का संदर्भ लें।

14.58 समसामयिक पत्राचार में दिए गए स्पष्टीकरणों के अलावा, जो ऊपर दिए गए हैं कि 4 घंटे का अवशोषण समय और 4 घंटे का पुनरुत्पादन संविदा के अनुसार क्यों था, संयंत्र का बेहतर प्रदर्शन था, और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देशों को प्रभावित नहीं करता है, निम्नलिखित दावेदार के गवाहों/विशेषज्ञों ने अपने गवाह बयानों या परिसाक्ष्य में इन मानदंडों से निपटा:

(क) <u>श्री शिपोव</u> - उनके दूसरे गवाह बयान के पैराग्राफ 13 से 15। उन्होंने कहा कि संविदा में 8 घंटे की ड्यूटी चक्र को प्रत्यर्थी द्वारा गलत तरीके से समझा गया था, जिसका मतलब केवल 8 घंटे का अवशोषण था। प्रत्यर्थी को पीपीयू की तकनीकी विशिष्टताओं को समझाने के विभिन्न प्रयासों के बावजूद, उन्होंने और मेकॉन ने स्पष्टीकरणों की अवहेलना की और गलत तरीके से इसे विचलन कहा, पीपीयू के चक्र समय का इकाई क्षमता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, बल्कि 4 घंटे के अवशोषण ने 8 घंटे के अवशोषण चक्र के विपरीत ऊर्जा की खपत को काफी हद तक कम कर दिया है, और दावेदार द्वारा सभी मॉडेम प्रतिष्ठानों में इसका उपयोग किया जाता है।

(ख) <u>सुश्री तारासोवा</u> - उनके पहले गवाह बयान के पैराग्राफ 23 से 25। उन्होंने श्री शिपोव के समान ही टिप्पणियाँ कीं। उन्होंने प्रतिपरीक्षा में कहा कि सिस्टम में हवा का उतार-चढ़ाव कम होगा और ऊर्जा की खपत कम होगी। साथ ही, रखरखाव की लागत कम है क्योंकि कम अवशोषण सामग्री का उपयोग किया जाता है, और दोनों प्रणालियों में कुल वायु हानि लगभग समान है। इस सवाल के बारे में कि 8 प्लस 8 पर यह अधिक महंगा है, उन्होंने पुष्टि की कि शायद यह होगा लेकिन दावेदार ने 4 प्लस 4 को अधिक बेहतर तकनीकी समाधान माना, जो उपरोक्त कारणों से अधिक स्थिर और लाभकारी है। पुनः जांच करने पर उन्होंने पुष्टि की कि यह अधिक महंगा था क्योंकि यह बड़ा था, लेकिन इसका मतलब उच्च रखरखाव लागत थी।

(ग) <u>श्री क्रिसी जोन्स - उनकी पहली विशेषज्ञ रिपोर्ट के पैराग्राफ 59 से 62, जिसमें उन्होंने कहा:</u>

"61. किसी भी स्थिति में, अवशोषण चक्र चूने को बदलने से विनिर्देशों के भीतर ऑक्सीजन, नाइट्रोजन और आर्गन का निर्माण करने की क्षमता पर कोई भौतिक प्रभाव नहीं पड़ता है। कार्बन डाइऑक्साइड और जल वाष्प जैसी अशुद्धियों को हटाने की

क्षमता चक्र समय, प्रवाह दर, बीईडी की मात्रा (लंबाई और व्यास), अशुद्धता हटाने की दर और अधिशोषक उपयोग सहित कारकों द्वारा नियंत्रित होती है। अधिक सक्रिय बीईडी में तेजी से अवशोषण होता है और इसके लिए कम बीईडी की मात्रा की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत, कम सक्रिय बीईडी में अवशोषण धीमा होता है और इसके लिए कम बीईडी की मात्रा की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत, कम सक्रिय बीईडी में अवशोषण धीमा होता है और इसके लिए अधिक बीईडी की मात्रा की आवश्यकता होती है। जैसे-जैसे चक्र समय बढ़ता है, बीईडी की मात्रा बढ़ती जाती है क्योंकि अशुद्धियों को हटाने के लिए अधिक समय उपलब्ध होता है। एक छोटे बीईडी की मात्रा एक बड़े बीईडी की तुलना में पुनरुत्पादन के लिए कम बिजली की खपत करती है। चुना गया इष्टतम चक्र समय, जिसे एक बुनियादी इंजीनियरिंग डिजाइन में निर्धारित किया जाता है, पूंजी, परिचालन लागत और बीईडी के आयामों के बीच संतुलन है। इसलिए, अवशोषण चक्र चूना प्रक्रिया में उपयोग किए जाने वाले बीईडी की मात्रा, पूंजी और इन्वेंट्री को प्रभावित करता है। अवशोषण चक्र समय चुनने का निर्णय आम तौर पर ईपीसी ठेकेदार द्वारा किया जाता है क्योंकि उनके पास सभी डिज़ाइन खासकर एलएसटीके पूंजी परियोजना हेतु मापदंडों का पूरा परिप्रेक्ष्य होता है।

62. *अधिशोषण चक्र समय का चुनाव साइट की आवश्यकताओं, पूंजीगत लागतों, परिचालन लागतों और आयामी आवश्यकताओं के अनुसार अलग-अलग होगा। क्रायोजेनमैश द्वारा चार घंटे के अधिशोषण चक्र समय का चुनाव उस सीमा के भीतर है जिसकी हम एक सामान्य एएसयू में अपेक्षा करते हैं और यह अच्छे इंजीनियरिंग डिजाइन के अनुरूप है। उदाहरण के लिए, 2014 के एक लेख में चीन (सबसे बड़ा स्टील बाजार और एएसयू प्रौद्योगिकी के बड़े वैश्विक उपयोगकर्ताओं में से एक) में आधुनिक एएसयू डिजाइन की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है, जो क्रायोजेनमैश से सहमत है कि परिवहन के लिए अधिशोषक का आकार महत्वपूर्ण है और चीन की सबसे बड़ी वायु पृथक्करण कंपनी हैंगयांग कंपनी लिमिटेड द्वारा उत्पादित संयंत्र में चार घंटे के अधिशोषण समय का संदर्भ*

> *देता है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि कम अधिशोषण चक्र समय के परिणामस्वरूप छोटी बीईडी का आकार, कम पूंजी और कम बिजली की खपत होती है।"*

प्रतिपरीक्षा में उन्होंने कहा कि पीपीयू में अवशोषण चक्रों का "इकाई के वास्तविक प्रदर्शन पर शून्य प्रभाव पड़ता है"।

14.59 इसके विपरीत, संविदा की अवधि के दौरान, प्रत्यर्थी ने दावेदार द्वारा प्रस्तावित पीपीयू को अस्वीकार करने के लिए कोई तकनीकी कारण नहीं बताया, सिवाय इसके कि यह संविदा (या संविदा से पहले की पेशकश) से विचलन था। अध्यक्ष के एक प्रश्न के उत्तर में, श्री नेहरू ने पुष्टि की कि संविदा के दौरान दिया गया यह एकमात्र कारण था।

(क) <u>श्री नेहरू</u> प्रथम साक्षी कथन अनुच्छेद 24 (खंड XII क)

> *"8 घंटे का अवशोषण चक्र संविदा से एक बड़ा विचलन है। मैं आगे कहता हूं कि वायु शोधन प्रणाली का अवशोषण चक्र 8 घंटे था, और दावेदार ने प्रत्यर्थी को अपने प्रस्ताव में इसकी पेशकश की थी। हालाँकि, संविदा पर हस्ताक्षर करने के बाद, दावेदार ने 4 घंटे के अवशोषण के चक्र के लिए पीपीयू प्रदान करने पर जोर दिया।"*

श्री क्रिसी जोन्स को दिए गए अपने खंडन गवाह बयान में - पैराग्राफ 36 (खंड XII A)

> *"पीपीयू की तकनीकी विशिष्टताओं में उक्त विचलन के लिए संविदा में एक बड़े बदलाव की आवश्यकता थी, और साथ ही पीपीयू और पुनरुत्पादन हीटर के आकार के साथ-साथ अवशोषण की मात्रा कम होने के कारण इसके बड़े व्यावसायिक निहितार्थ भी थे। इसके अलावा, लंबे चक्र समय के लिए कम संख्या में बदलावों की आवश्यकता होती है और साथ ही कम दबाव या दबाव कम होता है और इस तरह अवशोषण की आयु और पीपीयू की दक्षता और जीवनकाल बढ़ता है।"*

उन्होंने प्रस्तावित पीपीयू पर भी भरोसा किया जिससे बिजली की खपत कम होगी।

(ख) श्री त्रिपाठी - सुश्री तारासोवा को खंडन गवाह का बयान - पैराग्राफ 13. उन्होंने कहा कि 8 घंटे का चक्र बिजली की खपत में पर्याप्त वृद्धि नहीं करता है क्योंकि चक्र को तीन बार पूरा करना पड़ता है, जबकि 4 घंटे के चक्र के लिए छह बार पूरा करना पड़ता है और 8 घंटे के चक्र में कम संख्या में बदलाव की आवश्यकता होती है और

साथ ही कम दबाव और दबाव कम होता है जिससे अवशोषक का जीवन और पीपीयू की दक्षता और जीवनकाल बढ़ जाता है।

अधिकरण का निष्कर्ष

14.60 4 घंटे के अवशोषण चक्र समय और 4 घंटे के पुनरुत्पादन के साथ प्रस्तावित पीपीयू संविदा से विचलन नहीं था, जो 8 घंटे के चक्र समय को निर्दिष्ट करता है।

14.61 दावेदार द्वारा संविदा से पहले किए गए 8 घंटे के अवशोषण के प्रस्ताव का कोई आधार नहीं है, तथा संविदा को प्राथमिकता प्राप्त है। अंग्रेजी न्यायालयों के स्पष्ट निर्णय हैं कि पूर्व-संविदा वार्ता का अस्तित्व लिखित समझौते की व्याख्या करने के लिए सामान्यतः स्वीकार्य नहीं है। उदाहरण के लिए, इन्वेस्टर्स कम्पेंसेशन स्कीम बनाम वेस्ट ब्रोमविच बिल्डिंग सोसाइटी (1998) । डब्लूएलआर 896 तथा द रियो एसो (सं. 2) (1999 में रिपोर्ट किया गया) । लॉयड्स रेप 115 24 सीए पर। भारत में कई निर्णयों में इन मामलों के सिद्धांतों का अनुमोदन के साथ उल्लेख किया गया है। इन मामलों के सिद्धांतों का सारांश लुईसन के संविदाओं की व्याख्या के पृष्ठ 91-103 में देखा जा सकता है।

14.62 वैकल्पिक रूप से, यदि दावेदार का प्रस्ताव तकनीकी विनिर्देशों के खंड 03-04 के अंतर्गत तकनीकी विनिर्देशों में संशोधन था, तो प्रस्तावित संशोधन संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक था, और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश को प्रभावित नहीं करता था। इस संबंध में अधिकरण श्री जोन्स सहित दावेदार द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य को स्वीकार करता है कि प्रस्तावित पीपीयू के लाभ ये थे:

(क) दावेदार अपनी सुविधाओं पर एडसोर्बर का निर्माण कर सकता है, इसका परीक्षण कर सकता है और प्रत्यर्थी की साइट पर स्थापना के लिए तैयार कर सकता है;

(ख) आयामों को कम करने से 4 घंटे का अधिशोषण चक्र होता है। अधिशोषण के 4 घंटे के चक्र का उपयोग दावेदार को अपने मानक समाधान का उपयोग करने की अनुमति देगा, जिससे समय दक्षता बढ़ेगी और गारंटीकृत विश्वसनीय पीपीयू की आपूर्ति सुनिश्चित होगी।

(ग) सिस्टम में हवा का उतार-चढ़ाव कम होगा।

(घ) ऊर्जा की खपत कम है।

(ङ) रखरखाव लागत कम है क्योंकि कम अधिशोषण सामग्री का उपयोग किया जाता है।

(च) 4+4 घंटे का चक्र किसी भी तरह से एएसयू पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता।

(छ) प्रस्तावित पीपीयू में टूट-फूट नहीं थी जो इसके जीवनकाल के दौरान उपकरण के कामकाज पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है क्योंकि पीपीयू के विनिर्देशन को डिजाइन करते समय इन मुद्दों को संबोधित किया गया था।

(ज) दोनों प्रणालियों में कुल वायु हानि औसतन समान है।

प्रत्यर्थी ने संविदा की समाप्ति से पहले किसी भी समय प्रस्तावित पीपीयू को अस्वीकार करने के लिए कोई तकनीकी कारण नहीं बताया, सिवाय इसके कि यह संविदा के अनुरूप नहीं था। बाद में गवाहों के बयानों और परिसाक्ष्य में प्रत्यर्थी के गवाहों द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण स्वीकार नहीं किए जाते हैं, और वे दावेदार (जिन्होंने 600 एएसयू का निर्माण किया था) के विपरीत एएसवी के क्षेत्र में विशेषज्ञ नहीं थे।"

57. 'कंप्रेसर के लिए मोटर' शीर्षक के अंतर्गत, मौखिक साक्ष्य और दस्तावेजों के आधार पर, अधिकरण ने माना कि संविदा में सिंक्रोनस मोटर का उपयोग एक गैर-मानक था, जिसका उद्योग में सामान्यतः उपयोग नहीं किया जाता है और प्रत्यर्थी के इस कथन को स्वीकार किया कि एसिंक्रोनस मोटर एक मानक समाधान है, तकनीकी रूप से बेहतर है, संसाधन के लिए आसान है, आदि और इसलिए, सुझाया गया संशोधन इकाई के बेहतर प्रदर्शन के लिए था और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देशों को प्रभावित नहीं करता था और याचिकाकर्ता की अस्वीकृति को गलत पाया। अधिनिर्णय से संबंधित पैराग्राफ नीचे उद्धृत किए गए हैं:-

"14.63 संविदा में कुछ कंप्रेसरों में फिट किए गए सिंक्रोनस मोटर्स के लिए प्रावधान किया गया था, जिसमें मुख्य एयर कंप्रेसर ("एमएसी"), बूस्टन एयर कंप्रेसर ("बीएसी"), उच्च दबाव के नाइट्रोजन टर्बो कंप्रेसर ("इनटीसी एचपी"), कम दबाव के नाइट्रोजन टर्बो कंप्रेसर ("इनटीसी एलपी") और सेंट्रीफ्यूगल एयर कंप्रेसर ("सीएसी") शामिल हैं।

14.64 दावेदार का तर्क है कि सिंक्रोनस मोटर्स का उपयोग मानक बाजार क्रिया नहीं है और सरल बुनियादी निर्माण, मजबूत गुणवत्ता, विश्वसनीयता और कम रखरखाव लागत के कारण एसिंक्रोनस मोटर्स का अधिक बार उपयोग किया जाता है।

14.65 दावेदार ने खंड 03-04 के अनुसार एसिंक्रोनस मोटरों के लिए तकनीकी विनिर्देशों में संशोधन का प्रस्ताव रखा। हालांकि, प्रत्यर्थी ने संविदा में प्रावधान के आधार पर एसिंक्रोनस मोटरों के उपयोग को अस्वीकार कर दिया। इसके बाद दावेदार ने परिशिष्ट 6 के तहत अनुमोदित सूची में विक्रेताओं से संपर्क किया। हालांकि, चूंकि 5 मेगावाट से कम की सिंक्रोनस मोटरों का उपयोग एक गैर-मानक समाधान था, इसलिए किसी भी विक्रेता ने मानक समाधान के रूप में कंप्रेसर के लिए सिंक्रोनस मोटरें प्रदान नहीं कीं और परिणामस्वरूप सिंक्रोनस मोटरों के लिए बहुत अधिक कीमतें उद्धृत कीं। परिस्थितियों में, दावेदार ने उपयुक्त विक्रेता के लिए बाजार की खोज की और श्री नेहरू के कहने पर, प्रिवोड से संपर्क किया।

14.66 19 दिसंबर 2007 के दावेदार के पत्र में कारण बताए गए थे कि एसिंक्रोनस मोटर तकनीकी रूप से सिंक्रोनस मोटर से बेहतर क्यों हैं। उन्होंने 600 एएसयू परियोजनाओं पर ध्यान दिलाया कि उन्होंने कभी भी सिंक्रोनस मोटर का उपयोग नहीं किया, आपूर्तिकर्ताओं को खोजने में कठिनाई और यदि इस मुद्दे पर चर्चा लंबी चली तो परियोजना में संभावित देरी हो सकती है। इसके अलावा, उन्होंने सिंक्रोनस मोटर के रूसी निर्माता, प्रिवोड के साथ चर्चा की थी, जो कंप्रेसर के मापदंडों की गारंटी नहीं दे सकता था।

14.67 श्री जोन्स ने पुष्टि की कि सिंक्रोनस मोटरों का उपयोग असामान्य था

> *"तो यहाँ विशेष रूप से सिंक्रोनस मोटरों के साथ समस्या है - और मैं अपनी रिपोर्ट में यह कहता हूँ - अपनी रिपोर्ट में मैंने एक आरेख दिया और मैंने कहा, हाँ, क्या यह संभव है? ज़रूर, आप सिंक्रोनस मोटरों को सुरक्षित कर सकते हैं, लेकिन क्योंकि यह एक गैर-मानक समाधान है, इसका मतलब है कि आपको अनुकूलता के साथ समस्याएँ हैं, आपको समझने में अधिक समय लगाना होगा और यह लागत का मुद्दा भी नहीं है, आप संविदा की समय सीमा का पालन नहीं कर सकते क्योंकि यह एक गैर-मानक समाधान है।"*

14.68 20 या 21 दिसंबर 2007 को हुई बैठक में प्रत्यर्थी ने विवरणों की जांच के बाद 3 दिनों के भीतर प्रिवोड या सिंक्रोनस मोटरों के लिए विक्रेता को मंजूरी देने पर सहमति जताई। उन्होंने ऐसा नहीं किया और दावेदार ने 26 दिसंबर 2007 को एक पत्र भेजा जिसमें प्रत्यर्थी को एसिंक्रोनस मोटरों का उपयोग करने के लिए मनाने के

लिए 4 महीने तक प्रयास करने और प्रिवोड के साथ चर्चा करने का उल्लेख किया गया।

14.69 अंततः 27 दिसंबर 2007 को प्रत्यर्थी ने प्रिवोड को सिंक्रोनस मोटरों के विक्रेता के रूप में मंजूरी दे दी, लेकिन यह कंप्रेसर निर्माताओं और प्रिवोड से मोटरों की अनुकूलता की पुष्टि के अधीन था।

14.70 9 अप्रैल 2008 को प्रत्यर्थी ने सिंक्रोनस मोटरों सहित मुद्दों के समाधान में देरी के लिए संविदा के तहत जोखिम खरीद कार्रवाई की धमकी दी।

> *"... कंप्रेसर के लिए ऑर्डर देने के बजाय, मेसर्स जेएससी "क्रायोजेनमैश" ने एमएसी, बीएसी और एनटीसी के लिए एसिंक्रोनस मोटर्स के प्रावधान पर जोर दिया, जो संविदा में विनिर्देशों के संबंध में एक बड़ा विचलन है, जो संविदा में विनिर्देशों के संबंध में एक बड़ा विचलन है, जिसमें इन कंप्रेसर के लिए सिंक्रोनस मोटर्स का प्रावधान निर्धारित किया गया था... संविदा पर हस्ताक्षर करने के बाद सिंक्रोनस मोटर्स प्रदान न करने के लिए मेसर्स जेएससी "क्रायोजेनमैश" का आग्रह बिल्कुल भी उचित नहीं है।"*

14.71 सिंक्रोनस मोटर्स के प्रस्तावित संशोधनों की गैर-अनुमोदन पर तर्क, सिंक्रोनस मोटर्स पर जोर, आपूर्तिकर्ताओं को खोजने में कठिनाइयाँ और प्रिवोड को सैद्धांतिक रूप से मंजूरी मिलने के बाद देरी, अनिवार्य रूप से कंप्रेसर को ऑर्डर करने में देरी (बीईडी की गैर-अनुमोदन से जुड़ी) का मतलब था।

14.72 प्रत्यर्थी ने तर्क दिया कि 19 दिसंबर 2007 को प्रिवोड को सैद्धांतिक रूप से मंजूरी मिलने के बाद देरी, दावेदार द्वारा विक्रेताओं से सस्ती कीमत पाने की कोशिश के कारण हुई। प्रत्यर्थी के समापन सबमिशन का पैराग्राफ घ5।
<u>अधिकरण का निष्कर्ष</u>

14.73 अधिकरण ने पाया कि संविदा में सिंक्रोनस मोटरों का उपयोग एक गैर-मानक था, जिसका उद्योग में सामान्यतः उपयोग नहीं किया जाता है। यह दावेदार के स्पष्टीकरण को स्वीकार करता है कि एसिंक्रोनस मोटर एक मानक समाधान है, तकनीकी रूप से बेहतर है, आपूर्तिकर्ताओं से प्राप्त करना आसान है, अधिक मजबूत गुणवत्ता वाला है, अधिक विश्वसनीय है, और इसकी रखरखाव लागत कम है। यह 03-04 की आवश्यकताओं का पालन करता है यदि तकनीकी विनिर्देश इस बात से संतुष्ट थे कि प्रस्तावित संशोधन संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक था, और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देशों को प्रभावित नहीं करता था। इसलिए, प्रत्यर्थी की अस्वीकृति गलत थी। इस घटना में, इसने अनुचित रूप से और

हठपूर्वक सिंक्रोनस मोटरों पर जोर दिया, जैसा कि संविदा द्वारा अपेक्षित था, और वास्तव में अस्वीकृति के लिए यही एकमात्र कारण प्रदान किया गया था। अनिवार्य रूप से, 21 दिसंबर 2007 को प्रिवोड को सैद्धांतिक रूप से मंजूरी मिलने तक आपूर्तिकर्ता खोजने में देरी हुई, लेकिन यह मोटरों की अनुकूलता पर कंप्रेसर निर्माताओं और प्रिवोड की पुष्टि के अधीन था। इसके बाद और देरी हुई, लेकिन एलडीआई ऑर्डर करने में किसी भी देरी के लिए दावेदार को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। प्रत्यर्थी का तर्क कि देरी दावेदार द्वारा एक सस्ता विक्रेता खोजने के कारण हुई थी, खारिज कर दिया जाता है, क्योंकि ऐसा कोई सबूत नहीं है।"

58. अधिनिर्णय में उल्लिखित कारणों और साक्ष्य के आधार पर, अधिकरण ने मुद्दा संख्या 1 को प्रत्यर्थी के पक्ष में तय किया, जिसमें कहा गया कि प्रत्यर्थी संविदा के निष्पादन में महत्वपूर्ण देरी के लिए जिम्मेदार नहीं था और याचिकाकर्ता इस जिम्मेदारी को वहन करता है। मुद्दा सं. 2 भी प्रत्यर्थी के पक्ष में तय किया गया, जिसमें कहा गया कि खंड 03.04 के तहत प्रस्तावित परिवर्तनों को अस्वीकार करने का कोई तकनीकी औचित्य नहीं था।

59. मुद्दा सं. 3 यह था कि क्या याचिकाकर्ता द्वारा संविदा को समाप्त करना न्यायसंगत, उचित और कानूनी था। अधिकरण ने समाप्ति पत्र में दिए गए 9 कारणों में से प्रत्येक की अलग-अलग जांच की और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उद्धृत किए गए किसी भी कारण से जीसीसी के खंड 44.02 के तहत संविदा को समाप्त करना उचित नहीं था। इन निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, अधिकरण ने मुद्दा संख्या 4 के तहत माना कि यह याचिकाकर्ता था जिसने परियोजना में देरी की और गलत तरीके से काम किया और चूंकि प्रत्यर्थी को अनुच्छेद 37 के संदर्भ में लापरवाह नहीं माना जा सकता है, इसलिए जोखिम खरीद कार्रवाई अवैध और गलत थी। मुद्दा सं. 5 से 11 पीबीजी के अवैध नकदीकरण, संविदा के निष्पादन के लिए किए गए व्यय, विक्रेताओं को अग्रिम भुगतान, लाभ की हानि आदि के लिए नुकसान के परिणामी लाभों से संबंधित हैं। सभी मुद्दों का निर्णय प्रत्यर्थी के पक्ष में और याचिकाकर्ता के खिलाफ किया गया। लागत सहित 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज दिया गया।

60. इसमें पक्षकारगण द्वारा उठाए गए विवादास्पद मुद्दों की जांच करने से पहले, 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत मध्यस्थ अधिनिर्णय को चुनौती देने वाली याचिका में अधिकारिता का प्रयोग करते समय इस न्यायालय की शक्ति की सीमाओं और रूपरेखा की जांच करना महत्वपूर्ण है, इस पृष्ठभूमि में कि आक्षेपित अधिनिर्णय 1996 अधिनियम की धारा 2(1)(च) में परिभाषित अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित किया गया था। ***सांगयोंग इंजीनियरिंग (पूर्वोक्त)*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने उन मापदंडों को रेखांकित किया, जिनके आधार पर न्यायालय मध्यस्थ अधिनिर्णय में हस्तक्षेप कर सकते हैं। यह अब और अधिक महत्वपूर्ण नहीं है कि संशोधन अधिनियम, 2015 द्वारा धारा 34 में उप-धारा 2-क को शामिल करके लाया गया 'पेटेंट अवैधता' का आधार केवल घरेलू मध्यस्थता से उत्पन्न अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए उपलब्ध है और अब यह अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित अधिनिर्णय का अवरोध करने हेतु उपलब्ध नहीं है। इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता कि अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित मध्यस्थ निर्णय में हस्तक्षेप का दायरा अत्यंत संकीर्ण और सीमित है।

61. 1996 अधिनियम की धारा 34(2)(ख)(ii) के तहत चुनौती में मध्यस्थ निर्णय को रद्द किया जा सकता है, यदि यह 'भारत की सार्वजनिक नीति' के साथ विरोधाभासी है। इस अभिव्यक्ति, जिसमें 'भारतीय कानून की मौलिक नीति' अभिव्यक्ति शामिल है, की व्याख्या सर्वोच्च न्यायालय ने 1993 में ***रेनुसागर पावर कंपनी लिमिटेड बनाम जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी, 1994 पूरक (1) एससीसी 644*** के ऐतिहासिक मामले में की थी, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने माना था कि विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973 के प्रावधानों का उल्लंघन करने वाला निर्णय, जो राष्ट्रीय आर्थिक हितों की रक्षा के लिए अधिनियमित एक क़ानून है, भारत की सार्वजनिक नीति के विपरीत होगा। इसके अलावा यह भी माना गया कि भारत में उच्च न्यायालयों द्वारा पारित आदेशों की अवहेलना करना भी भारतीय कानून

की मौलिक नीति का उल्लंघन हो सकता है, इस चेतावनी के साथ कि क़ानून के उल्लंघन से सार्वजनिक नीति का प्रतिबंध नहीं लगेगा।

62. ***एसोसिएट बिल्डर्स बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण, (2015) 3 एससीसी 49*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने ***रेनूसागर (पूर्वोक्त)*** में बताए गए भारतीय कानून की मौलिक नीति की अवधारणा की फिर से पुष्टि की, साथ ही तीन न्यायिक सिद्धांतों अर्थात न्यायिक दृष्टिकोण, प्राकृतिक न्याय और विकृति या तर्कहीनता की अनुपस्थिति, जैसा कि ***ऑयल एंड नेचुरल गैस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम वेस्टर्न जीको इंटरनेशनल लिमिटेड, (2014) 9 एससीसी 263*** में समझाया गया है, जिससे न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप के दायरे का विस्तार हुआ। हालांकि, 256वें विधि आयोग ने ऐसी सिफारिशें कीं, जिनका उद्देश्य भारतीय कानून की मौलिक नीति शब्द के संकीर्ण अर्थ को समझना था, जिसके कारण वर्ष 2015 में 1996 के अधिनियम में संशोधन किया गया। विधि आयोग के पिछले निर्णयों और सिफारिशों के गहन और विस्तृत विश्लेषण के बाद, सर्वोच्च न्यायालय ने ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

> *"34. इसलिए, यह स्पष्ट है कि अभिव्यक्ति "भारत की सार्वजनिक नीति", चाहे धारा 34 में हो या धारा 48 में, अब "भारतीय कानून की मौलिक नीति" का अर्थ होगा जैसा कि एसोसिएट बिल्डर्स के पैरा 18 और 27 में समझाया गया है, यानी भारतीय कानून की मौलिक नीति इस अभिव्यक्ति की "रेनुसागर" समझ में आ जाएगी। इसका अनिवार्य रूप से यह अर्थ होगा कि वेस्टर्न गेको का विस्तार समाप्त हो गया है। संक्षेप में, वेस्टर्न गेको, जैसा कि एसोसिएट बिल्डर्स के पैरा 28 और 29 में समझाया गया है, अब इस आधार पर अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने की आड़ में प्राप्त नहीं होगा कि मध्यस्थ ने न्यायिक दृष्टिकोण नहीं अपनाया है, न्यायालय का हस्तक्षेप अधिनिर्णय की गुणागुण पर होगा, जिसे संशोधन के बाद अनुमति नहीं दी जा सकती है। हालांकि, जहां तक प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का सवाल है, जैसा कि 1996 के अधिनियम की धारा 18 और 34(2)(क)(iii) में निहित है, ये किसी अधिनिर्णय को चुनौती देने के आधार बने हुए हैं, जैसा कि एसोसिएट बिल्डर्स के पैरा 30 में निहित है।*

XXX XXX XXX

36. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि भारत की सार्वजनिक नीति अब इस अर्थ में सीमित हो गई है कि पहला, घरेलू अधिनिर्णय भारतीय कानून की मौलिक नीति के विपरीत है, जैसा कि एसोसिएट बिल्डर्स के पैरा 18 और 27 में समझा गया है, या दूसरा, ऐसा अधिनिर्णय न्याय या नैतिकता की बुनियादी धारणाओं के विरुद्ध है जैसा कि एसोसिएट बिल्डर्स के पैरा 36 से 39 में समझा गया है। धारा 34(2)(ख)(ii) के लिए स्पष्टीकरण 2 और धारा 48(2)(ख)(ii) के लिए स्पष्टीकरण 2 को संशोधन अधिनियम द्वारा केवल इसलिए जोड़ा गया था ताकि एसोसिएट बिल्डर्स में समझे गए वेस्टर्न जीईको और विशेष रूप से पैरा 28 और 29 को अब समाप्त कर दिया जाए।

XXX XXX XXX

38. दूसरे, यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अधिनिर्णय के मुखपृष्ठ पर दिखने वाली पेटेंट अवैधता के आधार पर साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन, जो कि अपीलीय न्यायालय को करने की अनुमति है, करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

39. स्पष्ट करने के लिए, एसोसिएट बिल्डर्स के पैरा 42.1, अर्थात् भारत के मूल कानून का मात्र उल्लंघन, अब मध्यस्थ अधिनिर्णय को रद्द करने के लिए उपलब्ध आधार नहीं है। हालाँकि, एसोसिएट बिल्डर्स का पैरा 42.2 बना रहेगा, क्योंकि यदि मध्यस्थ अधिनिर्णय के लिए कोई कारण नहीं बताता है और 1996 अधिनियम की धारा 31(3) का उल्लंघन करता है, तो यह निश्चित रूप से अधिनिर्णय के आधार पर एक स्पष्ट अवैधता होगी।

40. ***संशोधन अधिनियम द्वारा धारा 28(3) में किया गया परिवर्तन वास्तव में एसोसिएट बिल्डर्स में पैरा 42.3 से 45 में बताए गए अनुसार है, अर्थात्, संविदा की शर्तों का निर्माण मुख्य रूप से मध्यस्थ द्वारा तय किया जाना है, जब तक कि मध्यस्थ संविदा को इस तरह से व्याख्यायित न करे कि कोई निष्पक्ष या उचित व्यक्ति ऐसा न करे; संक्षेप में, मध्यस्थ का दृष्टिकोण एक संभावित दृष्टिकोण भी नहीं है। इसके अलावा, यदि मध्यस्थ संविदा से बाहर जाता है और उसे आवंटित नहीं किए गए मामलों से निपटता है, तो वह अधिकार क्षेत्र की त्रुटि करता है। चुनौती का यह आधार अब धारा 34 (2-क) के तहत जोड़े गए नए आधार के अंतर्गत आएगा।***

XXX XXX XXX

42. ***इस तथ्य को देखते हुए कि संशोधित अधिनियम अब लागू होगा, और अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में मध्यस्थता अधिनिर्णयों को रद्द करने के लिए "पेटेंट अवैधता" आधार लागू नहीं होगा, वर्तमान मामले के तथ्यों के लिए लागू धारा 34(2)(क)(iii) और (iv) में निहित आधारों पर ध्यान देना आवश्यक है।***

XXX XXX XXX

44. रेनूसागर में, इस न्यायालय ने विदेशी अधिनिर्णय (मान्यता और प्रवर्तन) अधिनियम, 1961 (विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम) की धारा 7 के तहत एक विदेशी अधिनिर्णय को चुनौती देने पर विचार किया। विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम को तब से 1996 अधिनियम द्वारा निरस्त कर दिया गया है। हालांकि, यह देखते हुए कि विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम की धारा 7 में ऐसे आधार शामिल थे जो विदेशी मध्यस्थ अधिनिर्णयों की मान्यता और प्रवर्तन पर कन्वेंशन, 1958 (न्यूयॉर्क कन्वेंशन) के अनुच्छेद V से उधार लिए गए थे, जो 1996 अधिनियम की धारा 34 और 48 के लगभग समान ही हैं, उक्त निर्णय न्यायिक समीक्षा के मापदंडों को समझने में बहुत महत्वपूर्ण है जब बात विदेशी अधिनिर्णयों या भारत में आयोजित किए जा रहे अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता की आती है, धारा 34 और 48 के तहत प्रवर्तन की चुनौती/अस्वीकृति के आधार क्रमशः समान हैं।"

(जोर दिया गया)

63. ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने नोट किया कि ***रेनुसागर (पूर्वोक्त)*** में, सर्वोच्च न्यायालय ने न्यूयॉर्क कन्वेंशन का उद्धरण देने के बाद अधिनियम की धारा 34 और 48 (विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम, 1961 की धारा 7 के तहत आधार के बराबर) के तहत उठाए गए आधारों की जांच के दायरे को रेखांकित किया था। ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में निर्णय के पैरा 45 में ***रेनुसागर (पूर्वोक्त)*** में प्रासंगिक पैरा का उल्लेख है, जिन्हें पूर्णता और तत्काल संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत किया गया है:-

"34. 1927 के जिनेवा कन्वेंशन के तहत, किसी विदेशी मध्यस्थता अधिनिर्णय को मान्यता या लागू करने के लिए, अनुच्छेद I के खंड (क) से (ड) की आवश्यकताओं को पूरा करना आवश्यक था और अनुच्छेद II में, यह निर्धारित किया गया था कि भले ही अनुच्छेद I में निर्धारित शर्तें पूरी हो गई हों, लेकिन अधिनिर्णय की मान्यता और प्रवर्तन से इनकार कर दिया जाएगा यदि न्यायालय खंड (क), (ख) और (ग) में

उल्लिखित मामलों के संबंध में संतुष्ट था। विदेशी अधिनिर्णयों की मान्यता और प्रवर्तन पर लागू होने वाले सिद्धांत मूल रूप से अंग्रेजी न्यायालयों द्वारा सामान्य कानून में अपनाए गए सिद्धांतों के समान हैं। हालांकि, यह महसूस किया गया कि जिनेवा कन्वेंशन में कुछ दोष थे जो मध्यस्थता के माध्यम से विवादों के त्वरित निपटान में बाधा डालते थे। न्यूयॉर्क कन्वेंशन विदेशी अधिनिर्णयों की मान्यता और प्रवर्तन प्राप्त करने की अधिक सरल और प्रभावी विधि प्रदान करके उक्त दोषों को दूर करने का प्रयास करता है। न्यूयॉर्क कन्वेंशन के तहत जिस पक्षकार के खिलाफ अधिनिर्णय को लागू करने की मांग की जाती है, वह अनुच्छेद V के खंड (1) के उप-खंड (क) से (ड) में निर्धारित आधारों पर विदेशी अधिनिर्णय की मान्यता और प्रवर्तन पर आपत्ति कर सकता है और न्यायालय, अपने स्वयं के प्रस्ताव पर, अनुच्छेद V के खंड (2) के उप-खंड (क) और (ख) में निर्धारित दो अतिरिक्त कारणों से विदेशी अधिनिर्णय की गुणागुण और प्रवर्तन से इनकार कर सकता है, खंड (1) के उप-खंड (क) से (ड) और अनुच्छेद V के खंड (2) के उप-खंड (क) और (ख) में निर्धारित कोई भी आधार अधिनिर्णय को गुणागुण के आधार पर चुनौती नहीं देता है।

35. अल्बर्ट जान वैन डेन बर्ग ने अपने ग्रंथ द न्यूयॉर्क आर्बिट्रेशन कन्वेंशन ऑफ़ 1958: टुवर्ड्स अ यूनिफ़ॉर्म ज्यूडिशियल इंटरप्रिटेशन में यह विचार व्यक्त किया है:

> *'यह कन्वेंशन की आम तौर पर स्वीकृत व्याख्या है कि जिस न्यायालय के समक्ष विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन की मांग की जाती है, वह अधिनिर्णय की योग्यता की समीक्षा नहीं कर सकता है। इसका मुख्य कारण यह है कि अनुच्छेद V में उल्लिखित प्रवर्तन से इनकार करने के आधारों की विस्तृत सूची में मध्यस्थ द्वारा तथ्य या कानून में कोई गलती शामिल नहीं है। इसके अलावा, कन्वेंशन के तहत प्रवर्तन न्यायाधीश का कार्य सीमित है। उसके द्वारा प्रयोग किया जाने वाला नियंत्रण यह सत्यापित करने तक सीमित है कि अनुच्छेद V(1) के इनकार के आधारों के आधार पर प्रत्यर्थी की आपत्ति उचित है या नहीं और क्या अधिनिर्णय का प्रवर्तन उसके देश के कानून की सार्वजनिक नीति का उल्लंघन करेगा। इस सीमा को अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता के सिद्धांत के प्रकाश में देखा जाना चाहिए कि राष्ट्रीय न्यायालय को मध्यस्थता के सार में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।' (पृष्ठ 269)*

36. इसी तरह एलन रेडफर्न और मार्टिन हंटर ने कहा है:

> *'न्यूयॉर्क कन्वेंशन किसी ऐसे अधिनिर्णय की योग्यता पर किसी भी समीक्षा की अनुमति नहीं देता है जिस पर कन्वेंशन लागू होता है और, इस संबंध में,*

इसलिए, किसी अधिनिर्णय की चुनौती को नियंत्रित करने वाले राष्ट्रीय कानून की कुछ प्रणालियों के प्रावधानों से भिन्न है, जहां कानून के बिंदुओं पर न्यायलयों में अपील की अनुमति दी जा सकती है।'

37. इसलिए, हमारी राय में, विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम, 1961 के तहत विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन के लिए कार्यवाही में, न्यायालय के समक्ष जांच का दायरा जिसमें अधिनिर्णय को लागू करने की मांग की जाती है, अधिनियम की धारा 7 में उल्लिखित आधारों तक सीमित है और उक्त कार्यवाही में किसी पक्षकार को गुणागुण के आधार पर अधिनिर्णय को चुनौती देने में सक्षम नहीं बनाता है।

XXX XXX XXX

65. इसका तात्पर्य यह होगा कि धारा 7(1)(ख)(ii) के तहत अनुमेय सार्वजनिक नीति के बचाव को संकीर्ण रूप से समझा जाना चाहिए। इस संदर्भ में, यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक होगा कि 1927 के जिनेवा कन्वेंशन अधिनियम के अनुच्छेद I(ड) के तहत, इस आधार पर मध्यस्थ अधिनिर्णय के प्रवर्तन पर आपत्ति उठाना अनुमेय है कि अधिनिर्णय की मान्यता या प्रवर्तन सार्वजनिक नीति या उस देश के कानून के सिद्धांतों के विपरीत है जिसमें उस पर भरोसा किया जाना है। 1837 के प्रोटोकॉल और कन्वेंशन अधिनियम की धारा 7(1) में इसी तरह का प्रावधान है, जिसके अनुसार विदेशी अधिनिर्णय का प्रवर्तन सार्वजनिक नीति या भारत के कानून के विपरीत नहीं होना चाहिए। चूंकि अभिव्यक्ति "सार्वजनिक नीति" उस क्षेत्र को कवर करती है जो उक्त अभिव्यक्ति का पालन करने वाले "और भारत के कानून" शब्दों द्वारा कवर नहीं किया गया है, अकेले कानून का उल्लंघन सार्वजनिक नीति के प्रतिबंध को आकर्षित नहीं करेगा और कानून के उल्लंघन से अधिक कुछ की आवश्यकता है।

66. 1958 के न्यूयॉर्क कन्वेंशन के अनुच्छेद V(2)(ख) और विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम की धारा 7(1)(ख)(ii) किसी विदेशी अधिनिर्णय को मान्यता देने और लागू करने से इस आधार पर इनकार नहीं करती कि यह लागू करने वाले देश के कानून के विपरीत है और चुनौती का आधार मान्यता देने और लागू करने तक ही सीमित है जो उस देश की सार्वजनिक नीति के विपरीत है जिसमें अधिनिर्णय लागू किया जाना है। ऐसा कोई संकेत नहीं है कि न्यूयॉर्क कन्वेंशन के अनुच्छेद V(2)(ख) और विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम की धारा 7(1)(ख)(ii) में "सार्वजनिक नीति" अभिव्यक्ति का उपयोग उसी अर्थ में नहीं किया गया है जिस अर्थ में इसका उपयोग 1927 के जिनेवा कन्वेंशन के अनुच्छेद I(ग) और 1937 के प्रोटोकॉल और कन्वेंशन अधिनियम की धारा 7(1) में किया गया था। इसका अर्थ यह होगा कि धारा

7(1)(ख)(ii) में "सार्वजनिक नीति" का उपयोग संकीर्ण अर्थ में किया गया है और सार्वजनिक नीति के प्रतिबंध को आकर्षित करने के लिए अधिनिर्णय के प्रवर्तन में भारत के कानून के उल्लंघन से अधिक कुछ शामिल होना चाहिए। चूंकि विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम विदेशी अधिनिर्णयों की मान्यता और प्रवर्तन से संबंधित है जो निजी अंतरराष्ट्रीय कानून के सिद्धांतों द्वारा शासित होते हैं, इसलिए विदेशी अधिनिर्णय अधिनियम की धारा 7(1)(ख)(ii) में "सार्वजनिक नीति" अभिव्यक्ति को आवश्यक रूप से उस अर्थ में समझा जाना चाहिए जिस अर्थ में सार्वजनिक नीति के सिद्धांत को निजी अंतरराष्ट्रीय कानून के क्षेत्र में लागू किया जाता है। उक्त मानदंड को लागू करते हुए यह माना जाना चाहिए कि किसी विदेशी अधिनिर्णय को लागू करने से इस आधार पर इनकार कर दिया जाएगा कि यह सार्वजनिक नीति के विपरीत है यदि ऐसा प्रवर्तन (i) भारतीय कानून की मौलिक नीति; या (ii) भारत के हितों; या (iii) न्याय या नैतिकता के विपरीत होगा।"

64. ***क्रूज़ सिटी 1 मॉरीशस होल्डिंग्स बनाम यूनिटेक लिमिटेड, (2017) 239 डीएलटी 649*** में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने ***रेनुसागर (पूर्वोक्त)*** में निर्णय के बाद, मूल और आधारभूत तर्क, मूल्यों और सिद्धांतों के रूप में 'मूलभूत नीति' अभिव्यक्ति के अर्थ पर विस्तार से चर्चा की, जो हमारे देश में कानूनों का आधार है। हालांकि विदेशी अधिनिर्णय के संदर्भ में, न्यायालय की टिप्पणियां अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता के क्षेत्र में भी अत्यंत प्रासंगिक हैं और निम्नलिखित प्रभाव के लिए हैं:-

"97. उपरोक्त से यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन के मामले में कानून के किसी प्रावधान का उल्लंघन सार्वजनिक नीति के बचाव के लिए पर्याप्त नहीं है। किसी अधिनियम के किसी प्रावधान का उल्लंघन भारतीय कानून की मौलिक नीति के उल्लंघन के समान नहीं है। भारतीय कानून की मौलिक नीति का तात्पर्य उन सिद्धांतों और विधायी नीति से है जिन पर भारतीय क़ानून और विधियाँ आधारित हैं। "मौलिक नीति" का तात्पर्य उन बुनियादी और आधारभूत तर्क, मूल्यों और सिद्धांतों से है जो हमारे देश में कानूनों का आधार बनते हैं।

98. यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि विदेशी अधिनिर्णय विदेशी कानून पर आधारित हो सकता है, जो किसी संगत भारतीय क़ानून से भिन्न हो सकता है। और, यदि "भारतीय कानून की मौलिक नीति" को भारतीय क़ानून के किसी प्रावधान के संदर्भ के रूप में माना जाता है, जैसा कि यूनिटेक की ओर से तर्क दिया जा रहा है, तो विदेशी अधिनिर्णयों को लागू करने के लिए न्यूयॉर्क कन्वेंशन का मूल उद्देश्य

विफल हो जाएगा। न्यूयॉर्क कन्वेंशन का एक मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि अधिनिर्णयों का प्रवर्तन हो, भले ही अधिनिर्णय राष्ट्रीय कानूनों के अनुरूप न हों। इस प्रकार, सार्वजनिक नीति के आधार पर प्रवर्तन पर आपत्तियाँ ऐसी होनी चाहिए जो किसी सदस्य राज्य की राष्ट्रीय नीति के मूल मूल्यों का उल्लंघन करती हों और जिसके साथ समझौता करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। "कानून की मौलिक नीति" की व्याख्या उसी परिप्रेक्ष्य में की जानी चाहिए और इसका अर्थ केवल मौलिक और आधारभूत विधायी नीति होना चाहिए, न कि किसी अधिनियम का प्रावधान।

XXX XXX XXX

108. यह मानते हुए कि फेमा के किसी विशेष प्रावधान का सरल उल्लंघन भारतीय कानून की मूल नीति का उल्लंघन करने के समान नहीं माना जा सकता, यह उल्लेख करना भी उचित होगा कि किसी विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन में अनिवार्य रूप से विनिमय नियंत्रण से संबंधित विचार शामिल होंगे। किसी विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन की मांग करने वाले विदेशी पक्षकार के पक्ष में विदेशी मुद्रा का प्रेषण भारतीय रिजर्व बैंक से अनुमति की आवश्यकता हो सकती है। एक सवाल यह भी हो सकता है कि क्या प्रारंभिक समझौते के तहत विदेशी अधिनिर्णय प्रदान करने के लिए आरबीआई से किसी स्पष्ट अनुमति की आवश्यकता है। हालांकि, जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, फेमा के तहत नीति विदेशी मुद्रा के संरक्षण और प्रबंधन के हित में उचित प्रतिबंधों के अधीन सभी लेनदेन की अनुमति देना है। भारत ने अभी तक पूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता को स्वीकार नहीं किया है। इस प्रकार, ऐसे लेन-देन हैं जिनके लिए अनुमति नहीं मिल सकती है। जबकि फेमा और उसके तहत बनाए गए नियमों के तहत बिना किसी अन्य अनुमति के कुछ लेनदेन की अनुमति है; अन्य लेनदेन के लिए आरबीआई से स्पष्ट अनुमति की आवश्यकता हो सकती है। हालांकि, इन विचारों को यह सुनिश्चित करके संबोधित किया जा सकता है कि भारतीय रिज़र्व बैंक से आवश्यक अनुमति के बिना किसी विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन में देश के बाहर कोई धन नहीं भेजा जाता है। यह सार्वजनिक हित के मुद्दे और विदेशी मुद्रा प्रबंधन से संबंधित चिंताओं को पर्याप्त रूप से संबोधित करेगा, जिसे फेमा संबोधित करना चाहता है।

109. जैसा कि पहले चर्चा की गई है, इस न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करते समय कि क्या सार्वजनिक नीति के आधार पर किसी विदेशी अधिनिर्णय को लागू करने से मना किया जाए, उस नीति की प्रकृति पर भी विचार करना आवश्यक है जिसका उल्लंघन किया गया है। इस न्यायालय का दृष्टिकोण विदेशी अधिनिर्णय को

लागू करने के पक्ष में होगा और यदि विदेशी अधिनिर्णय को मान्यता देने से मना किए बिना सार्वजनिक नीति के विचारों को संबोधित किया जा सकता है, तो न्यायालय ऐसा ही मार्ग अपनाएगा।"

65. ध्यान रहे कि इस न्यायालय की समन्वय पीठ का तर्क ***विजय करिया बनाम प्रिसमियन कैवी ई सिस्टेमी एसआरएल, (2020) 11 एससीसी 1*** में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रशंसनीय था, जहां विदेशी मुद्रा प्रबंधन अधिनियम, 1999 (फेमा) जैसे एक अन्य कानून के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने ***रेनुसागर (पूर्वोक्त)*** में निर्धारित सिद्धांतों को दोहराते हुए और ***क्रूज़ सिटी (पूर्वोक्त)*** में दिए गए तर्क की पुष्टि करते हुए निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया:-

"88. यह तर्क हमारे लिए सराहनीय है। सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि फेमा - फेरा के विपरीत - विदेशी मुद्रा पर निगरानी रखने के बजाय विदेशी मुद्रा का प्रबंधन करने की राष्ट्र की नीति को संदर्भित करता है, फेरा के तहत पुलिसकर्मी भारतीय रिजर्व बैंक है। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि फेरा की धारा 47 अब फेमा में मौजूद नहीं है, इसलिए फेमा का उल्लंघन करने वाले लेन-देन को शून्य नहीं माना जा सकता है। ***इसके अतिरिक्त, यदि कोई विशेष कार्य फेमा के किसी प्रावधान या उसके तहत बनाए गए नियमों का उल्लंघन करता है, तो भारतीय रिजर्व बैंक की अनुमति बाद में प्राप्त की जा सकती है यदि ऐसे उल्लंघन को माफ किया जा सकता है। इसलिए, न तो अधिनिर्णय, और न ही अधिनिर्णय द्वारा लागू किया जा रहा समझौता, कानून में अप्रभावी माना जा सकता है। ऐसा होने पर, फेमा के तहत सुधार योग्य उल्लंघन को कभी भी भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन नहीं माना जा सकता है। यहां तक कि यह मानते हुए कि गैर-ऋण लिखत नियमों के नियम 21 के अनुसार भारत के निवासी द्वारा किसी अनिवासी को शेयरों की बिक्री उस राशि पर की जानी चाहिए जो शेयरों के बाजार मूल्य से कम नहीं होगी, तथा विदेशी अधिनिर्णय में यह निर्देश दिया गया है कि ऐसे शेयरों को बाजार मूल्य से कम राशि पर बेचा जाना चाहिए, भारतीय रिजर्व बैंक हस्तक्षेप कर सकता है तथा निर्देश दे सकता है कि उक्त शेयरों को केवल बाजार मूल्य पर बेचा जाए न कि छूट वाले मूल्य पर, या वह ऐसे उल्लंघन को माफ कर सकता है। इसके अलावा, यदि भारतीय रिजर्व बैंक फेमा के तहत कार्रवाई भी करता है, तो फेमा विनियमन या नियम के उल्लंघन के आधार पर विदेशी अधिनिर्णय को***

लागू न करने का मामला नहीं उठेगा क्योंकि अधिनिर्णय इस आधार पर निरर्थक नहीं होता। भारतीय कानून की मौलिक नीति, जैसा कि रेनुसागर [रेनुसागर पावर कंपनी लिमिटेड बनाम जनरल इलेक्ट्रिक कंपनी, 1994 सप (1) एससीसी 644] में कहा गया है, कुछ कानूनी सिद्धांत या कानून का उल्लंघन है जो भारतीय कानून के लिए इतना बुनियादी है कि इससे समझौता नहीं किया जा सकता। "मौलिक नीति" से तात्पर्य एक राष्ट्र के रूप में भारत की सार्वजनिक नीति के मूल मूल्यों से है, जो न केवल क़ानूनों में बल्कि समय-सम्मानित, पवित्र सिद्धांतों में भी अभिव्यक्त हो सकते हैं जिनका न्यायालयों द्वारा पालन किया जाता है। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो यह स्पष्ट है कि इस आधार पर किसी विदेशी अधिनिर्णय के प्रवर्तन का विरोध नहीं किया जा सकता है।"

(जोर दिया गया)

66. उपर्युक्त निर्णयों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दिए गए निर्णय में हस्तक्षेप का दायरा अत्यंत सीमित है। अधिनियम की धारा 34(2)(ख)(ii) में उल्लिखित अभिव्यक्ति 'भारत की सार्वजनिक नीति' का अर्थ भारतीय कानून की मौलिक नीति से है, जैसा कि ***रेनूसागर (पूर्वोक्त)*** और ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में स्पष्ट किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में दिया गया निर्णय अधिनियम की धारा 34 की उप-धारा (2क) में 'स्पष्ट अवैधता' के आधार पर न्यायिक हस्तक्षेप के लिए अविवेकी है। यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि मध्यस्थ अधिकरण द्वारा संविदात्मक प्रावधान की व्याख्या या निर्माण के संबंध में किसी निर्णय को चुनौती देना 'स्पष्ट अवैधता' के अंतर्गत आता है और इस प्रकार यह अब अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता से उत्पन्न किसी निर्णय को चुनौती देने का आधार नहीं है, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है। इसी तरह, विकृतियों के आधार जिसमें बिना किसी साक्ष्य के या महत्वपूर्ण साक्ष्य की अनदेखी के आधार पर निष्कर्ष शामिल हैं, 'पेटेंट अवैधता' के आधार पर आएंगे और इस आधार पर केवल अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता के अधिनिर्णयों के अलावा घरेलू अधिनिर्णयों पर ही विरोध किया जा सकता है।

67. तथ्यों के अवलोकन तथा पक्षकारगण द्वारा उठाए गए प्रतिद्वंदी तर्कों से यह स्पष्ट है कि मूल मुद्दा पक्षकारगण के बीच निष्पादित संविदा के विभिन्न खंडों की व्याख्या से संबंधित है, जो टीएस, जीसीसी, परिशिष्ट आदि में शामिल हैं, तथा यह चुनौती के दायरे से बाहर है, क्योंकि यह पेटेंट अवैधता के अंतर्गत आता है। वैसे भी, संविदात्मक प्रावधानों की व्याख्या मध्यस्थ अधिकरण के अधिकार क्षेत्र में है तथा इस संदर्भ में मैं ***यूएचएल पावर कंपनी लिमिटेड बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, (2022) 4 एससीसी 116*** में दिए गए निर्णय का उल्लेख कर सकता हूं, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने इस विषय पर कई न्यायिक उदाहरणों पर भरोसा करते हुए माना कि उच्च न्यायालय ने मध्यस्थ अधिकरण द्वारा दिए गए निष्कर्षों का पुनर्मूल्यांकन करने तथा पक्षकारगण को नियंत्रित करने वाले समझौते के प्रासंगिक खंडों की व्याख्या के संबंध में एक अलग दृष्टिकोण अपनाने तथा 1996 अधिनियम की धारा 34 के तहत कार्यवाही में वस्तुतः अपील न्यायालय के रूप में कार्य करने में घोर त्रुटि की है। यह दोहराया गया कि यदि संविदा की शर्तों और नियमों की दो संभावित व्याख्याएँ हैं, तो कोई दोष नहीं पाया जा सकता है, यदि मध्यस्थ एक व्याख्या को दूसरे के विरुद्ध स्वीकार करता है। प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं:-

> *"**15.** यह न्यायालय अपीलीय न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए इस दृष्टिकोण को भी सही मानता है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने मध्यस्थ अधिकरण द्वारा दिए गए निष्कर्षों का पुनर्मूल्यांकन करने तथा पक्षकारगण को नियंत्रित करने वाले कार्यान्वयन समझौते के प्रासंगिक खंडों की व्याख्या के संबंध में पूरी तरह से अलग दृष्टिकोण अपनाने में घोर त्रुटि की है, क्योंकि उक्त न्यायालय के लिए मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत कार्यवाही में वस्तुतः अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य करके ऐसा करना संभव नहीं था।*
>
> ***16.** जैसा कि यह है, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत न्यायालयों को प्रदान किया गया क्षेत्राधिकार काफी संकीर्ण है, जब मध्यस्थता अधिनियम की धारा 37 के तहत अपील के दायरे की बात आती है, तो किसी आदेश की जांच करने, किसी अधिनिर्णय को रद्द करने या रद्द करने से इनकार करने में अपीलीय न्यायलय का क्षेत्राधिकार और भी अधिक सीमित है। एमएमटीसी लिमिटेड बनाम वेदांता*

लिमिटेड [(2019) 4 एससीसी 163: (2019) 2 एससीसी (सिविल) 293] में, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत शक्तियों के प्रयोग में उच्च न्यायालय पर इस तरह के सीमित क्षेत्राधिकार को निहित करने के कारणों को निम्नलिखित शब्दों में समझाया गया है: (एससीसी पीपी. 166-67, पैरा 11)

> *"11. जहां तक धारा 34 का सवाल है, अब तक यह स्थिति स्पष्ट हो चुकी है कि न्यायालय मध्यस्थता अधिनिर्णय पर अपील में नहीं आता है और धारा 34(2)(ख)(ii) के तहत दिए गए सीमित आधार पर गुणागण के आधार पर हस्तक्षेप कर सकता है, यानी यदि अधिनिर्णय भारत की सार्वजनिक नीति के विरुद्ध है। 1996 के अधिनियम में 2015 में संशोधन से पहले इस न्यायालय के निर्णयों के माध्यम से स्पष्ट की गई कानूनी स्थिति के अनुसार, भारतीय सार्वजनिक नीति के उल्लंघन में बदले में भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन, भारत के हित का उल्लंघन, न्याय या नैतिकता के साथ संघर्ष और मध्यस्थता अधिनिर्णय में स्पष्ट अवैधता का अस्तित्व शामिल है। इसके अतिरिक्त, "भारतीय कानून की मौलिक नीति" की अवधारणा में क़ानूनों और न्यायिक पूर्व उद्धरण का अनुपालन, न्यायिक दृष्टिकोण अपनाना, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन और वेडनसबरी [एसोसिएटेड प्रोविंशियल पिक्चर हाउस लिमिटेड बनाम वेडनसबरी कॉर्पोरेशन, (1948) 1 केबी 223 (सीए)] तर्कसंगतता शामिल होगी। इसके अलावा, "पेटेंट अवैधता" का अर्थ भारत के मूल कानून का उल्लंघन, 1996 के अधिनियम का उल्लंघन और संविदा की शर्तों का उल्लंघन माना गया है।"*

17. *जैसा कि ऊपर बताया गया है, इसी तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय ने के. सुगुमार बनाम हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड [(2020) 12 एससीसी 539] में लिया है, जिसमें निम्नलिखित टिप्पणी की गई है: (एससीसी पृष्ठ 540, पैरा 2)*

> *"2. अधिनियम की धारा 34 के तहत न्यायालय की शक्ति की रूपरेखा इतनी अच्छी तरह से स्थापित है कि उसे किसी भी पुनरावृत्ति की आवश्यकता नहीं है। अधिनियम की धारा 34 को पढ़ने से ही पता चलता है कि मध्यस्थता अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने की सिविल न्यायालय की शक्ति बहुत सीमित है। इसका कारण स्पष्ट है। जब पक्षकारगण ने विवाद समाधान के लिए वैकल्पिक तंत्र का लाभ उठाने का विकल्प चुना है, तो उन्हें मध्यस्थ के निर्णय की समझदारी से खुद को सामंजस्य स्थापित करने के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए और न्यायालय की भूमिका को न्यूनतम तक सीमित रखा जाना चाहिए। हस्तक्षेप केवल मध्यस्थ द्वारा किए गए कदाचार के मामलों में ही*

उचित होगा, जो मध्यस्थ द्वारा कानूनी विकृतियों के प्रयोग सहित विभिन्न रूपों में प्रकट हो सकता है।"

18. *इस न्यायालय द्वारा बार-बार यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि संविदा की शर्तों और नियमों की दो संभावित व्याख्याएँ हैं, तो कोई दोष नहीं पाया जा सकता है, यदि विद्वान मध्यस्थ एक व्याख्या को दूसरे के विरुद्ध स्वीकार करता है। डायना टेक्नोलॉजीज (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम क्रॉम्पटन ग्रीव्स लिमिटेड [(2019) 20 एससीसी 1] में, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते समय न्यायालय की सीमाओं को इस प्रकार उजागर किया गया है: (एससीसी पृष्ठ 12, पैरा 24)*

> *"24. इसमें कोई विवाद नहीं है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 किसी अधिनिर्णय को चुनौती देने को केवल उसमें दिए गए आधारों पर या विभिन्न न्यायालयों द्वारा व्याख्या के अनुसार सीमित करती है। हमें इस तथ्य का संज्ञान लेने की आवश्यकता है कि मध्यस्थता अधिनिर्णयों में लापरवाही और लापरवाही से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि न्यायालय इस निष्कर्ष पर न पहुंच जाए कि अधिनिर्णय की विकृतियां मामले की जड़ तक जाती हैं, बिना वैकल्पिक व्याख्या की संभावना के जो मध्यस्थता अधिनिर्णय को बनाए रख सकती है। धारा 34 अपने दृष्टिकोण में भिन्न है और इसे सामान्य अपीलीय क्षेत्राधिकार के बराबर नहीं माना जा सकता है। धारा 34 के तहत अधिदेश मध्यस्थता अधिनिर्णय की अंतिमता और कानून के तहत प्रदान किए गए वैकल्पिक मंच द्वारा अपने विवाद का निर्णय करवाने के लिए पक्षकार की स्वायत्तता का सम्मान करना है। यदि न्यायालय तथ्यात्मक पहलुओं पर सामान्य तरीके से मध्यस्थता अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करते हैं, तो वैकल्पिक विवाद समाधान का विकल्प चुनने के पीछे वाणिज्यिक समझदारी विफल हो जाएगी।"*

19. *पारसा केंटे कोलियरीज लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड [(2019) 7 एससीसी 236: (2019) 3 एससीसी (सिविल) 552] में, मैकडरमोट इंटरनेशनल इंक बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड [(2006) 11 एससीसी 181] और राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड बनाम दीवान चंद राम सरन [(2012) 5 एससीसी 306] में इस न्यायालय के पिछले निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, जिसमें यह देखा गया है कि मध्यस्थ अधिकरण को संविदा की शर्तों के अनुसार निर्णय लेना चाहिए, लेकिन यदि संविदा की शर्त को उचित तरीके से समझा गया है, तो इस आधार पर अधिनिर्णय को रद्द नहीं किया जाना चाहिए, यह इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है: (पारसा केंटे कोलियरीज मामला [पारसा केंटे*

कोलियरीज लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य विद्युत उत्पादन निगम लिमिटेड, (2019) 7 एससीसी 236: (2019) 3 एससीसी (सिविल) 552], एससीसी पृष्ठ 244-45, पैरा 9)

> *"9.1. ... यह आगे देखा गया है और माना गया है कि संविदा की शर्तों का निर्माण मुख्य रूप से मध्यस्थ को तय करना होता है, जब तक कि मध्यस्थ संविदा को इस तरह से न समझे कि इसे ऐसा कुछ कहा जा सके जो कोई निष्पक्ष या उचित व्यक्ति नहीं कर सकता। इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त निर्णय में पैरा 33 में आगे यह भी कहा गया है कि जब कोई न्यायालय मध्यस्थता अधिनिर्णय के लिए "सार्वजनिक नीति" परीक्षण लागू कर रहा है, तो वह अपील न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है और परिणामस्वरूप तथ्य की त्रुटियों को ठीक नहीं किया जा सकता है। मध्यस्थ द्वारा तथ्यों पर संभावित दृष्टिकोण को अनिवार्य रूप से पास करना होगा क्योंकि मध्यस्थ ही उस साक्ष्य की मात्रा और गुणवत्ता का अंतिम स्वामी होता है जिस पर वह अपना मध्यस्थ अधिनिर्णय देते समय भरोसा करता है। यह आगे भी देखा गया है कि इस प्रकार कम साक्ष्य या ऐसे साक्ष्य पर आधारित अधिनिर्णय जो प्रशिक्षित कानूनी दिमाग के लिए गुणवत्ता के मामले में माप नहीं करता है, इस आधार पर अमान्य नहीं माना जाएगा।*
>
> *9.2. एनएचएआई बनाम आईटीडी सीमेंटेशन इंडिया लिमिटेड [(2015) 14 एससीसी 21: (2016) 2 एससीसी (सिविल) 716], एससीसी पैरा 25 और सेल बनाम गुप्ता ब्रदर स्टील ट्यूब्स लिमिटेड [(2009) 10 एससीसी 63: (2009) 4 एससीसी (सिविल) 16], एससीसी पैरा 29 में इस न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण भी ऐसा ही है।"*
>
> *(जोर दिया गया)*

20. *डायना टेक्नोलॉजीज [डायना टेक्नोलॉजीज (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम क्रॉम्पटन ग्रीव्स लिमिटेड, (2019) 20 एससीसी 1] में, ऊपर लिए गए दृष्टिकोण को निम्नलिखित शब्दों में दोहराया गया है: (एससीसी पृष्ठ 12, पैरा 25)*

> *"25. इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय के अनगिनत निर्णयों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि न्यायालयों को किसी अधिनिर्णय में केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि तथ्यों और संविदा की व्याख्या पर वैकल्पिक दृष्टिकोण मौजूद है। न्यायालय को सतर्क रहने की आवश्यकता है और*

मध्यस्थ अधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को स्वीकार करना चाहिए, भले ही अधिनिर्णय में दिए गए तर्क निहित हों, जब तक कि ऐसा अधिनिर्णय मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत अक्षम्य विकृति को चित्रित न करता हो।"

21. *साउथ ईस्ट एशिया मरीन इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन लिमिटेड (एसईएएमईसी लिमिटेड) बनाम ऑयल इंडिया लिमिटेड [(2020) 5 एससीसी 164: (2020) 3 एससीसी (सिविल) 1] में तर्क की एक समान रेखा अपनाई गई है और इसे निम्नानुसार माना गया है: (एससीसी पृष्ठ 172, पैरा 12-13)*

"12. यह एक स्थापित स्थिति है कि न्यायालय अधिनिर्णय अधिनियम में दिए गए आधारों पर ही अधिनिर्णय को रद्द कर सकता है, जैसा कि न्यायालयों द्वारा व्याख्या की गई है। हाल ही में, इस न्यायालय ने डायना टेक्नोलॉजीज (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम क्रॉम्पटन ग्रीव्स लिमिटेड [(2019) 20 एससीसी 1] में इस तरह के हस्तक्षेप का दायरा निर्धारित किया है। इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 12, पैरा 24)यालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की:(एससीसीपी। 12, पैरा 24)

'24. इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि अधिनिर्णय अधिनियम की धारा 34 किसी अधिनिर्णय को केवल उसमें दिए गए आधारों पर या विभिन्न न्यायालयों द्वारा व्याख्या किए गए आधारों पर ही चुनौती देने की अनुमति देती है। हमें इस तथ्य से अवगत होना चाहिए कि अधिनिर्णय के निर्णयों में लापरवाही और लापरवाही से हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि न्यायालय इस निष्कर्ष पर न पहुंच जाए कि अधिनिर्णय की विकृतियां मामले की जड़ तक जाती हैं, बिना वैकल्पिक व्याख्या की संभावना के जो अधिनिर्णय के निर्णय को बनाए रख सकती है। धारा 34 अपने दृष्टिकोण में भिन्न है और इसे सामान्य अपीलीय क्षेत्राधिकार के बराबर नहीं माना जा सकता। धारा 34 के तहत अधिदेश मध्यस्थ अधिनिर्णय की अंतिमता का सम्मान करना और पक्षकार को कानून के तहत प्रदान किए गए वैकल्पिक मंच द्वारा अपने विवाद का निर्णय करवाने की स्वायत्तता है। यदि न्यायालय तथ्यात्मक पहलुओं पर सामान्य तरीके से मध्यस्थ अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करते हैं, तो वैकल्पिक विवाद समाधान का विकल्प चुनने के पीछे वाणिज्यिक समझदारी विफल हो जाएगी।'

13. यह भी स्थापित कानून है कि जहां दो दृष्टिकोण संभव हैं, वहां न्यायालय मध्यस्थ द्वारा तर्क द्वारा समर्थित प्रशंसनीय दृष्टिकोण में हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। इस न्यायालय ने डायना टेक्नोलॉजीज [डायना टेक्नोलॉजीज (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम क्रॉम्पटन ग्रीव्स लिमिटेड, (2019) 20 एससीसी 1] में निम्न प्रकार से टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 12, पैरा 25)

> *'25. इसके अतिरिक्त, इस न्यायालय के असंख्य निर्णयों ने स्पष्ट रूप से माना है कि न्यायालय को किसी अधिनिर्णय में केवल इसलिए हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि तथ्यों और संविदा की व्याख्या पर एक वैकल्पिक दृष्टिकोण मौजूद है। न्यायालय को सतर्क रहने की आवश्यकता है और मध्यस्थ अधिकरण द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को स्वीकार करना चाहिए, भले ही अधिनिर्णय में दिए गए तर्क निहित हों, जब तक कि ऐसा अधिनिर्णय मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के तहत अक्षम्य विकृति को चित्रित न करे।' "*

(जोर दिया गया)

***22.** वर्तमान मामले में, हमारा विचार है कि कार्यान्वयन समझौते के प्रासंगिक खंडों की व्याख्या, जैसा कि विद्वान एकमात्र मध्यस्थ द्वारा की गई है, संभव और प्रशंसनीय दोनों है। केवल इसलिए कि एक और दृष्टिकोण लिया जा सकता था, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मध्यस्थता अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने का यह आधार नहीं हो सकता। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, अपीलीय न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने कार्यान्वयन समझौते के प्रासंगिक खंडों की व्याख्या पर सवाल उठाकर अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करके अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण किया है, क्योंकि दिए गए कारण तर्क पर आधारित हैं।"*

68. वर्तमान मामले पर वापस आते हुए तथा हस्तक्षेप के दायरे को सीमित करने वाले सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के आधार पर उठाए गए तर्कों की जांच करते हुए, न्यायालय प्रत्यर्थी से सहमत है कि आक्षेपित अधिनिर्णय एक सुविचारित अधिनिर्णय है तथा निष्कर्ष दस्तावेजों के विस्तृत विश्लेषण, संविदा के निष्पादन के दौरान पक्षकारगण के बीच व्यापक पत्राचार, विशेषज्ञ साक्ष्य सहित मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा विधिवत समर्थित हैं। अधिकरण तथ्यों के निष्कर्षों पर पहुंचा है तथा संविदा के खंडों की व्याख्या की

है, जिसमें खंड 03.04 भी शामिल है, जो पक्षकारगण के बीच विवाद का मुख्य कारण है तथा अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक अधिनिर्णय में हस्तक्षेप की सीमित अवधि में, यह न्यायालय याचिकाकर्ता से इस बात पर सहमत नहीं है कि अधिनिर्णय को रद्द किया जाना चाहिए। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत किए गए तर्क और दलीलें दर्शाती हैं कि पूरे मामले को गुणागुण के आधार पर फिर से बहस करने का प्रयास किया गया है, जो अस्वीकार्य है क्योंकि यह न्यायालय एक अपीलीय न्यायालय के रूप में अधिनिर्णय की गुणागुण की समीक्षा नहीं कर सकता है या साक्ष्य का फिर से मूल्यांकन नहीं कर सकता है।

69. पूर्वोक्त कानून के सार-संक्षेप और व्याख्या से स्पष्ट स्थिति यह है कि अधिनियम की धारा 34 (2)(ख)(ii) के तहत मध्यस्थ अधिकरण के किसी निर्णय को चुनौती दी जा सकती है, यदि वह भारत की सार्वजनिक नीति के साथ संघर्ष में हो। संशोधन अधिनियम, 2015 द्वारा स्पष्टीकरण-1 डाला गया और यह स्पष्ट किया गया कि कोई निर्णय भारत की सार्वजनिक नीति के साथ संघर्ष में तभी होगा, जब: (क) निर्णय को धोखाधड़ी या भ्रष्टाचार से प्रेरित या प्रभावित किया गया हो या धारा 75 या धारा 81 का उल्लंघन किया गया हो; या (ख) यह भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन करता हो; या (ग) यह नैतिकता और न्याय की सबसे बुनियादी धारणाओं के साथ संघर्ष में हो। याचिकाकर्ता द्वारा इनमें से कोई भी आधार नहीं बनाया गया है, जिसके आधार पर विवाद में हस्तक्षेप किया जा सके। स्पष्टीकरण-2 स्पष्ट करता है कि भारतीय कानून की मूल नीति का उल्लंघन है या नहीं, इस परीक्षण के लिए विवादों के गुणागुण पर समीक्षा की आवश्यकता नहीं होगी। इसी संशोधन द्वारा उप-धारा (2क) को शामिल किया गया, जो भारत में विशुद्ध रूप से घरेलू अधिनिर्णय के मामले में एक अतिरिक्त आधार प्रदान करता है, जहां अधिनिर्णय के मुख पर 'स्पष्ट अवैधता' दिखाई देने से अधिनिर्णय को नुकसान पहुंचता है, इस सावधानीपूर्ण कैविएट

सहित कि अधिनिर्णय को केवल कानून के गलत आवेदन के आधार पर या साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन के आधार पर रद्द नहीं किया जाएगा।

70. ***सांगयोंग (पूर्वोक्त)*** में दिए गए निर्णय में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अभिव्यक्ति 'भारत की सार्वजनिक नीति' चाहे धारा 34 में हो या धारा 48 में, अब इसका अर्थ ***एसोसिएट बिल्डर्स (पूर्वोक्त)*** के पैरा 18 और 27 में बताए गए 'भारतीय कानून की मूल नीति' से होगा, यानी ***रेनूसागर (पूर्वोक्त)*** के मामले में अभिव्यक्ति का अर्थ समझ में आ जाएगा। जहां तक यह वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक है, ***एसोसिएट बिल्डर्स (पूर्वोक्त)*** के पैरा 27 में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

> *"27. सॉ पाइप्स निर्णय में निहित प्रत्येक शीर्षक पर आते हुए, हम सबसे पहले "भारतीय कानून की मूल नीति" शीर्षक पर विचार करेंगे। रेनूसागर निर्णय से यह पहले ही देखा जा चुका है कि विदेशी मुद्रा अधिनियम का उल्लंघन और भारत में उच्च न्यायालयों के आदेशों की अवहेलना को भारतीय कानून की मूल नीति के विपरीत माना जाएगा। इसमें यह भी जोड़ा जा सकता है कि किसी उच्च न्यायालय के निर्णय के बाध्यकारी प्रभाव की अवहेलना करना भारतीय कानून की मौलिक नीति का समान रूप से उल्लंघन होगा।"*

71. सर्वोच्च न्यायालय ने आगे कहा कि संशोधन अधिनियम, 2015 द्वारा अधिनियम की धारा 28(3) में किया गया परिवर्तन ***एसोसिएट बिल्डर्स (पूर्वोक्त)*** में पैरा 42.3 से 45 में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों का पालन करेगा, कि संविदा की शर्तों का निर्माण मुख्य रूप से मध्यस्थ का क्षेत्र है, जब तक कि मध्यस्थ संविदा को इस तरह से नहीं बनाता है कि कोई भी निष्पक्ष या उचित व्यक्ति ऐसा नहीं करेगा यानी मध्यस्थ का दृष्टिकोण लेना भी संभव दृष्टिकोण नहीं है। हालांकि, इस शीर्षक के तहत अधिनिर्णय को चुनौती अधिनियम की धारा 34(2क) के तहत 'पेटेंट अवैधता' के अंतर्गत आएगी और वर्तमान मामले में इसे बरकरार नहीं रखा जा सकता क्योंकि आक्षेपित अधिनिर्णय अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित किया गया है।

72. याचिकाकर्ता का मुख्य तर्क कि अधिकरण ने पक्षकारगण के बीच संविदा में एकपक्षीय परिवर्तन थोपकर न्याय की सबसे बुनियादी धारणाओं का उल्लंघन किया है, गलत है और आक्षेपित अधिनिर्णय की गलत व्याख्या पर आधारित है और इस प्रकार जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, वे याचिकाकर्ता की सहायता नहीं करेंगे। अधिकरण ने केवल खंड 03.04 सहित संविदा की शर्तों की व्याख्या की है, जिसे आसान संदर्भ के लिए नीचे उद्धृत किया गया है:

> *"03.04 निविदाकर्ता संयंत्र और उपकरण के लिए कोई भी वैकल्पिक योजना या संशोधन पेश कर सकता है जिसे वह संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक समझे। जहां तक इससे इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश प्रभावित नहीं होते। हालांकि, ऐसे सभी परिवर्तन और संशोधन के लिए क्रेता से पूर्व अनुमोदन प्राप्त करना होगा। ऐसे वैकल्पिक प्रस्ताव के लिए मूल्य परिवर्तन, यदि कोई हो, अलग से इंगित किया जाएगा।"*

73. खण्ड 03.04 का उद्देश्य और प्रयोजन प्रत्यर्थी को संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए सर्वोत्तम आधुनिक और तकनीकी समाधान प्रदान करने के लिए लचीलापन प्रदान करना था। किसी भी मामले में, याचिकाकर्ता ने सुझाए गए अधिकांश तकनीकी संशोधनों को स्वीकार कर लिया और इस प्रकार खण्ड 03.04 की व्याख्या भी अब विवादास्पद मुद्दा नहीं रही। अभिलेख से पता चलता है कि याचिकाकर्ता ने पीपीयू के टीएस में 8 घंटे के चक्र पर अपनी असहमति के कारण संविदा को अस्वीकार कर दिया, जिसे अधिकरण ने नोटिस किया है। अधिकरण ने यह भी सही ढंग से देखा कि विवादों का मुख्य कारण याचिकाकर्ता की यह गलत समझ थी कि प्रत्यर्थी द्वारा कोई संशोधन सुझाया नहीं जा सकता है और इसलिए प्रस्तावों को केवल इस आधार पर खारिज कर दिया कि वे शुरू में सहमत टीएस के विपरीत थे, इस बात को नजरअंदाज करते हुए कि खण्ड 03.04 भी सहमत संविदात्मक शर्तों का हिस्सा था और प्रत्यर्थी को उसमें निर्धारित शर्तों के अधीन विकल्प सुझाने की अनुमति दी। याचिकाकर्ता ने सी.वी.सी. दिशा-निर्देशों के तहत प्रतिबंधों का सूक्ष्म दृष्टिकोण अपनाया और इससे किसी भी संशोधन की जांच करने के प्रतिरोध में वृद्धि हुई, क्योंकि उसे

खंड 03.04 के महत्व और इसके तहत विकल्प सुझाने के अधिकार की पूरी जानकारी नहीं थी, जो संविदा की एक शर्त के रूप में बोलीदाताओं को उपलब्ध था। इस प्रकार, याचिकाकर्ता के विश्वास और समझ के विपरीत, इस खंड के तहत प्रस्तावित विकल्पों को स्वीकार करने से सी.वी.सी. दिशा-निर्देशों का उल्लंघन नहीं होता।

74. मुद्दे 1 और 2 पर निर्णय लेने के लिए अधिकरण ने जांच की कि संविदा के निष्पादन और निष्पादन में देरी प्रत्यर्थी या याचिकाकर्ता के कारण हुई थी। अधिकरण ने पाया कि परियोजना का पहला चरण बी.ई.डी. की तैयारी और परिशिष्ट 2 में समय-सारिणी के अनुसार प्रभावी तिथि से 5 महीने के भीतर अनुमोदन के लिए उनका प्रस्तुतीकरण था और इस प्रकार अंतिम तिथि 31.12.2007 थी। जी.सी.सी. के खंड 20.3.2 में प्रावधान था कि याचिकाकर्ता द्वारा अनुमोदित किए जाने वाले डिजाइन से संबंधित सुविधाओं के किसी भी भाग का निष्पादन केवल तभी किया जाना था जब अनुमोदन दिया गया था, जिसके लिए जी.सी.सी. के खंड 20.03.05 में डिजाइन की प्राप्ति के 14 दिन बाद प्रावधान था। प्रत्यर्थी ने दिनांक 10.10.2007 के पत्र द्वारा बी.ई.डी. के लिए डिजाइन की पूरी सूची प्रस्तुत की थी, लेकिन प्रत्यर्थी द्वारा डिजाइन के क्रमिक प्रस्तुतीकरण के बावजूद, याचिकाकर्ता निर्धारित समय के भीतर बी.ई.डी. को अनुमोदित करने में विफल रहा। 13.12.2007 को प्रत्यर्थी ने 19 बी.ई.डी. की प्राप्ति की बात स्वीकार की, जिनमें से केवल एक को मंजूरी दी गई तथा 18 पर टिप्पणी की गई। 14.12.2007 के पत्र के माध्यम से प्रत्यर्थी ने जवाब दिया तथा आश्वासन दिया कि संशोधित डिजाइन उपलब्ध कराए जाएंगे, क्योंकि वह परियोजना को शीघ्र पूरा करने में रुचि रखता है। 17.12.2007 को प्रत्यर्थी ने याचिकाकर्ता को बी.ई.डी. का पूरा सेट प्रस्तुत किया तथा अनुच्छेद 20.03.05 के तहत याचिकाकर्ता को 31.12.2007 तक उन्हें मंजूरी देनी थी। अधिकरण ने श्री नेहरू के साक्ष्य पर भरोसा किया, जिन्होंने कहा कि सभी 42 बी.ई.डी. प्रत्यर्थी द्वारा 17.12.2007 को उपलब्ध कराए गए थे तथा याचिकाकर्ता/परामर्शदाता द्वारा पहली टिप्पणी 29.12.2007 या 10.01.2008 को की गई

थी। महत्वपूर्ण रूप से, अधिकरण ने दिनांक 16.01.2008 के पत्र को नोट किया तथा उसका उद्धरण दिया, जिसमें समय पर अनुमोदन न मिलने के कारण प्रत्यर्थी की हताशा का प्रमाण है। दिनांक 27.06.2008 की प्रगति रिपोर्ट का भी संदर्भ देते हुए अधिकरण ने निष्कर्ष दिया कि याचिकाकर्ता विलंबित अनुमोदन के लिए जिम्मेदार है तथा प्रत्यर्थी के इस रुख को स्वीकार किया कि उसने पीईआरटी नेटवर्क के प्रति अपने दायित्व को पूरा किया है। अधिकरण ने आदान-प्रदान किए गए कई संचारों के आधार पर निष्कर्ष भी दिया कि प्रत्यर्थी बीईडी प्रस्तुत करने के अलावा, बीईडी स्वीकृत होने पर ऑर्डर देने के इरादे से एलडीआई के विभिन्न विक्रेताओं के साथ एक साथ संपर्क कर रहा था।

75. टीएस के विवादास्पद खंड 03.04 के संबंध में, अधिकरण की व्याख्या यह थी कि इसने प्रत्यर्थी को संविदा के टीएस में वैकल्पिक योजना और संशोधन का प्रस्ताव करने का अधिकार दिया, बशर्ते कि उसका मानना हो कि प्रस्तावित संशोधन संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक था और इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देशों को प्रभावित नहीं करता था और प्रत्यर्थी की पूर्व स्वीकृति ली थी। अधिकरण ने माना कि जब याचिकाकर्ता को संविदा के टीएस में एक वैकल्पिक योजना/संशोधन प्राप्त हुआ, तो उसे खंड 03.04 में निर्धारित मापदंडों के विरुद्ध प्रस्ताव की समीक्षा करने और इसे अनुमोदित करने के लिए बाध्य किया गया था, जब तक कि इसमें संदेह करने के लिए कोई बाध्यकारी तकनीकी कारण न हो। खंड 03.04 का सरल वाचन अधिकरण की इस व्याख्या का समर्थन करता है। अधिकरण ने देखा कि साक्ष्य से यह स्पष्ट था कि बीईडी को अस्वीकार करने का मुख्य कारण खंड 03.04 के अनुसार टीएस में प्रस्तावित परिवर्तन थे, लेकिन याचिकाकर्ता ने किसी भी परिवर्तन पर गलत तरीके से आपत्ति जताई। बीईडी को अस्वीकार करने का दूसरा कारण यह था कि प्रत्यर्थी को विक्रेताओं के साथ ऑर्डर देने के बाद विभिन्न एलडीआई के टीएस को दर्शाते हुए बीईडी प्रदान करना चाहिए था, जिसे भी अधिकरण ने अनुचित पाया और यह पाया कि याचिकाकर्ता की कई टिप्पणियाँ गुणात्मक रूप से

अपर्याप्त, नौकरशाही और अनावश्यक थीं। अधिनिर्णय में उल्लिखित कई संचारों के आधार पर तथ्य की खोज की गई कि सभी बी.ई.डी. 17.12.2007 तक प्रस्तुत किए गए थे और प्रत्यर्थी एल.डी.आई. के विभिन्न विक्रेताओं से एक साथ पूछताछ कर रहा था, ताकि बी.ई.डी. स्वीकृत होने पर ऑर्डर दे सके। यह निष्कर्ष निकालने के लिए अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों पर भरोसा किया गया कि प्रत्यर्थी ने वास्तव में मेन हीट एक्सचेंजर, बी.ए.सी., एन.टी.सी. आदि के लिए ऑर्डर दिए थे। डी.ई.डी. के बारे में, अधिकरण ने यह भी निष्कर्ष निकाला कि बी.ई.डी. अनुमोदन की प्रतीक्षा करते समय, प्रत्यर्थी स्थिर नहीं रहा और डी.ई.डी. की तैयारी जारी रखी और कोई उल्लंघन नहीं हुआ। उद्योग अभ्यास के अनुसार, डी.ई.डी. को अंतिम रूप दिया जा सकता है और बी.ई.डी. के अनुमोदन के बाद ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

76. इस व्याख्या को आगे बढ़ाते हुए, अधिकरण ने नोट किया कि निविदाकर्ताओं को भेजे गए नवंबर, 2006 के टीएस में चक्र समय, अवशोषण या पुनरुत्पादन के लिए कोई अवधि निर्दिष्ट नहीं की गई थी। फिर इसने पीपीयू से संबंधित टीएस के खंड 06.02.03 का संदर्भ दिया, जिसमें 8 घंटे के ड्यूटी चक्र के साथ एक रेडियल बीईडी प्रकार निर्दिष्ट किया गया था और नोट किया कि इसमें अवशोषण और पुनरुत्पादन के लिए समय निर्दिष्ट नहीं किया गया था। एक ड्यूटी चक्र प्रारंभिक अवस्था से एक समान प्रारंभिक अवस्था तक क्रियाओं का एक दोहराया अनुक्रम है, जिसमें अवशोषण और पुनरुत्पादन दोनों शामिल हैं। इसके बाद अधिकरण ने नोट किया कि 14.12.2007 को प्रत्यर्थी ने 8 घंटे के पूर्ण चक्र समय के साथ पीपीयू के लिए अपना डिज़ाइन प्रस्तुत किया, यानी अवशोषण के लिए 4 घंटे और पुनरुत्पादन के लिए 4 घंटे और 19.12.2007 को प्रत्यर्थी ने प्रस्तावित तकनीकी समाधानों के आधार का वर्णन करते हुए विभिन्न परिशिष्टों के साथ याचिकाकर्ता को लिखा। हालाँकि, याचिकाकर्ता और मेकॉन ने इस आधार पर प्रस्ताव को खारिज कर दिया कि यह मूल संविदात्मक विनिर्देशों की पुष्टि नहीं करता है। 10.01.2008 को, प्रत्यर्थी ने फिर से 8

घंटे के ड्यूटी चक्र के लिए तकनीकी औचित्य प्रदान किया और पत्र में अपने कारण भी बताए कि उसका प्रस्ताव संविदा को संतुष्ट क्यों करता है। हालाँकि, मेकॉन ने प्रस्ताव और संविदा का पालन करने के अपने रुख पर कायम रहा और प्रत्यर्थी को संशोधन की मांग करके देरी न करने की चेतावनी दी। इसके बाद तकनीकी मुद्दों को सुलझाने के लिए पक्षकारगण के बीच बैठकें हुईं। अधिकरण ने पत्राचार की जांच की और पाया कि शायद, समाप्ति के समय, एकमात्र वास्तविक प्रमुख मुद्दा पीपीयू ही बचा था। जैसा कि अधिनिर्णय से पता चलता है कि अधिकरण ने इसके बाद प्रत्यर्थी के गवाहों/विशेषज्ञों की परिसाक्ष्य का संदर्भ दिया, जिन्होंने स्पष्ट रूप से अपने प्रस्ताव के लाभों को सामने रखा और अंत में निष्कर्ष निकाला कि याचिकाकर्ता ने प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तावित पीपीयू को अस्वीकार करने के लिए कोई तकनीकी कारण नहीं बताया, सिवाय इसके कि यह संविदा से विचलन या संविदा से पहले की पेशकश थी और यह निष्कर्ष याचिकाकर्ता के गवाह श्री नेहरू की परिसाक्ष्य से भी निकला। इस मुद्दे पर गहराई से विचार करने के बाद, अधिकरण ने अंततः यह निष्कर्ष निकाला कि 4 घंटे के अवशोषण चक्र समय और 4 घंटे के पुनरुत्पादन के साथ प्रस्तावित पीपीयू संविदा से विचलन नहीं था और सुझाया गया संशोधन टीएस के खंड 03.04 के अनुरूप था।

77. यद्यपि याचिकाकर्ता के इस तर्क में दम है कि संविदाओं के मामलों में संविदा की शर्तों और/या तकनीकी विनिर्देशों का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए, लेकिन वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता ने यह अनदेखा कर दिया है कि जानबूझकर, पक्षकारगण ने टीएस में खंड 03.04 को शामिल करने का विकल्प चुना था, जो प्रत्यर्थी को उसमें उल्लिखित अन्य शर्तों के अधीन वैकल्पिक योजनाएं/संशोधन/विचलन पेश करने की अनुमति देता है। जैसा कि अधिकरण ने सही ढंग से उल्लेख किया है, एक बार जब प्रत्यर्थी ने संशोधनों का प्रस्ताव किया, जिसे उसने संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए माना, तो याचिकाकर्ता को इसकी जांच करने के लिए बाध्य किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि याचिकाकर्ता के पास

प्रस्ताव की जांच करने और इसे अस्वीकार करने का विवेक था, यदि उसके पास ऐसा करने का कोई ठोस तकनीकी कारण था, लेकिन वह केवल इस आधार पर प्रस्ताव को अस्वीकार करने हेतु स्वतंत्र नहीं था कि यह टीएस में मूल विनिर्देशों की पुष्टि नहीं करता है। यही वह बात है जिसे अधिकरण ने खंड 03.04 की व्याख्या करते हुए मौलिक रूप से माना है।

78. कंप्रेसर के लिए मोटरों की बात करें तो संविदा में एमएसी, बीएसी और एनटीसी आदि में फिट किए जाने वाले सिंक्रोनस मोटरों का प्रावधान था। अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों और विशेषज्ञ साक्ष्यों के विस्तृत विश्लेषण के बाद अधिकरण ने पाया कि संपर्क में सिंक्रोनस मोटरों का उपयोग गैर-मानक था, जिसका उद्योग में सामान्यतः उपयोग नहीं किया जाता है और प्रत्यर्थी के इस स्पष्टीकरण को स्वीकार कर लिया कि एसिंक्रोनस मोटर एक मानक समाधान है, तकनीकी रूप से बेहतर, संसाधन के लिए आसान, मजबूत गुणवत्ता, अधिक विश्वसनीय और कम रखरखाव लागत वाला है। यह देखा गया कि प्रत्यर्थी ने एक संशोधन का प्रस्ताव रखा, हालांकि, याचिकाकर्ता ने इस आधार पर इसे अस्वीकार कर दिया कि यह संविदा में प्रदान नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी ने परिशिष्ट 6 के तहत अनुमोदित सूची में विक्रेताओं से संपर्क किया लेकिन चूंकि सिंक्रोनस मोटर एक गैर-मानक समाधान था, इसलिए किसी भी विक्रेता ने उन्हें प्रदान नहीं किया और अंत में श्री नेहरू के कहने पर, प्रिवोड से संपर्क किया। अधिकरण ने माना कि सामग्री से पता चलता है कि विकल्प संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए था और इस प्रकार याचिकाकर्ता की अस्वीकृति गलत थी और यह अनुचित और जिद्दी तरीके से सिंक्रोनस मोटर्स पर जोर दे रहा था, जैसा कि संविदा द्वारा आवश्यक है, और वास्तव में यह अस्वीकृति के लिए प्रदान किया गया एकमात्र कारण था। अनिवार्य रूप से, आपूर्तिकर्ता खोजने में देरी हुई और प्रिवोड का प्रस्ताव मोटर्स की अनुकूलता और कंप्रेसर निर्माताओं से पुष्टि के अधीन था। अधिकरण के अनुसार, एलडीआई का आदेश देने में प्रत्यर्थी को देरी के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। अधिकरण को याचिकाकर्ता की दलील के समर्थन में कोई सबूत नहीं मिला कि

प्रत्यर्थी ने एक सस्ता विक्रेता खोजने के इरादे से प्रक्रिया में देरी की। वास्तव में, अधिकरण ने माना कि सुझाया गया विकल्प कोई संशोधन या विचलन नहीं था और भले ही ऐसा था, प्रत्यर्थी खंड 03.04 के तहत सुझाव देने का हकदार था और याचिकाकर्ता ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया था। यह स्पष्ट है कि ये तथ्य अधिकरण द्वारा बहुत सारे दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों के आधार पर निकाले गए निष्कर्ष हैं और 1996 अधिनियम की धारा 34(2) (क) या (ख) के तहत दिए गए आधारों को देखते हुए इस न्यायालय के हस्तक्षेप करने के अधिकार क्षेत्र से बाहर हैं।

79. मुद्दे सं. 3 के तहत, अधिकरण ने उन सभी 9 कारणों की जांच की जिनके लिए खंड 44.2 के तहत संविदा समाप्त किया गया था और निष्कर्ष निकाला कि उद्धृत कारणों में से कोई भी समाप्ति को उचित नहीं ठहराता है। अधिनिर्णय के प्रासंगिक पैराग्राफ इस प्रकार हैं:-

> *"15.8. प्रत्यर्थी द्वारा समाप्ति पत्र में समाप्ति को उचित ठहराने के लिए दिए गए नौ कारणों की ओर मुड़ना।*
>
> *15.8.1. **<u>लंबी डिलीवरी वाली वस्तुएँ</u>***
>
> *एमएसी, बीएसी, एनटीसी और इंस्ट्रूमेंट एयर कंप्रेसर जैसे लंबी डिलीवरी आइटम ऑर्डर करने में विफलता के बारे में शिकायत को इस अधिनिर्णय के पैराग्राफ 14.19 से 14.30 और 14.102 से 14.103 में निपटाया गया है। अधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि उद्योग अभ्यास के अनुसार एलपीआई का आदेश देने से पहले बीईडी को मंजूरी मिलने की प्रतीक्षा करने में दावेदार द्वारा कोई चूक नहीं हुई थी, और किसी भी स्थिति में दावेदार ने प्रत्यर्थी द्वारा बीईडी और एलडीआई के अनुमोदन में होने वाली देरी को कम किया, जहाँ तक संभव था। यह भी स्वीकार नहीं किया जाता है कि तकनीकी विनिर्देश एलडीआई का आदेश देने के लिए पर्याप्त थे। इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।*
>
> *15.8.2. **<u>विक्रेता अनुमोदन</u>***

दावेदार ने वाल्व, कंप्रेसर, टर्बो-एक्सपैंडर आदि जैसी महत्वपूर्ण वस्तुओं के पसंदीदा निर्माताओं में बिना किसी पर्याप्त औचित्य और विवरण के तथा संविदा की भावना के अनुरूप परिवर्तन की मांग की थी, इस तर्क को अधिनिर्णय के पैराग्राफ 14.42 से 14.101 और 14.103 में निपटाया गया है। अधिकरण ने पाया कि दावेदार द्वारा प्रस्तावित परिवर्तन संविदा के तकनीकी विनिर्देशों के खंड 03.04 के अनुसार थे, तथा:

(क) संयंत्र के बेहतर प्रदर्शन के लिए आवश्यक थे तथा

(ख) इकाई के समग्र विवरण और विनिर्देश को प्रभावित नहीं करते थे। दावेदार द्वारा परिवर्तनों के लिए तकनीकी औचित्य के पर्याप्त विवरण प्रदान किए गए थे। प्रत्यर्थी द्वारा उस समय कोई तकनीकी औचित्य प्रदान नहीं किया गया था, सिवाय इसके कि उसने संविदा में कोई परिवर्तन गलत तरीके से अनुमति नहीं दी थी। दावेदार को उपठेकेदारों और विक्रेताओं या पसंदीदा निर्माताओं की अनुमोदित सूची में जोड़ने और हटाने का प्रस्ताव करने की भी अनुमति दी गई थी, जैसा कि संविदा के अनुच्छेद 7 और जीसीसी के खंड 19 और तकनीकी विनिर्देश के खंड 06-02-07 द्वारा निर्धारित किया गया है। जब ऐसे शुल्क प्रस्तावित किए गए, तो प्रत्यर्थी ने विलंब किया और अनुमोदन में देरी की, और कुछ प्रस्तावित परिवर्तनों को कभी भी मंजूरी नहीं दी गई। प्रत्यर्थी के गवाहों और परिसाक्ष्य द्वारा भरोसा किए गए विलंबित तकनीकी औचित्य को अधिकरण द्वारा स्वीकार नहीं किया गया।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए इस संशोधन की आवश्यकता नहीं है।

15.8.3. ***फरवरी/मार्च 2008 में आयोजित बैठक के कार्यवृत्त पर हस्ताक्षर न करना***

पक्षकारगण के बीच विवादों को सुलझाने के लिए 25 फरवरी 2008 से 7 मार्च 2008 तक दोनों पक्षकारगण के बीच बैठकें आयोजित की गईं। सीबी में कार्यवृत्त के दो संस्करण हैं और किसी पर भी हस्ताक्षर नहीं किए गए हैं। अपने दूसरे गवाह बयान में, सुश्री तारासोवा ने पैराग्राफ 15 में कहा है कि दावेदार ने कार्यवृत्त पर हस्ताक्षर नहीं किए क्योंकि यह केवल प्रत्यर्थी का संस्करण था, और यह "चर्चा की गई बातों का सही संस्करण" नहीं दर्शाता है। यह दावेदार के 14 अप्रैल 2008 के पत्र के आइटम 4 से पुष्ट होता है, जिसमें प्रत्यर्थी/मेकॉन द्वारा किसी भी तर्क को नहीं सुनने और अपनी स्थिति पर जोर देने का उल्लेख है, और दावेदार कभी भी ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर नहीं करेगा जो उनकी स्थिति को ध्यान में नहीं रखते हैं। पीपीयू, कार्यवृत्त के पैराग्राफ 8 में जो कहा गया था, उसके विपरीत, अनसुलझा रह गया

और विशेष रूप से अवशोषण चक्र की अवधि। इसलिए, दावेदार द्वारा प्रस्तावित पीपीयू के लिए 8 घंटे की ड्यूटी चक्र की सलाह देने वाला पैराग्राफ 8 सही नहीं है। यह 8 घंटे का चक्र कार्यवृत्त के पृष्ठ 1362 पर पैराग्राफ 19 में और पृष्ठ 1365 के शीर्ष पर अनुलग्नक A में दोहराया गया है। दावेदार का प्रतिनिधिमंडल रूस वापस जाने के लिए विमान लेने के लिए चला गया, लेकिन श्री एलिन पीपीयू पर चर्चा पूरी करने और कार्यवृत्त पर हस्ताक्षर करने के लिए रुके, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। श्री एलिन ने सुनवाई में साक्ष्य नहीं दिए। श्री नेहरू ने इन बैठकों के दौरान दावेदार द्वारा प्रदान किए जा रहे पीपीयू वेरिएंट का उल्लेख किया है, और दावेदार ने उन पर हस्ताक्षर किए बिना चले गए (उनके पहले गवाह बयान के पैरा A(vii) पृष्ठ 20 में)। श्री त्रिपाठी अपने पहले गवाह बयान के पैरा 18 में इस बैठक से निपटते हैं, लेकिन केवल यह कहते हैं कि कार्यवृत्त पर हस्ताक्षर नहीं किए गए थे। श्री पोपोव से सुनवाई के दूसरे दिन बैठकों में प्रतिपरीक्षा की गई, लेकिन उन्हें याद नहीं था कि क्या चर्चा हुई थी, लेकिन उन्हें याद है कि मसौदा कार्यवृत्त के कुछ हिस्से स्वीकार्य नहीं थे।

तथ्य यह है कि कार्यवृत्त पर हस्ताक्षर नहीं किए गए थे, इसका मतलब है कि अधिकरण कार्यवृत्त को एक निश्चित सहमत अभिलेख के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता है। न ही अधिकरण दावेदार के खिलाफ उन पर हस्ताक्षर न करने के लिए कोई प्रतिकूल निष्कर्ष निकाल सकता है। प्रत्यर्थी यह दिखाने के लिए कोई सबूत भी नहीं दे सका कि उक्त कार्यवृत्त पर दावेदार का रुख पक्षकारगण के बीच वास्तविक चर्चाओं को प्रतिबिंबित नहीं करता है।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।

*15.8.4. **पीपीयू***

समाप्ति पत्र में तर्क यह है कि संविदा के तहत 8 घंटे के अवशोषण चक्र समय वाला पीपीयू प्रदान किया गया था, और दावेदार द्वारा 4 घंटे के अवशोषण चक्र वाला पीपीयू प्रदान करने पर जोर देना संविदा का उल्लंघन था। इस पर अधिनिर्णय के पैराग्राफ 14.45 से 14.62 में विचार किया गया है। अधिकरण ने पाया कि 4 घंटे के अवशोषण चक्र समय और 4 घंटे के पुनरुत्पादन समय वाला प्रस्तावित पीपीयू संविदा से विचलन नहीं था, जो 8 घंटे के चक्र समय को निर्दिष्ट करता है। खंड वी-ए के पृष्ठ 506 पर खंड 20.3.6 का संदर्भ भी दिया जा सकता है, जिसमें प्रावधान है कि मेकॉन किसी भी ड्राइंग को तब तक अस्वीकार नहीं कर सकता जब तक कि यह संविदा के विपरीत और अच्छे इंजीनियरिंग अभ्यास के खिलाफ न हो। न तो मेकॉन और न ही प्रत्यर्थी यह दिखाने के लिए कोई सबूत पेश कर सके कि दावेदार द्वारा

सुझाया गया प्रस्तावित 4 + 4 पीपीयू संविदा या अच्छी इंजीनियरिंग प्रथा के विपरीत था। इसलिए, इस संबंध में प्रत्यर्थी का रुख वैध कारण के बिना पाया गया। संविदा से पहले दावेदारों द्वारा किए गए प्रस्ताव का कोई संविदात्मक आधार नहीं है। वैकल्पिक रूप से, यदि यह एक संशोधन था तो यह तकनीकी विनिर्देशों के खंड 03-04 का अनुपालन करता था और इसमें कई तकनीकी लाभ थे। संविदा के दौरान प्रत्यर्थी ने पीपीयू को अस्वीकार करने के लिए कोई तकनीकी कारण नहीं बताया, सिवाय इसके कि यह गलत तरीके से संविदा के अनुरूप नहीं था। प्रत्यर्थी द्वारा गवाहों के बयानों और परिसाक्ष्य में बाद में बताए गए तकनीकी कारण स्वीकार नहीं किए गए।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।

*15.8.5.**<u>बीईडीएस</u>***

समाप्ति पत्र में तर्क यह है कि दावेदार द्वारा प्रत्यर्थी की टिप्पणियों को शामिल किए बिना वही डिजाइन प्रस्तुत करने, तथा ऐसे संशोधनों पर जोर देने, जो संविदा के अनुरूप नहीं थे, तथा अन्य परियोजनाओं पर डिजाइन प्रस्तुत करने के कारण बी.ई.डी. की स्वीकृति में बाधा उत्पन्न हुई। अधिकरण ने अधिनिर्णय के पैराग्राफ 14.1 से 14.16, 14.31 तथा 14.102 में इस पर विचार किया है। प्रस्तावित संशोधनों को ऊपर पैराग्राफ 15.8.2 में शामिल किया गया है। संक्षेप में, प्रत्यर्थी ने गैर-मौलिक, नौकरशाही तथा दोहराव वाली टिप्पणियों के साथ बी.ई.डी. की स्वीकृति में अनुचित रूप से देरी की। बहुत सी हठधर्मिता के पीछे तकनीकी विनिर्देशों में किसी भी परिवर्तन/संशोधन पर विचार करने का जिद्दी प्रतिरोध तथा डी.ई.डी. के विपरीत बी.ई.डी. के लिए पहुँचे गए विवरण के स्तर की मूलभूत गलतफहमी थी।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।

*15.8.6. **<u>प्रगति रिपोर्ट और कार्य योजनाएँ</u>***

समाप्ति पत्र में तर्क यह है कि दावेदार ने कई महीनों तक प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की, और प्रत्यर्थी को कभी भी प्रगति के बारे में सूचित नहीं किया। इसके अलावा, इसने देरी से निपटने के लिए कोई कार्य योजना प्रस्तुत नहीं की। इस अधिनिर्णय के पैरा 14.29 और 14.102(ग) में इसका निपटारा किया गया है। अधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि तथ्य दर्शाते हैं कि दावेदार ने प्रगति रिपोर्ट, संशोधित कार्यक्रम और कार्य योजनाएँ प्रस्तुत करने के लिए जीसीसी के खंड 18.3 और 18.4 के तहत अपने कर्तव्यों को पूरा किया; या वैकल्पिक रूप से प्रत्यर्थी को कई पत्राचार और बैठकों में दर्ज की गई प्रगति और देरी के बारे में अच्छी तरह से पता था, और किसी भी स्थिति

में, जब देरी का कारण वही था और उसे आवश्यक अनुमोदन देने की आवश्यकता थी, तो कार्य योजनाओं की मांग करना गलत था।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।

*15.8.7. **साइट की तैयारी, प्लांट और उपकरण का ऑर्डर/आपूर्ति और निर्माण का काम शुरू न करना***

इस निर्णय के पैराग्राफ 14.34 से 14.37 में इस पर विचार किया गया है। अधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि तथ्यों के आधार पर दावेदार ने बी.ई.डी. की स्वीकृति से पहले सिविल कार्य, साइट की तैयारी और निर्माण, संयंत्र की आपूर्ति को आगे बढ़ाने के लिए वह सब कुछ किया जो वह कर सकता था। कार्यों के निष्पादन के लिए उपकरणों के आगे के आदेश में प्रत्यर्थी द्वारा गलत तरीके से देरी की गई।

संयंत्र की आपूर्ति और उपकरणों के आदेश को पैराग्राफ 15.8.1 में निपटाया गया था (एल.डी.आई. के मामले में, लेकिन किसी भी स्थिति में संदेह से बचने के लिए यदि संयंत्र और उपकरण एल.डी.आई. को दिए गए थे तो कोई सबूत नहीं था कि दावेदार ने आदेश देने में देरी की)।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।

*15.8.8 **बी.एस.पी. द्वारा भुगतान जारी करना***

उठाया गया तर्क यह है कि दावेदार ने कोई भी ऐसी गतिविधि पूरी नहीं की थी जिसके लिए भुगतान किया जा सकता था।

भले ही यह तर्क सही हो, भुगतान में कोई भी देरी प्रत्यर्थी की गलत कार्रवाइयों के कारण हुई थी, जिसमें बीईडी (पीएफडी जनरल लेआउट और एसएलडी) के अनुमोदन में देरी, वैध परिवर्तनों को मंजूरी देने से इनकार करना या खंड 03-04 के तहत तकनीकी विनिर्देशों में वैध रूप से प्रस्तावित ऐसे परिवर्तनों को मंजूरी देने में अत्यधिक देरी शामिल है।

इसलिए, संविदा को समाप्त करने के लिए यह कारण उचित नहीं है।

15.9 अधिकरण द्वारा जी.सी.सी. के खंड 44.2 के अंतर्गत संविदा को समाप्त करने के लिए उपर्युक्त नौ कारणों में से कोई भी कारण नहीं पाया गया है। इसलिए प्रत्यर्थी द्वारा यह प्रदर्शित नहीं किया गया है कि दावेदार ने:

क) *संविदा को त्याग दिया या अस्वीकार कर दिया। इसका कोई सबूत नहीं है, और दस्तावेजी सबूत दावेदार की ओर से मुद्दों को दूर करने और संविदा को पूरा करने की वास्तविक इच्छा को प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए, 19 जून 2008 के उसके पत्र में आक्षेपित मुद्दों का उल्लेख है, और "प्रगति को गति देने का सबसे अच्छा तरीका दोनों पक्षकारगण द्वारा आपसी लाभ के लिए कदम उठाना है" और "हम 3 मुख्य दस्तावेजों के अनुमोदन के बाद उपर्युक्त मदों और अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं को हल करने के लिए बैठक आयोजित करने का सुझाव देते हैं"। उसी दिन एक पत्र, विशेष रूप से विलंबित बीईडी के बारे में, में कहा गया था "उपर्युक्त मदों की स्वीकृति हमें बुनियादी इंजीनियरिंग चरण को जल्दी से पूरा करने और अगले चरणों में आगे बढ़ने और संविदा के निष्पादन को कम करने में मदद करेगी" और "हम उपर्युक्त मदों और अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं को हल करने के लिए बैठक आयोजित करने का सुझाव देते हैं"। इसके अतिरिक्त, 26 फरवरी/मार्च 2008 के कार्यवृत्त पर हस्ताक्षर न करना परित्याग नहीं माना जा सकता। दावेदार द्वारा अपने नियंत्रण से परे देरी के बावजूद संविदा को आगे बढ़ाने की इच्छा के पहले के उदाहरण दावेदार द्वारा 14 अप्रैल 2008 को लिखा गया पत्र है, जिसमें आक्षेपित मुद्दों और उनकी स्थिति को दर्शाया गया है तथा बी.ई.डी. की मंजूरी के लिए प्रयास किए गए हैं तथा वास्तव में यह दावा किया गया है कि प्रत्यर्थी को "परियोजना को निष्पादित करने की कोई इच्छा नहीं थी"। इस बैठक तथा हस्ताक्षर रहित कार्यवृत्त के बारे में बहस के पश्चात, आगे पत्राचार हुआ तथा डिजाइन प्रस्तुत किए गए।*

(ख) *बिना किसी वैध कारण के, सुविधाओं पर काम शुरू करने में विफल रहा है और नियोक्ता से आगे बढ़ने के निर्देश प्राप्त करने के बाद, 28 दिनों से अधिक के लिए संविदा निष्पादन की प्रगति को निलंबित कर दिया है। इस मध्यस्थता में प्रस्तुत साक्ष्य पर इस आधार पर भरोसा करने का कोई आधार नहीं है;*

(ग) *संविदा के अनुसार संविदा को निष्पादित करने में लगातार विफल रहता है या बिना किसी उचित कारण के अपने दायित्वों को पूरा करने में लगातार उपेक्षा करता है। इस मध्यस्थता में प्रस्तुत साक्ष्य पर लगातार उपेक्षा का आरोप लगाने का कोई आधार नहीं है;*

(घ) *खण्ड 18 के अन्तर्गत प्रस्तुत कार्यक्रम में निर्दिष्ट तरीके से सुविधाओं को निष्पादित करने और पूरा करने के लिए पर्याप्त सामग्री, श्रम (पर्याप्त संसाधन) प्रदान करने से इंकार करता है या असमर्थ है, जिससे नियोक्ता को यह उचित*

आश्वासन मिल सके कि ठेकेदार खण्ड 8 के अनुसार पूरा होने के समय तक सुविधाओं को पूरा कर सकता है। इस मध्यस्थता में प्रस्तुत साक्ष्य पर इस आधार का कोई आधार नहीं है।

अभिलेख से यह भी पता चलता है कि सभी मुद्दे, जिन पर प्रत्यर्थी ने संविदा की समाप्ति के कारणों के रूप में भरोसा किया था, बाद में हल कर दिए गए थे, जैसा कि फरवरी/मार्च, 2008 की बैठक के आक्षेपित कार्यवृत्त में दर्ज किया गया है, सिवाय पीपीयू के संबंध में मुद्दे के, जो मुद्दा भी पूर्व में बताए गए कारणों से अस्थिर और वैध नहीं पाया गया है। इसलिए, संविदा को समाप्त करने का निर्णय अनुचित और बहुत कठोर था और किसी भी वैध कारण से समर्थित नहीं था।"

80. समापन को अवैध और गलत मानते हुए, अधिकरण ने अगला मुद्दा निर्धारित किया कि क्या जोखिम खरीद वैध थी और प्रत्यर्थी द्वारा भेजे गए संचार का हवाला देते हुए और उस पर भरोसा करते हुए प्रत्यर्थी के पक्ष में उत्तर दिया, जिसमें संविदा को शीघ्रता से समाप्त करने का उनका इरादा और प्रगति न मिलने पर पीड़ा व्यक्त की गई थी। धारा 37 जीसीसी के तहत जोखिम खरीद में कुछ कार्यों और चूकों को 'लापरवाही' माना जाता है। ***बीएसईएस राजधानी पावर लिमिटेड बनाम श्री एस. एस. गुप्ता, 2011 एससीसी ऑनलाइन डेल 2153*** में इस न्यायालय के निर्णय से लिए गए 'लापरवाही' शब्द के अर्थ के आधार पर, अधिकरण ने तथ्य के तौर पर पाया कि याचिकाकर्ता ने देरी की और गलत तरीके से काम किया और प्रत्यर्थी को अनुच्छेद 37 के संदर्भ में लापरवाह नहीं माना जा सकता और इस प्रकार जोखिम खरीद कार्रवाई भी गलत थी। प्रासंगिक टिप्पणियां इस प्रकार हैं:-

"16.9. दावेदार द्वारा भेजे गए कई संचारों से यह स्पष्ट है कि संविदा के निष्पादन के तुरंत बाद, दावेदार ने बीईडी की तैयारी शुरू कर दी और उन्हें समीक्षा और अनुमोदन के लिए आवश्यक समय सीमा के भीतर प्रत्यर्थी को प्रस्तुत किया। संविदा की शर्तों और उसमें निर्धारित समय-सारिणी को बनाए रखने के लिए, दावेदार ने विभिन्न उपकरणों के डिजाइन को अंतिम रूप देना भी शुरू कर दिया और एलडीआई तथा अन्य उपकरणों के विक्रेताओं के साथ बातचीत भी शुरू कर दी, ताकि वह इसके लिए शीघ्रता से प्लेसमेंट या ऑर्डर दे सके। इसके अलावा, दावेदार

ने संविदा के सुचारू निष्पादन को सुविधाजनक बनाने के लिए दस्तावेजों के डिजाइन और डिजाइनों में परिवर्तन प्रस्तावित करने का प्रयास किया।

16.10. इस अधिनिर्णय में अधिकरण के निष्कर्षों को देखते हुए कि यह प्रत्यर्थी था जिसने परियोजना में देरी की और गलत तरीके से काम किया, यह इस प्रकार है कि उन परिस्थितियों में दावेदार को अनुच्छेद 37 के संदर्भ में "लापरवाह" नहीं माना जा सकता है, और जोखिम खरीद कार्रवाई अमान्य और गलत थी। इसके अतिरिक्त, हालांकि जोखिम खरीद कार्यवाही धारा 37 के तहत जारी की गई थी, लेकिन इसे आगे नहीं बढ़ाया गया और धारा 37 के तहत किसी भी अंतिम कार्रवाई में परिणत नहीं हुआ। यह दावेदार के साथ विवाद में मुद्दों को हल करने का प्रयास करता रहा, लेकिन अंततः धारा 44.2 के तहत संविदा को गलत तरीके से समाप्त कर दिया। इसके अलावा, धारा 37 धारा 44.2 से एक अलग और स्वतंत्र उपाय है।"

81. जहां तक क्षतिपूर्ति के दावों का सवाल है, अधिकरण ने निम्नलिखित पाया:-

"संशोधित एसओसी के पैराग्राफ 3, पृष्ठ 36 में, बीईडी के लिए 494,773 अमेरिकी डॉलर और डीईडी के लिए 994,477 अमेरिकी डॉलर का दावा किया गया है। यह कुल 1,489,250 अमेरिकी डॉलर है।

अधिकरण ने पाया कि दावेदार अधिनिर्णय में बीईडी और डीईडी की तैयारी के लिए 1,489,250 अमेरिकी डॉलर की क्षतिपूर्ति का हकदार है, जिसके व्यय का दस्तावेजीकरण और प्रमाण साथ ही ब्याज भी प्रस्तुत किया गया है (बाद में पैराग्राफ 24 देखें)। हालांकि, 3 दिसंबर 2017 को नई दिल्ली में सुनवाई के दौरान दावेदार द्वारा इस दावे को आगे न बढ़ाने का चुनाव किया गया, बल्कि श्री मायाल की विशेषज्ञ रिपोर्ट में बीईडी और डीईडी की तैयारी में किए गए कार्य के लिए दावा किया गया (पैराग्राफ 21.14 देखें)। इसलिए, दावेदार द्वारा इस दावे को छोड़ दिया गया।"

21. <u>मुद्दा 9: क्या दावेदार लाभ और सद्भावना की हानि तथा बीईडी और डीईडी की तैयारी पर किए गए कार्य के लिए क्षतिपूर्ति पाने का हकदार है</u>

21.1 दावेदार ने प्रस्तुत किया है कि यदि प्रत्यर्थी द्वारा संविदा को गलत तरीके से समाप्त नहीं किया जाता, तो उसे संविदा की शर्तों के अनुरूप राजस्व प्राप्त होता। वह प्रत्यर्थी के कार्यों से होने वाले नुकसान के कारण क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का हकदार है। दावा मध्यस्थता के दौरान विकसित और संशोधित किया गया है। संशोधित समाज में, 11,241,713 अमेरिकी डॉलर की राशि का दावा किया गया था, जिसमें लाभ और सद्भावना की हानि शामिल थी। दावेदार द्वारा सद्भावना की हानि

को समझने का प्रयास नहीं किया गया है। इस मुद्दे पर इसके विशेषज्ञ, एफटीआई कंसल्टिंग के श्री मोंटेक मायाल ने 19 मई 2017 की विस्तृत पहली विशेषज्ञ रिपोर्ट और 17 अगस्त 2017 की प्रत्याख्यान विशेषज्ञ रिपोर्ट में प्रत्यर्थी के गलत कार्यों के परिणामस्वरूप दावेदार द्वारा खोए गए लाभ पर अपनी राय दी, और दावे को इस प्रकार निर्धारित किया:

तालिकाः दावेदार के लुप्त हुए लाभ का श्री मायल का मूल्यांकन (भारतीय रुपए)		
		राशि
जे. एस. सी. सी. को देय राशि	[क]	107,686,739
अतिरिक्त राजस्व	[ख]	1,288,050,795
अतिरिक्त खर्च	[ग]	1,239,502,518
लुप्त लाभ (भारतीय रुपए)	**[क]+[ख]-[ग]**	**156,235,016**
लुप्त लाभ (अमेरिकी डॉलर)		**3,017,241**

स्रोत: श्री मायल की पहली विशेषज्ञ रिपोर्ट, तालिका 5-8

21.2 उन्होंने इस गणना में दावेदार द्वारा विक्रेताओं को किए गए अग्रिम भुगतान (उनकी पहली रिपोर्ट का पैराग्राफ 2.16), या बैंक जमानत को ध्यान में नहीं रखा। उन्होंने बीईडी और डीईडी सहित पूर्ण किए गए कार्य के लिए देय राशि का आकलन किया, और इसकी गणना 2,722,265 अमेरिकी डॉलर (उनकी पहली रिपोर्ट की तालिका 5.1 देखें) के रूप में की, और इसे गलत तरीके से खोए हुए लाभ के दावे के हिस्से के रूप में वर्गीकृत किया।

21.3 खोए हुए लाभ की गणना के लिए, उन्होंने अतिरिक्त राजस्व का आकलन किया जो दावेदार ने अर्जित किया होता यदि प्रत्यर्थी ने संविदा का उल्लंघन नहीं किया होता। अतिरिक्त राजस्व अर्जित करने में दावेदार को जो अतिरिक्त खर्च हुए होते (दावेदार के मूल बजट के संदर्भ में) और यदि प्रत्यर्थी ने संविदा का उल्लंघन नहीं किया होता तो वास्तव में उसे जो खर्च हुए होते। दावेदार से प्राप्त 18 मई 2007 के बजट की सभी सहायक जानकारी के अभाव में, उन्होंने कुछ बेंचमार्क के अनुसार बजट के साथ व्यय मार्जिन की तुलना की, और दावेदार द्वारा पांच अन्य परियोजनाओं पर अर्जित सकल मार्जिन की तुलना की।

21.12 सुनवाई के 9वें दिन, 3 दिसंबर 2017 को अधिवक्ता और अधिकरण के बीच व्यर्थ व्यय और किए गए कार्य तथा लाभ की हानि का दावा करने के मुद्दे पर चर्चा की गई। श्री आडवाणी ने कंचन उद्योग लिमिटेड बनाम यूनाइटेड स्पिरिट्स लिमिटेड, (2017) 8 एससीसी 237 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया, जहां न्यायालय ने पोलक और मुल्ला मामले में टिप्पणी का उल्लेख करने के बाद कहा था। "... दोनों निर्भरता हानि और प्रत्याशा हानि एक साथ बनाए रखने योग्य

नहीं हो सकतीं... दावेदार को दोनों उपायों में से किसी एक को चुनना होगा। ..... पक्षकार खुद को बेहतर स्थिति में रखने के लिए निर्भरता हानि का दावा नहीं कर सकती, यदि संविदा पूरी तरह से निष्पादित किया गया होता; अन्यथा निर्भरता हानि के लिए अधिनिर्णय वादी को अप्रत्याशित लाभ प्रदान करेगा"। हालांकि, श्री आलम ने कहा कि पोलक और मुल्ला मामले सीधे मुद्दे पर थे, क्योंकि ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जहाँ कोई पक्षकार प्रत्यक्ष व्यय (निर्भरता हित) के साथ-साथ लाभ की हानि (अपेक्षा हित) दोनों का दावा कर सकती है। पोलक और मुलिया द्वारा संविदा और विशिष्ट राहत अधिनियम, 14वें संस्करण पृष्ठ 1165-1166 में उन्होंने जिस उद्धरण पर भरोसा किया, वह इस प्रकार है:

> *"हालांकि नियम.' जहाँ तक क्षतिपूर्ति की बात है, तो अपेक्षा और निर्भरता दोनों के हितों की रक्षा करने का प्रयास किया जाता है, निर्दोष पक्षकार सामान्यतः अपेक्षा हानि, अर्थात लाभ की हानि, और निर्भरता हानि, अर्थात वादे पर निर्भरता में किए गए व्यय, दोनों की वसूली नहीं कर सकता; इसमें दोहरी गणना शामिल होगी। उसे दो उपायों में से एक को चुनना होगा।*
>
> *हालांकि, वह संविदा के पूर्ण रूप से निष्पादित होने की तुलना में खुद को बेहतर स्थिति में रखने के लिए निर्भरता हानि का दावा नहीं कर सकता, अन्यथा, निर्भरता हानि के लिए क्षतिपूर्ति का अधिनिर्णय वादी को अप्रत्याशित लाभ प्रदान करेगा, और उल्लंघन की गंभीरता के अनुपात के बजाय प्रदर्शन में दावेदार की अकुशलता के अनुपात में क्षति को बढ़ाएगा, और संभवतः कार्य-कारण के सामान्य सिद्धांतों का उल्लंघन करेगा। इसलिए, ऐसे मामलों में, वादी केवल अपेक्षित लाभ की सीमा तक ही व्यर्थ व्यय या व्यय के कारण हानि की वसूली कर सकता है; और यह साबित करने का दायित्व उल्लंघन करने वाले पक्षकार पर है कि यह दिखाने के लिए कि निर्भरता लागत (या उनका कोई भी भाग) वापस नहीं ली गई होगी, और फिर भी वापस नहीं ली गई होगी। यदि संविदा निष्पादित किया गया होता तो यह राशि बर्बाद हो जाती।*
>
> *हालांकि, पूंजीगत व्यय और लाभ की हानि (आश्रितता हानि और प्रत्याशित हानि की मांग) के लिए मिश्रित दावा उचित मामलों में हो सकता है। उदाहरण के लिए, जहां वादी वास्तव में उल्लंघन से खोए गए शुद्ध लाभ की ही मांग करता है; अर्थात प्रत्याशित सकल प्रतिफल में से प्रदर्शन की लागत, पूंजीगत व्यय और नियोजित पूंजीगत परिसंपत्ति के बचाव मूल्य को घटाकर। सही सिद्धांत यह भी कहा गया है कि यदि वादी विभिन्न प्रकार के दावों को मिलाता*

है तो कोई तार्किक आपत्ति नहीं है, लेकिन वादी उन्हें इस तरह नहीं मिला सकता कि एक ही नुकसान के लिए एक से अधिक बार वसूली हो सके।"

महत्वपूर्ण सिद्धांत यह है कि दोहरी गणना नहीं हो सकती। बाद में, 3 दिसंबर 2017 को, श्री आलम ने सलाह दी कि चुनाव की आवश्यकता केवल तभी होती है जब दोहरी गणना हो। बीईडी और डीईडी की तैयारी में किए गए कार्य के दावे के अनुसार, विक्रेताओं को दिए गए अग्रिम और बैंक की गारंटी के नकदीकरण के दावे को इसमें नहीं गिना गया। हालांकि, जब ट्रिब्यूनल द्वारा दबाव डाला गया, तो उन्होंने रिपोर्ट के पृष्ठ 55 की तालिका 5.1 में दावा किए गए 5% को लेने का चुनाव किया, (और 1,489,250 अमेरिकी डॉलर के लिए दावा छोड़ दिया।)

21.13 भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित यह स्थापित कानून है कि जहां कार्य संविदा में, कार्य सौंपने वाला पक्षकार संविदा का उल्लंघन करता है, वहां ठेकेदार लाभ की हानि के लिए क्षतिपूर्ति का दावा करने का हकदार होगा, जिसे उसने कार्य संविदा करने से अर्जित करने की उम्मीद की थी। ए.टी. ब्रिज पॉल सिंह बनाम गुजरात राज्य (1984) 4एससीसी 59 में न्यायालय ने माना कि कार्य संविदा के शेष हिस्सों के मूल्य का 15% लाभ की हानि के लिए क्षतिपूर्ति के रूप में समझा जा सकता है। इस निर्णय का अनुसरण द्वारकादास बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य (1999) 3एससीसी 500 और एमएसके प्रोजेक्ट्स इंडिया (जेवी) लिमिटेड बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य (2011 (10) एससीसी 573) में किया गया है, जहां न्यायालय ने माना कि संविदा से अपेक्षित लाभ के रूप में क्षतिपूर्ति के लिए दावे को इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि इस बात का कोई सबूत नहीं था कि ठेकेदार को संविदा के उल्लंघन के कारण दावा की गई राशि की सीमा तक वास्तविक नुकसान हुआ है। इसी तरह, मोहम्मद सलामतुल्लाह बनाम आंध्र प्रदेश सरकार (1977) 3एससीसी 590 में न्यायालय ने लाभ की हानि के लिए क्षतिपूर्ति के रूप में मूल्य का 10% देने के निर्णय को बरकरार रखा। लाभ कमाने के उद्देश्य से किए गए निर्माण संविदाओं से जुड़े मामलों में भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा इस सिद्धांत को अपनाया गया है। माननीय बॉम्बे उच्च न्यायालय ने भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अनुपात का अनुसरण करते हुए कहा है कि "सरकारी संविदाओं में, जो ठेकेदार द्वारा लाभ कमाने के लिए किए जाते हैं, यह निहित है कि एक बार उल्लंघन होने पर, लाभ कमाने का उद्देश्य शून्य हो जाता है। एक बार ऐसा मौलिक उल्लंघन होने पर, पक्षकार को लाभ की हानि हुई है, ऐसा माना जाता है।"

21.14 लाभ की हानि के लिए दावेदार के दावे पर इन मामलों के आधार पर, अनुच्छेद 18 में निर्धारित गलत तरीके से समाप्त किए गए संविदा के लिए क्षतिपूर्ति के सिद्धांतों और मध्यस्थता में प्रस्तुत तथ्यों और साक्ष्यों के आधार पर विचार किया

जाना चाहिए। दोनों विशेषज्ञ, श्री मायाल और श्री सिंह उत्कृष्ट और विश्वसनीय विशेषज्ञ थे, और उनके श्रेय के लिए उन्होंने प्रतिपरीक्षा में आवश्यक रियायतें दीं। दोनों विशेषज्ञ इस बात पर सहमत हैं कि लाभ की हानि का आकलन करने का सामान्य दृष्टिकोण दावेदार को उसी आर्थिक स्थिति में लाने के लिए राशि के संदर्भ में क्षति को मापना था, जो कि प्रत्यर्थी द्वारा गलत कृत्यों और चूक के लिए नहीं थी। यह आईसीए की धारा 73 के अनुरूप है, और इस प्रावधान के अनुसार भी नुकसान का पूर्वानुमान लगाया जाना चाहिए और दूर नहीं होना चाहिए। धारा 73 के तहत क्षति का दावा करने वाला पक्षकार, जहां तक संभव हो, नुकसान को कम करने के लिए कर्तव्य के अधीन है।

21.15 श्री मायाल ने लाभ की हानि की गणना करने के लिए अपनी पूरी कोशिश की है, जो उन्हें मिली सभी जानकारी या दावेदार द्वारा प्रदान की गई जानकारी के आधार पर है। जिन दस्तावेजों पर उन्होंने भरोसा किया है, उनके आधार पर:

21.16 18 मई 2007 के संविदा के लिए दावेदार के बजट में 13% का लाभ मार्जिन दिखाया गया। उन्होंने 3.8% (भारतीय रुपए) और 1% (अमेरिकी डॉलर) का लाभ मार्जिन निर्धारित किया। श्री सिंह ने दावेदार के वित्तीय विवरणों से दर्शाया कि 2007 और 2008 के लिए PBT क्रमशः 8.60% और 3.84% था। यह सच है कि श्री मायाल बजट में सभी लाइन आइटमों को सत्यापित करने में सक्षम नहीं थे, लेकिन दावेदार ने स्पष्ट रूप से लाभ की आशा की थी। जबकि यह सबसे कम बोली लगाने वाला था, यह प्रदर्शित नहीं किया गया है कि उसे नुकसान होने की उम्मीद थी, जैसा कि बजट में कहा गया है। इसके अलावा, श्री सिंह ने प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया कि लाभप्रदता निर्धारित करने के लिए पीबीटी उपयुक्त संदर्भ बिंदु था और सबसे कम बोली लगाने वाले के लिए लाभ कमाना संभव था (और यह तथ्य कि संविदा दीर्घकालिक था, ठेकेदार को लाभ की हानि के दावे से वंचित नहीं करता है)। साथ ही, हम श्री मायाल से सहमत हैं कि लाभ की हानि के दावे में ब्याज को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए क्योंकि दावेदार ने परियोजना के लिए विशेष रूप से कोई अतिरिक्त ऋण नहीं लिया था, और अधिकांश ब्याज 2009 के वित्त विवरण में आया था।

21.17 दावेदार के बीईडी और डीईडी ("व्यर्थ लागत") के दावे, श्री मायाल की रिपोर्ट में 100% बीईडी और 50% डीईडी को पूरा करने के लिए 5% माइलस्टोन *के दावे (गलत तरीके से "खोए हुए लाभ" के रूप में वर्णित) और खोए हुए लाभ के दावे के बीच जटिलताएं और भ्रम थे। 3 दिसंबर 2017 को सुनवाई के 9वें दिन इसे स्पष्ट किया गया। संक्षेप में, दावेदार के व्यर्थ लागत दावे और 5%* माइलस्टोन *के बीच दोहरी गणना थी, लेकिन भारत के कानून और <u>पोलक और मुल्ला</u> के अनुसार,*

दावेदार "अपेक्षा और निर्भरता हित" दोनों का दावा नहीं कर सकता। "अपेक्षित हानि" का अर्थ है लाभ की हानि और "निर्भरता हानि" का अर्थ है किए गए कार्य के लिए। हालांकि, यदि दोहरी गणना न हो तो मिश्रित दावा सफल हो सकता है। 9वें दिन, श्री आलम ने दावेदार की ओर से 100% बी.ई.डी. और 50% डी.ई.डी. के अपने 5% माइलस्टोन *दावा करने का चुनाव किया, न कि 1,489,250 अमेरिकी डॉलर के लिए व्यर्थ लागत का दावा किया। वास्तव में, उन्होंने दावेदार की ओर से इस व्यर्थ लागत के दावे को माफ कर दिया।*

21.18 अब संभावित दोहरी गणना के प्रश्न पर आते हैं। अपनी पहली रिपोर्ट के परिशिष्ट 5.1.3 में, श्री मायाल ने दावेदार को देय राशियों की गणना का आधार निर्धारित किया।

तालिका 5-1-3:जे. एस. सी. सी. को देय राशि

मद	**राशि(अमेरिकी डॉलर)**	**राशि(भारतीय रुपए)**	**टिप्पणी/स्रोत**
प्रशिक्षण शुल्क को छोड़कर संविदा मूल्य (क)	26,821,000	157,625,700	संविदा समझौता का परिशिष्ट 1।
पीएफडी, जीएल और एसएलडी के प्रस्तुतीकरण और अनुमोदन पर देय संविदा मूल्य का 5% [ख] = [क] x 5%	1,341,050	7,881,335	संविदा समझौते के परिशिष्ट 3 का खंड 2.1। पीएफडी, जीएल और एसएलडी जेएससीसी द्वारा दिसंबर 2007 में प्रस्तुत किए गए थे। उस आधार पर, मैं मानता हूं कि भुगतान दिसंबर 2007 के अंत में किया गया होगा।
बी.ई.डी. (ग) के लिए मूल्य	494,803[(2)]	1,090,000	संविदा समझौते के परिशिष्ट । में तालिका 1 और 2.
बी.ई.डी. मूल्य का 75% देय आनुपातिक [घ] = [ग] x 75%	371,102	817,500	संविदा समझौते के परिशिष्ट 3 का खंड 2.3.1.1। पीईआरटी नेटवर्क ने बीईडी की शुरुआत और समाप्ति तिथियों की पुष्टि क्रमशः 6 अगस्त 2007 और 31 दिसंबर 2007 के रूप में की है।

			तदनुसार, मैं मानता हूं कि प्रासंगिक राशि अगस्त से दिसंबर 2007 की अवधि में आनुपातिक रूप से देय है।
डी. ई. डी. (ड़) हेतु कीमत	1,859,197[2]	9,810,000	संविदा समझौता के परिशिष्ट 1 में तालिका 1 और 2।
डीईडी मूल्य के 75% का 50% देय आनुपातिक [च] = [ड़] x 75% x 50%	698,199	3,678,750	परिशिष्ट 3 का खंड 2.3.1.1. पीईआरटी नेटवर्क डीईडी की शुरुआत और समापन तिथियों को क्रमशः 20 नवंबर 2007 और 30 मई 2008 के रूप में पुष्टि करता है। तदनुसार, मैं मानता हूं कि प्रासंगिक राशि नवंबर 2007 से मई 2008 की अवधि में आनुपातिक रूप से देय है।
कुल देय राशि [ख] + [घ] + च]	**2,409,351**	**12,377,585**	

स्रोत: प्रदर्श: एफ.टी. 1-2, पृष्ठ. 69 से 93 तक; और प्रदर्श एफ.टी. 1-15।
टिप्पणियाँ:[1] इन राशियों में सभी कर और शुल्क शामिल नहीं हैं।
[2] "डिजाइन और दस्तावेजों की आपूर्ति" (1,18,000 अमेरिकी डॉलर) की कीमत है बी. ई. डी. और डी. ई. डी. के बीच उनके संबंधित कुल के अनुपात में विभाजन संविदा के तहत सहमत कीमतें।

फिर उन्होंने अपनी पहली रिपोर्ट के परिशिष्ट 5.1.3 में गणना की कि "अतिरिक्त राजस्व" (तालिका 5.8 में आंकड़ा (8)) 26,912,000 अमेरिकी डॉलर का संविदा मूल्य है, जिसमें से दावेदार को देय राशि 2,409,381 अमेरिकी डॉलर घटा दी गई है, यानी कुल शुद्ध राशि 24,502,647 अमेरिकी डॉलर है। इसमें से उन्होंने अपनी रिपोर्ट के परिशिष्ट 5-3 में बताए गए अतिरिक्त व्यय (तालिका 5-8 का आंकड़ा (ग)) घटा दिए हैं। उन्होंने बीईडी के 100% और डीईडी के 50% भुगतान को छोड़ दिया है। अपनी पहली रिपोर्ट की तालिका 5.3 भी देखें। कुल व्यय 23,797.81 अमेरिकी डॉलर है।

निष्कर्षत:, दावेदार को देय राशि 2,409,381 अमेरिकी डॉलर, साथ ही 24,502,649 अमेरिकी डॉलर का अतिरिक्त राजस्व यानी कुल संविदा राशि 26,912,000 अमेरिकी डॉलर है। इसलिए, यदि 23,791,811 अमेरिकी डॉलर के व्यय को घटा दिया जाए तो 3,114,189 अमेरिकी डॉलर का लाभ होगा। इसका अर्थ है कि

तालिका 5.8 में 3,107,000 अमेरिकी डॉलर का आंकड़ा गलत है। यह संशोधित आंकड़ा लगभग 1.7% लाभ मार्जिन के बराबर है।

श्री मायाल के आकलन के आधार पर कोई दोहरी गणना नहीं है।

22. <u>बी.ई.डी. और डी.ई.डी. की तैयारी में किए गए कार्य और लाभ की हानि पर अधिकरण का निष्कर्ष</u>

22.1 <u>बी.ई.डी. और डी.ई.डी. की तैयारी में किए गए कार्य</u>

प्रस्तुत किए गए साक्ष्य में कोई संदेह नहीं है कि दावेदार ने 100% बी.ई.डी. और 50% डी.ई.डी. की तैयारी पूरी कर ली है।

इसलिए, जैसा कि संविदा में प्रावधान है, वह 2,722,265 अमेरिकी डॉलर का हकदार है, जिसे अधिकरण ने निर्धारित किया है।

22.2 <u>लाभ की हानि</u>

अधिकरण ने पाया कि दावेदार उपरोक्त अधिकारियों और भारतीय कानून के आधार पर लाभ की हानि का हकदार है। लाभ की उचित हानि क्या है? आम तौर पर, 2007 और 2008 में, दावेदार अपनी वैश्विक परियोजनाओं में 6.22% का पीबीटी प्राप्त कर रहा था (श्री सिंह की रिपोर्ट की तालिका 3 देखें)। तदनुसार, श्री मायाल ने अपनी पहली रिपोर्ट के पैराग्राफ 3.18 में, 2005 से 2008 तक दावेदार के व्यवसाय के एएसयू खंड के लिए, परिचालन मार्जिन 11% था। हालाँकि, उनकी रिपोर्ट की तालिका 5.7 को देखने पर, इस संविदा के लिए अतिरिक्त राजस्व (भारतीय रुपए) के प्रतिशत के रूप में 3.8% का अतिरिक्त व्यय आता है।

श्री मायाल की रिपोर्ट पर ओवरहेड्स के लिए असंगत विरोधी मार्जिन के बावजूद, अधिकरण ने पाया कि दावेदार 3.8% के लाभ मार्जिन का हकदार है (क्योंकि यह दावेदार के वैश्विक व्यवसाय में नहीं बल्कि इस संविदा पर आधारित है)। लाभ की हानि की गणना के लिए, बीईडी और डीईडी के लिए दी गई राशि 2,722,265 अमेरिकी डॉलर (ऊपर पैराग्राफ 22.1 देखें) को 26,912,000 अमेरिकी डॉलर के कुल संविदा मूल्य से घटाया जाना है क्योंकि माइलस्टोन भुगतान में पहले से ही लाभ मार्जिन शामिल है। इसलिए, लाभ की हानि की गणना 24,189,735 अमेरिकी डॉलर की राशि पर की जाती है, यानी कुल संविदा मूल्य में से 5% माइलस्टोन भुगतान घटाया जाता है। इसका मतलब है कि 24,189,735 अमेरिकी डॉलर x 3.8% = 919,209.93 अमेरिकी डॉलर; और यह राशि लाभ की हानि के लिए दी जाती है।

इसलिए, अधिकरण ने पाया कि दावेदार संविदा की गलत समाप्ति के लिए मुआवजे के हिस्से के रूप में लाभ की हानि का हकदार है।"

82. बेशक, प्रत्यर्थी ने बीईडी और डीईडी तैयार करने में किए गए खर्चों के लिए क्षतिपूर्ति के रूप में 1,489,250 अमेरिकी डॉलर और 18% ब्याज का दावा किया था। लाभ की हानि के दावों का आकलन करते समय, अधिकरण ने पोलक और मुल्ला द्वारा संविदा और विशिष्ट राहत अधिनियम, 14वें संस्करण के अनुच्छेदों पर ध्यान दिया, जिसमें कहा गया है कि पूंजीगत व्यय और लाभ की हानि (आश्रित हानि और अपेक्षित हानि की मांग) के लिए मिश्रित दावा एक उपयुक्त मामले में हो सकता है, उदाहरण के लिए, जहां वादी केवल उल्लंघन अर्थात प्रत्याशित सकल रिटर्न, प्रदर्शन की लागत, पूंजीगत व्यय और नियोजित पूंजीगत संपत्ति के बचाव मूल्य में से कटौती करके, से लुप्त हुए शुद्ध लाभ की मांग करता है। सिद्धांत यह है कि यदि वादी विभिन्न दावों को मिलाता है तो कोई तार्किक आपत्ति नहीं है और एकमात्र चेतावनी यह है कि वादी उन्हें इस तरह नहीं मिला सकता कि एक ही नुकसान के लिए एक से अधिक बार वसूली हो सके। इस अनुच्छेद पर भरोसा करते हुए, अधिकरण ने सबसे पहले इस सिद्धांत को स्पष्ट किया कि 'दोहरी गणना नहीं हो सकती'। ऐसा देखते हुए, अधिकरण ने नोट किया कि प्रत्यर्थी ने 1,489,250 अमेरिकी डॉलर का दावा छोड़ दिया था और पहला माइलस्टोन हासिल करने पर देय 5% का दावा करने का विकल्प चुना था। इसके बाद, अधिकरण ने दोनों पक्षकारगण की विशेषज्ञ रिपोर्टों के आधार पर लाभ की हानि पर विस्तृत चर्चा और गणना की, जिसमें याचिकाकर्ता की विशेषज्ञ सुश्री सिंह द्वारा दी गई रियायत भी शामिल थी कि इस परियोजना के लिए प्रत्यर्थी द्वारा बनाए गए डिजाइन विशेष रूप से परियोजना के लिए थे और गोपनीय थे और परियोजना में उपयोग के लिए प्रतिबंधित थे और इस आधार पर निष्कर्ष निकाला कि नुकसान का शमन संभव नहीं था। यह देखते हुए कि प्रत्यर्थी ने बी.ई.डी. और डी.ई.डी. पर किए गए कार्य पर क्षतिपूर्ति के लिए दावा छोड़ दिया था और पहले मील के पत्थर को प्राप्त करने पर 5%

भुगतान का विकल्प चुना था, अधिकरण ने लाभ की हानि के संबंध में श्री मायाल की रिपोर्ट में दावों के आकलन की जांच की। विस्तृत गणनाओं में जाने पर, अधिकरण ने पाया कि प्रत्यर्थी ने अपनी रिपोर्ट में संविदा मूल्य को ध्यान में रखते हुए और 2,409,381 अमेरिकी डॉलर की राशि को घटाकर अतिरिक्त राजस्व का आकलन किया था, यानी कुल शुद्ध राशि 24,502,647 अमेरिकी डॉलर थी। इसमें से, श्री मायाल की रिपोर्ट के परिशिष्ट 5-3 में निर्धारित अतिरिक्त व्यय घटा दिए गए और फिर बी.ई.डी. के 100% और डी.ई.डी. के 50% भुगतान को बाहर कर दिया गया। अंत में, अधिकरण ने निष्कर्ष निकाला कि उपरिव्यय हेतु परस्पर विरोधी मार्जिन के बावजूद, प्रत्यर्थी इस संविदा के आधार पर 3.8% के लाभ मार्जिन का हकदार था, न कि उसके वैश्विक व्यवसाय के आधार पर और 26,912,000 अमेरिकी डॉलर के संविदा मूल्य से 2,722,265 अमेरिकी डॉलर की राशि घटाने के बाद, क्योंकि माइलस्टोन भुगतान में लाभ मार्जिन शामिल था, अन्य दावों के साथ-साथ लाभ की हानि का भी अधिनिर्णय दिया गया। स्पष्ट रूप से कोई दोहरी गणना नहीं थी। शीर्षकों 'विक्रेताओं को अग्रिम भुगतान और बीईडी और डीईडी की तैयारी' के तहत किए गए वास्तविक व्यय को दावों के समर्थन में प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर अधिनिर्णय दिया गया है और यह सही है, क्योंकि यह निष्कर्ष निकाला गया है कि समाप्ति गलत थी।

83. आक्षेपित अधिनिर्णय को ध्यान से पढ़ने पर, मैं याचिकाकर्ता से सहमत नहीं हूँ कि अधिकरण ने पक्षकारगण के बीच संविदा को फिर से लिखा है, एकतरफा दायित्वों को थोपा है, जिससे अधिनिर्णय कमजोर हो गया है। अधिकरण ने संविदात्मक प्रावधानों के चारों कोनों के भीतर निर्णय लिया है और भले ही दो व्याख्याएँ संभव हों, यह न्यायालय हस्तक्षेप नहीं कर सकता, यह देखते हुए कि पेटेंट अवैधता का आधार अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता में पारित मध्यस्थ अधिनिर्णय पर हमला करने के लिए उपलब्ध नहीं है और अन्यथा भी संविदा की व्याख्या अधिकरण का क्षेत्राधिकार है, जब तक कि दृष्टिकोण पूरी तरह से विकृत न हो।

84. मेरे विचार में, अधिनिर्णय स्पष्ट रूप से तर्कसंगत है और भारत की सार्वजनिक नीति के अनुरूप है और किसी भी पैरामीटर के अंतर्गत नहीं आता है जिसके आधार पर अंतर्राष्ट्रीय वाणिज्यिक मध्यस्थता अधिनिर्णय का विरोध किया जा सकता है और/या उसे रद्द किया जा सकता है। उपर्युक्त सभी कारणों से, यह न्यायालय इस विचार पर है कि आक्षेपित अधिनिर्णय में कोई हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

85. तदनुसार याचिका लंबित आवेदनों सहित खारिज की जाती है।

न्या. ज्योति सिंह

अप्रैल 30 , 2024/के.के.एस./के.ए./शिवम

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*